बाल संस्कार शाला

(मार्गदर्शिका)



बाल संस्कारशाला मार्गदर्शिका



सम्पादक

ब्रह्मवर्चस



प्रकाशक

श्री वेदमाता गायत्री ट्रस्ट (TMD)

गायत्री नगर, श्रीरामपुरम्-शांतिकुंज, हरिद्वार

(उत्तराखण्ड) पिन-249411



पुनरावृत्ति सन् 2015 मूल्य- 56/-

अखण्ड ज्योति, सितम्बर २००५ के पृष्ठ ५६ का अंश

"देश में सब कुछ है, बस व्यक्ति नहीं। कहने को तो लोग बहुत हैं, जनसंख्या भी दिनों-दिन बढ़ रही है, पर खरे-परखे उच्चस्तरीय व्यक्ति नहीं हैं। आज के हिन्दुस्तान में न तो गांधी है, न सुभाष, न लोकमान्य तिलक है और न स्वामी विवेकानंद। पर हम गढ़ेंगे और यह सब हम इस शरीर को छोड़ने के बाद करेंगे।

फिर बोले-चिन्ता की बात नहीं, तुम लोगों से करायेंगे। तुम्हें कुछ नहीं करना है। मैं तुम लोगों के पास नई पीढ़ी के बच्चे लाऊँगा। तुम उनके पास बैठना, उनसे अच्छी-अच्छी बातें करना, उन्हें साधनाएँ कराना, बाकी पीछे मैं सब कर दूँगा। स्थूल क्रियाकलापों को उत्कृष्ट बनाने की जिम्मेदारी तुम्हारी और सूक्ष्म में परिवर्तन, प्रत्यावर्तन करने की जिम्मेदारी हमारी।"

-परम पूज्य गुरुदेव

बाल संस्कारशाला का उद्देश्य

बा- बालकों में दिव्य गुणों का विकास करना।

ल- लक्ष्य भेदी बनाना।

सं- संस्कृति का ज्ञान करा कर उसका रक्षक बनाना।

स्- स्वाध्यायी, स्वावलम्बी, स्वयंसेवी बनाना।

का- कार्य कौशल बढ़ाना।

र- रचनात्मक शैली द्वारा मानवीय गुणों को उभारना।

शा- शालीन-शिष्ट व्यक्तित्व गढ़ना।

ला- लाख मनकों में चमकदार हीरा बनाना।

शुभकामना संदेश

आत्मीय परिजनो!

राष्ट्र में आज महामानवों की बड़ी आवश्यकता है। राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति का चक्र चलाने के लिए प्रखर-तेजस्वी व्यक्तित्वों की बड़ी जरूरत है। समय की माँग बहुत बड़ी है, जिसकी पूर्ति तभी हो सकेगी, जब बाल्यावस्था से ही भावी पीढ़ी के नौनिहालों का सर्वांगीण निर्माण किया जा सके।

देश भर में सक्रिय-प्राणवान् परिजन किसी भी सामुदायिक केन्द्र, मन्दिर, हॉल या अपने घर में ही बाल संस्कार शालाओं को चलाने की छोटी सी जिम्मेदारी निबाहने लगें, तो भावी पीढ़ी का वाञ्छित नव-निर्माण हो सकेगा। इसके लिये थोड़ा समय अलग निकालना होगा। बालकों को नियमित रूप से यदि वैचारिक पोषण, भावनात्मक पोषण मिलता रह सके, तो युग की माँग पूरी हो सकेगी। परम पूज्य गुरुदेव-वन्दनीया माताजी के विराट् स्वप्नों की नींव भी यही 'नयी पीढ़ी के सुकोमल बच्चे' हैं। इनके व्यक्तित्व के निर्माण में लगना गुरुसत्ता की सर्वश्रेष्ठ सेवा होगी। उनके अगणित अनुदान एवं प्रसन्नता हर पल पाते रहने के सच्चे श्रेयाधिकारी बनने का अनुपम सौभाग्य आपको मिल सकेगा।

प्रस्तुत पुस्तक इस दिशा में अत्यन्त सहायक सिद्ध होगी। हर मुहल्ले में, हर गाँव में कोई-न-कोई परिजन आगे आकर प्राणवान् अग्रदूत की भूमिका निबाहें। इस कार्य में हमारी बहिनें अति महत्त्वपूर्ण भूमिका निभा सकती हैं। मातृशक्ति में सुकोमल बच्चों के नव-निर्माण की अतीव क्षमता विद्यमान है। बस आवश्यकता है, तो सिर्फ उनके उभरकर आगे आने की। बच्चों का निर्माण करना एक श्रेष्ठतम यज्ञ है। साधनों की कहीं कोई कमी न पड़ेगी, केवल संकल्पपूर्वक आगे आयें। इस अत्यन्त विशिष्ट दायित्व को साप्ताहिक कक्षा के रूप में किसी भी स्थान से प्रारम्भ करायें। अनुपम आत्म संतोष, दैवी अनुग्रह और लोक सम्मान के त्रिविध लाभ आप पाते रहेंगे।

आप सबको सम्पूर्ण अन्तःकरण से हमारी शुभकामनाएँ एवं गुरुसत्ता के भाव भरे आशीष।

आपका भाई

(प्रणव पण्ड्या)

आपकी बहिन

(शैलबाला पण्ड्या)

प्रस्तावना

भौतिक विकास के इस दौर में उभरने वाली विसंगतियों का अध्ययन करने पर एक बात विश्व के हर क्षेत्र के शिक्षाविदों ने स्वीकार की है कि बालकों को विभिन्न विषयों की शिक्षा के साथ-साथ सुसंस्कारिता देने के भी गंभीर प्रयास किये जाने चाहिए। विसंगतियों से बचने के साथ जब इस तथ्य पर विचार किया जाता है कि 'कैसे हों नये - श्रेष्ठ समाज के नागरिक ?' तो बालकों में सुसंस्कारिता के जागरण संवर्धन का महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाता है।

बच्चों में सुसंस्कारिता जागृत करने के लिए क्या किया जाय ? प्रारंभ कैसे हो ? यह प्रश्न उठने पर अधिकांश लोग शिक्षा नीति और शिक्षणतंत्र को कोसकर अपनी बात समाप्त कर देते हैं। इससे बात कैसे बनेगी ? कहीं-न-कहीं, किसी-न-किसी को कुछ व्यावहारिक पहल तो करनी ही पड़ेगी। इसके लिए सबसे सुलभ, प्रभावी और व्यावहारिक है, जगह-जगह बाल संस्कारशालाओं का संचालन।

युग निर्माण अभियान के प्रणेता पू. गुरुदेव (पं.श्रीराम शर्मा आचार्य) ने बाल संस्कारशालाओं के संचालन को बहुत महत्त्व दिया है। उन्होंने नारा दिया है 'अध्यापक हैं युगनिर्माता, छात्र राष्ट्र के भाग्य विधाता।' यह नारा सुसंस्कारिता धारण करने, कराने वाले अध्यापकों एवं छात्रों के लिए ही लागू होता है, विषय रटने-रटाने वालों के लिए नहीं। इस संदर्भ में उन्होंनें कई पुस्तिकाएँ भी लिखी, प्रकाशित की हैं, जैसे 'छात्रों का निर्माण अध्यापक करें', 'बालकों का पालन ही नहीं, निर्माण भी करें', 'कैसे चलाएँ बाल संस्कार शाला' आदि।

युग निर्माण आन्दोलन से जुड़े परिजनों से उनकी अपील रही है कि वे जगह-जगह स्कूल खोलने के स्थान पर बाल संस्कार शालाएँ चलाने को प्राथमिकता दें। स्कूल तो विभिन्न सरकारी और स्वयंसेवी संगठन खोल ही रहे हैं। स्कूल खोलने पर ८० से ९० प्रतिशत साधन और शक्ति विषय पढ़ाने में ही लग जाती है। वह तो लोग कर ही रहे हैं। हम अपनी अधिकांश शक्ति बच्चों में सुसंस्कारिता संवर्धन के लिए ही लगाएँ तो समाज के हित साधन और अपने लिए पुण्यार्जन की दिशा में बड़ी सफलता पा सकेंगे। उनका कथन है, "हजारों लाखों को आदर्शों का उपदेश देने से अधिक फलदायी है, थोड़े से चरित्रवान व्यक्ति तैयार कर देना"। इसे वे चन्दन के वृक्ष लगाने, समाज को जीवन-संजीवनी देने जैसा पुण्य मानते रहे हैं।

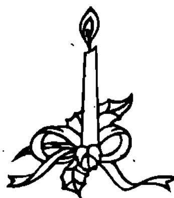
नैष्ठिक परिजन इस दिशा में काफी कुछ प्रयास भी कर रहे हैं। "बाल संस्कारशाला मार्गदर्शिका" पुस्तिका उन्हीं के सहयोगार्थ तैयार की गई है। पुस्तिका को सभी दृष्टियों से संतुलित और सुगम बनाने का प्रयास किया गया है। वैसे अभी इस दिशा में बहुत कुछ किया जाना है। विभिन्न आयु, वर्ग एवं विभिन्न क्षेत्रीय परिस्थितियों, विभिन्न धर्म-सम्प्रदायों में आस्था रखने वालों को दृष्टि में रखते हुए कई वर्गीकृत प्रयोग भी करने होंगे, किन्तु शुभारंभ के लिए यह बहुत उपयोगी है।

पुस्तिका में विभिन्न धर्म-सम्प्रदायों में श्रद्धा रखने वाले छात्र-छात्राओं का विशेष ध्यान रखते हुए प्रार्थना आदि में तथा प्रेरक प्रसंगों आदि में किन बातों पर ध्यान दिया जाय, आदि टिप्पणियाँ देने का प्रयास किया गया है। जैसे- प्रार्थना के बाद अपने इष्ट का ध्यान, उनसे ही सद्बुद्धि माँगने के लिए गायत्री जप, अन्य मंत्र या नाम जप करें। विभिन्न सम्प्रदायों के श्रेष्ठ पुरुषों के प्रसंग चुने जाएँ। बच्चों से भी उनके जीवन एवं आदर्शों के बारे में पूछा जा सकता है, उन पर विधेयात्मक समीक्षा करें, आदि।

विभिन्न स्कूलों में जाने वाले बच्चों को गणित, विज्ञान, अंग्रेजी जैसे विषयों में कोचिंग देने, होमवर्क में सहयोग करने, योग-व्यायाम सिखाने जैसे आकर्षणों के माध्यम से एकत्रित किया जा सकता है। सप्ताह में एक बार इस पुस्तिका के आधार पर कक्षा चलाई जा सकती है। प्रति दिन के क्रम में प्रारंभ में प्रार्थना, अंत में शांतिपाठ जैसे संक्षिप्त प्रसंग जोड़े जा सकते हैं।

पढ़ी-लिखी बहिनें, सृजन कुशल भाई, रिटायर्ड परिजन इस पुण्य प्रयोजन में लग जाएँ तो प्रत्येक मोहल्ले में 'बाल संस्कार शालाओं' का क्रम चल सकता है। विद्यालय के 'संस्कृति मंडलों' में भी यह प्रयोग बखूबी किया जा सकता है। हमें विश्वास है कि भावनाशील परिजन लोक मंगल, आत्मनिर्माण एवं राष्ट्र निर्माण का पथ प्रशस्त करने वाले इस पुण्य कार्य में तत्परता पूर्वक जुट पड़ेंगे।

- ब्रह्मवर्चस



विषय सूची

बाल संस्कार शाला के आचार्य हेतु निर्देश

१. स्वयं निर्धारित गणवेश में रहें। व्यक्तित्व सरल, सौम्य, शालीन एवं आकर्षक हो।
२. जो बच्चों को सिखाना है, उसका स्वयं भी अभ्यास करें।
३. प्रतिदिन स्वाध्याय अवश्य करें। प्रशिक्षण विषय की पूर्व तैयारी अवश्य करें।
४. बच्चों को सिखाने, संस्कारित करने हेतु स्वयं का चरित्र सबसे प्रभावी माध्यम है।
५. पाठ्यक्रम बच्चों को मानसिक बोझ न लगे, इस हेतु उसकी रोचक-प्रेरणाप्रद प्रस्तुति करें तथा सहयोगी बनें, शासक नहीं।
६. पाठ्य वस्तु ऐसी हो, जिससे बालक का शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक (नैतिक, सांस्कृतिक एवं संवेदनात्मक) विकास हो।
७. सप्ताह में एक निश्चित दिन व समय पर कक्षा लें।
८. कक्षा प्रारंभ होने से दस मिनट पूर्व अनिवार्य रूप से उपस्थित रहें।
९. बालक-बालिकाओं को अलग-अलग पंक्तियों में बैठायें एवं उपस्थिति लें।
१०. प्रस्तुत पाठ्यक्रम ६ से १३ वर्ष के बच्चों के लिए है।
११. माह में एक बार बच्चों के माता-पिता से संपर्क करें या अभिभावकों की गोष्ठी का आयोजन कर बच्चों के विकास एवं घर के वातावरण को परिष्कृत बनाने हेतु चर्चा करें।
१२. संस्कारशाला के बालक-बालिकाओं पर अपनी दृष्टि रखें (Under Observation) जो मूल्यांकन में सहयोगी होगी।
१३. मूल्यांकन का आधार केवल बौद्धिक न होकर भावनात्मक एवं चारित्रिक विकास और आचरण की सभ्यता हो।
१४. केवल लिखित परीक्षा ही आवश्यक नहीं, अपितु आचार्य, माता-पिता, पास-पड़ोस, समाज एवं सहपाठियों का अभिमत तथा अवलोकन आदि भी मूल्यांकन का आधार रहे।
१५. सप्ताह में पड़ने वाले जन्म दिन(बच्चों के), महापुरुषों की जयन्ती एवं त्यौहारों का संक्षिप्त आयोजन अवश्य करें।
१६. उपस्थिति पंजिका में बालकों के जन्मदिन भी अवश्य अंकित करें।
१७. शैक्षणिक परिभ्रमण वर्ष में एक या दो बार।
१८. बालकों को अपनी आध्यात्मिक डायरी लिखने हेतु प्रेरित करें।
१९. बालकों में जिज्ञासा जगाने हेतु परिस्थिति निर्माण कर प्रश्न पूछें एवं समाधान करें।

२०. कक्षा में विषयों की समयावधि सांकेतिक है, इसे विवेकानुसार एवं आवश्यकतानुसार घटाया-बढ़ाया जा सकता है।

२१. वार्षिक सत्र पूरा होने पर निम्न लिखित विषयानुसार परीक्षा एवं मूल्यांकन की व्यवस्था बनाएँ।

क्र.	विषय	अंक
१.	संस्कार	४०
२.	स्वास्थ्य	१५
३.	शिक्षा (ज्ञान)	१५
४.	खेलकूद	१५
५.	सेवा भाव	१५
	कुल अंक	१००

अपने '**विचारों**' पर पैनी दृष्टि रखें, क्योंकि ये एक दिन '**शब्द रूप**' में मुखरित होंगे।
अपने '**शब्दों**' पर इससे भी पैनी दृष्टि रखें, क्योंकि ये ही एक दिन '**कर्म रूप**' में प्रस्फुटित होंगे।
अपने '**कर्मों**' पर उससे भी पैनी दृष्टि रखें, क्योंकि ये ही '**आदतों**' में परिणत होते हैं।
अपनी '**आदतों**' पर और भी पैनी दृष्टि रखें, क्योंकि आदतें ही चित्त में '**संस्कारों**' के रूप में जड़ जमा कर बैठ जायेंगी।
इन्हीं संस्कारों से चरित्र का निर्माण होकर रहेगा।

-परम पूज्य गुरुदेव

२. कक्षा क्रम

१.	प्रार्थना (यदि अन्य धर्म-सम्प्रदाय के बच्चे हैं, तो सर्वधर्म प्रार्थना)	५ मिनट
२.	बाल प्रबोधन-	
	अ. प्रेरणाप्रद कहानियाँ	१०मिनट
	ब. प्रेरक प्रसंग	१० मिनट
	स. सुविचार/सद्वाक्य	३ मिनट
३.	प्रज्ञागीत	१० मिनट
४.	जीवन विद्या	२० मिनट
५.	जप/ध्यान	५ मिनट
६.	शुभकामना, शान्तिपाठ	२ मिनट
८.	सत्संकल्प/जयघोष	५ मिनट
९.	खेल आदि की पूर्व तैयारी	५ मिनट
९.	खेल, योग, जन्मदिन, जयंती, पर्व आयोजन, शिष्टाचार आदि	४५ मिनट

संक्षेप में कक्षा क्रम इस प्रकार है-

कक्षा अवधि	१ घंटा १५ मिनट
कक्षा उपरान्त बाल योग, खेलकूद या प्रतियोगिता	४५ मिनट
कुल अवधि	**१२० मिनट**

सा विद्या या विमुक्तये

विद्या वह है, जो मनुष्य को पूर्णता प्राप्त कराकर उसे जीवन के बन्धनों से मुक्ति दिलाती हो।

३. संचालन हेतु आवश्यक सामग्री एवं व्यवस्था

१. बाल संस्कारशाला का मुख्य उद्देश्य बालकों में संस्कारों का बीजारोपण करना है, एवं उन्हें निज के व्यक्तित्व विकास हेतु जागरूक एवं जिम्मेदार बनाना है। यह ट्यूशन क्लास जैसा नहीं है। इसे प्रत्येक रविवार एवं छुट्टियों में चलाएँ। इस प्रकार यह रविवासरीय या छुट्टियों में चलने वाला विद्यालय है।

२. संस्कारशाला संचालन हेतु अतिरिक्त भवन अथवा स्थान की आवश्यकता नहीं है। अपने घर, बगीचे, मंदिर आदि में ही इसे चला सकते हैं।

३. आस-पास के ५-२५ बच्चों को लेकर संस्कारशाला प्रारंभ की जा सकती है। संख्या अधिक होने पर दो कक्षाएँ भी चलाई जा सकती हैं।

४. आवश्यक सामग्री :

(१) भारत माता का चित्र, गायत्री माता का चित्र,
मशाल का चित्र, पंचदेव चित्र ।

(२) बैठने हेतु दरी

(३) पीने के लिए पानी

(४) रोलर ब्लैक बोर्ड, चौक- डस्टर

(५) पर्व पूजन, संस्कार हेतु पूजन सामग्री एवं पूजा की थाली

४. बालकों के जीवन में मानवीय मूल्यों का विकास करते हुए उनकी शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक प्रगति हेतु बालक के लिए व्यवस्थित जीवनचर्या का क्रम इस पुस्तक में दिया गया है। विभिन्न विषयों पर बालक, माता-पिता एवं आचार्य हेतु सुझाव दिये गये हैं। संस्कारशाला में आचार्य, बालकों को अभ्यास करायें तथा अभिभावकों से संपर्क कर उनका भी मार्गदर्शन करें।

५. शिक्षण प्रक्रिया ऋषि परम्परा अनुसार गुरु-शिष्य परम्परा के रूप में होगी। आचार्य स्वयं प्रत्येक विषय का समुचित ज्ञान प्राप्त करें तथा उसे अपने जीवन का अंग बनाएँ। तभी वाणी से वाणी, आचरण से आचरण एवं व्यक्तित्व से व्यक्तित्व का शिक्षण-प्रबोधन संभव हो सकेगा।

६. शिक्षण में उदाहरणों, चित्रों, कहानियों, प्रेरक प्रसंगों, प्रयोगों एवं मूल्यपरक खेलों का विवेक पूर्वक सहारा लें।

प्रथम अध्याय

कक्षा का स्वरूप

१. प्रार्थना

वह शक्ति हमें दो दयानिधे, कर्तव्य मार्ग पर डट जायें।
पर सेवा, पर उपकार में हम, निज जीवन सफल बना जायें।

हम दीन-दु:खी, निबलों, विकलों, के सेवक बन संताप हरें।
जो हों भूले, भटके, बिछुड़े, उनको तारें, खुद तर जायें। वह शक्ति......

छल-द्वेष-दम्भ, पाखण्ड झूठ, अन्याय से निश दिन दूर रहें।
जीवन हो शुद्ध सफल अपना, शुचि प्रेम, सुधा रस बरसायें। वह शक्ति...

निज आन-मान, मर्यादा का, प्रभु ध्यान रहे, अभिमान रहे,
जिस देवभूमि में जन्म लिया, बलिदान उसी पर हो जायें। वह शक्ति.....

अ. प्रार्थना

- बच्चों को पंक्ति में बिठाकर कक्षा आरंभ करें।
- ध्यान मुद्रा में बैठने का निर्देश दें- कमर सीधी, हाथ गोदी में बायाँ हाथ नीचे, दायाँ हाथ ऊपर, आँखें बंद।
- मंत्रों का उच्चारण धीरे-धीरे कराएँ।
- ध्वनियों के सही उच्चारण पर ध्यान दें, यह देखें कि कौन छात्र गलत उच्चारण कर रहा है? उसे बीच में ही रोक कर सही उच्चारण का अभ्यास कराएँ।
- उच्चारण में आरोह और अवरोह पर ध्यान दें।
- प्रतिमाह प्रार्थना के दो मंत्र (नये) सिखायें, पहले सप्ताह सिखायें, दूसरे सप्ताह दोहराने-याद करने को कहें।
- गायत्री मंत्र का तीन बार धीरे-धीरे उच्चारण कराएँ।

ॐ भूर्भुव: स्व: तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो न: प्रचोदयात्।

ब. गुरु-वंदना

ॐ गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णु: गुरुरेव महेश्वर:,
गुरुरेव परब्रह्म तस्मै श्री गुरुवे नम: ॥

अखण्ड मण्डलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्,
तत्पदं दर्शितं येन, तस्मै श्री गुरवे नमः ॥

मातृवत् लालयित्री च, पितृवत् मार्गदर्शिका,
नमोऽस्तु गुरु सत्तायै, श्रद्धा-प्रज्ञा युता च या॥

स. वेदमाता-देवमाता-विश्वमाता की वंदना

ॐ आयातु वरदे देवि! त्र्यक्षरे ब्रह्मवादिनी,
गायत्रिच्छन्दसां मातः, ब्रह्मयोने नमोऽस्तुते।

ॐ स्तुता मया वरदा वेदमाता, प्रचोदयन्तां पावमानी द्विजानाम् आयुः प्राणं प्रजां पशुं, कीर्तिं द्रविणं ब्रह्मवर्चसम्। मह्यं दत्वा व्रजत ब्रह्मलोकम्।

ॐ विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव यद्भद्रं तन्नऽआ सुव। ॐ शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः।

द. विशेष

विभिन्न धर्म-सम्प्रदाय के बच्चे हों तब उनकी प्रार्थना (देखें पृष्ठ-१७) अवश्य करें अथवा केवल सूर्य का ध्यान करवायें। उसके तेजस्, वर्चस् को अपने अन्दर धारण करने का भाव करने को कहें।

२. बाल प्रबोधन

अ. प्रेरणाप्रद कहानी

प्रति सप्ताह एक प्रेरणाप्रद कहानी सुनाएँ। कहानी में दी गयी प्रेरणा को हृदयंगम करने के लिए छात्रों से वार्तालाप करें। कहानियाँ याद कराएँ ।

संदर्भ- १. पुस्तक से
२. बाल निर्माण की कहानियाँ (भाग-१ से १६ तक)
३. पंचतंत्र की कहानियाँ
४. प्रेरणाप्रद कहानियाँ
५. उपनिषदों की कथाएँ

ब. प्रेरक प्रसंग/दृष्टांत

प्रति सप्ताह एक प्रेरक प्रसंग /दृष्टांत सुनाएँ।

संदर्भ- १. पुस्तक से
२. प्रज्ञा पुराण (भाग-१ से ४ तक)
३. प्रेरणाप्रद दृष्टान्त (वाङ्मय खण्ड-६७)
४. महापुरुषों की अविस्मरणीय जीवन प्रसंग (वाङ्मय खण्ड-५०, ५१)

५. मरकर भी अमर हो गए जो (वाङ्मय खण्ड-४४)

– इन प्रेरक प्रसंगों/दृष्टान्तों से क्या सीखा? छात्रों से चर्चा करें।

स. सुविचार/सद्वाक्य

प्रति सप्ताह एक सद्वाक्य सुनायें और बड़े-बड़े शब्दों में लिखकर कक्षा में टाँगें। उस ओर छात्रों का ध्यान आकर्षित करें। दूसरे सप्ताह में पहले के लिखे हुए वाक्य पर छात्रों से चर्चा करें, वाक्य के मूल संदेश को छात्रों के जीवन में उतारने का अभ्यास करायें।

संदर्भ-

-बोलती दीवारें (पुस्तक)

-विचार सूक्तियाँ (वाङ्मय क्र. ६९, ७०)

३. प्रज्ञागीत

प्रति माह दो नये गीत सिखायें, शब्दों के सही उच्चारण एवं अर्थ का बोध करायें।

संदर्भ- पुस्तक से, प्रज्ञागीत, क्रांति गीत, समूह गान एवं सहगान कीर्तन पुस्तक।

४. जीवन विद्या

(जीवन में सुव्यवस्था एवं संस्कार संवर्धन हेतु विशेष पाठ्यक्रम)

बालकों की जीवनचर्या सुव्यवस्थित करने, नैतिकता व आस्तिकता संवर्धन हेतु जीवन विद्या अध्याय में से प्रति सप्ताह क्रम वार थोड़ा-थोड़ा अभ्यास कराएँ।

संदर्भ-

१. पुस्तक
२. विद्यार्थी जीवन की दिशाधारा
३. नैतिक शिक्षा भाग-१ एवं २
४. सफल जीवन की दिशाधारा
५. सफलता के सात सूत्र-साधन
६. भावी पीढ़ी का नवनिर्माण

५. ध्यान/जप

गायत्री मंत्र का ५ मिनट जप एवं उगते सूर्य का ध्यान।

प्रार्थना- असतो मा सद्गमय, तमसो मा ज्योर्तिगमय, मृत्योर्मा अमृतंगमय्।

६. शुभकामना

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामयाः,
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखमाप्नुयात्।

७.शांति पाठ

ॐ द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष ष्ठ शान्तिः, पृथिवी शान्तिरापः, शान्तिरोषधयः शान्तिः। वनस्पतयः शान्तिर्विश्वेदेवाः, शान्तिर्ब्रह्म शान्तिः, सर्वष्ठशान्तिः, शान्तिरेव शान्तिः, सा मा शान्तिरेधि। ॐ शान्तिः, शान्तिः, शान्तिः। सर्वारिष्ट सुशान्तिर्भवतु।

हिन्दी अनुवाद :-

शान्ति कीजिए-शान्ति कीजिए।
प्रभु त्रिभुवन में-शान्ति कीजिए॥
जल में, थल में और गगन में-शान्ति कीजिए।
अन्तरिक्ष में अग्नि पवन में-शान्ति कीजिए॥
औषधि वनस्पति वन उपवन में-शान्ति कीजिए।
सकल विश्व के जड़ चेतन में- शान्ति कीजिए॥
प्रभु त्रिभुवन में.................
शान्ति विश्व निर्माण सृजन में-शान्ति कीजिए।
नगर ग्राम में और भवन में-शान्ति कीजिए॥
जीव मात्र के तन में मन मे-शान्ति कीजिए।
और जगत के हर कण-कण में-शान्ति कीजिए॥
प्रभु त्रिभुवन में.................

८. युग निर्माण सत्संकल्प पाठ एवं जयघोष

यहाँ वर्णित १८ संकल्प इक्कीसवीं सदी के उज्ज्वल भविष्य की सर्वोपयोगी आचार संहिता है। जीवन में इन सूत्रों को अपनाकर कोई भी व्यक्ति उन्नति के शिखर पर पहुँच सकता है। इसका प्रत्येक सूत्र व्यक्ति, परिवार, समाज और राष्ट्र में आमूलचूल परिवर्तन की आधार शिला है।

व्यक्ति निर्माण और राष्ट्रोत्थान के बीज इन्हीं सूत्रों में विद्यमान हैं। इन्हें ठीक प्रकार से समझें। इन पर मनन-चिंतन करें। बालकों से युग निर्माण सत्संकल्प का पाठ कराएँ तथा किसी एक का सरल अर्थ एवं महत्व समझाएँ और उसे अपने जीवन का अंग बनाने के लिए उन्हें प्रेरित करें।

- हम ईश्वर को सर्वव्यापी, न्यायकारी मानकर उसके अनुशासन को अपने जीवन में उतारेंगे।
- शरीर को भगवान् का मंदिर समझकर आत्म-संयम और नियमितता द्वारा आरोग्य की रक्षा करेंगे।
- मन को कुविचारों और दुर्भावनाओं से बचाये रखने के लिए स्वाध्याय एवं सत्संग की व्यवस्था रखे रहेंगे।
- इन्द्रिय संयम, अर्थ संयम, समय संयम और विचार संयम का सतत अभ्यास करेंगे।
- अपने आपको समाज का एक अभिन्न अंग मानेंगे और सबके हित में अपना हित समझेंगे।
- मर्यादाओं को पालेंगे, वर्जनाओं से बचेंगे, नागरिक कर्त्तव्यों का पालन करेंगे और समाजनिष्ठ बने रहेंगे।
- समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी और बहादुरी को जीवन का एक अविच्छिन्न अंग मानेंगे।
- चारों ओर मधुरता, स्वच्छता, सादगी एवं सज्जनता का वातावरण उत्पन्न करेंगे।
- अनीति से प्राप्त सफलता की अपेक्षा नीति पर चलते हुए असफलता को शिरोधार्य करेंगे।
- मनुष्य के मूल्यांकन की कसौटी, उसकी सफलताओं, योग्यताओं एवं विभूतियों को नहीं, उसके सद्विचारों और सत्कर्मों को मानेंगे।
- दूसरों के साथ वह व्यवहार नहीं करेंगे, जो हमें अपने लिए पसन्द नहीं।
- नर-नारी परस्पर पवित्र दृष्टि रखेंगे।
- संसार में सत्प्रवृत्तियों के पुण्य प्रसार के लिए अपने समय, प्रभाव, ज्ञान, पुरुषार्थ एवं धन का एक अंश नियमित रूप से लगाते रहेंगे।
- परम्पराओं की तुलना में विवेक को महत्त्व देंगे।
- सज्जनों को संगठित करने, अनीति से लोहा लेने और नव सृजन की गतिविधियों में पूरी रुचि लेंगे।
- राष्ट्रीय एकता एवं समता के प्रति निष्ठावान् रहेंगे। जाति, लिंग, भाषा, प्रान्त, सम्प्रदाय आदि के कारण परस्पर कोई भेद-भाव न बरतेंगे।
- मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता आप है, इस विश्वास के आधार पर हमारी

मान्यता है कि हम उत्कृष्ट बनेंगे और दूसरों को श्रेष्ठ बनायेंगे, तो युग अवश्य बदलेगा।

हम बदलेंगे-युग बदलेगा, हम सुधरेंगे-युग सुधरेगा। इस तथ्य पर हमारा परिपूर्ण विश्वास है।

जयघोष

कक्षा समाप्त होने पर उत्साह पूर्वक जयघोष करें-कराएँ।

१. गायत्री माता की - जय
२. यज्ञ भगवान की - जय
३. वेद भगवान की - जय
४. भारतीय संस्कृति की - जय
५. भारत माता की - जय
६. एक बनेंगे - नेक बनेंगे
७. हम सुधरेंगे - युग सुधरेगा
८. हम बदलेंगे - युग बदलेगा
९. विचार क्रांति अभियान - सफल हो, सफल हो, सफल हो
१०. ज्ञान यज्ञ की लाल मशाल - सदा जलेगी, सदा जलेगी।
११. ज्ञान यज्ञ की ज्योति जलाने - हम घर-घर में जाएँगे।
१२. नया सबेरा, नया उजाला - इस धरती पर लाएँगे
१३. नया समाज बनाएँगे - नया जमाना लाएँगे
१४. जन्म जहाँ पर - हमने पाया
१५. अन्न जहाँ का - हमने खाया
१६. वस्त्र जहाँ के - हमने पहने
१७. ज्ञान जहाँ से - हमने पाया
१८. वह है प्यारा - देश हमारा
१९. देश की रक्षा कौन करेगा - हम करेंगे, हम करेंगे
२०. युग निर्माण कैसे होगा - व्यक्ति के निर्माण से
२१. माँ का मस्तक ऊँचा होगा - त्याग और बलिदान से
२२. मानव मात्र - एक समान
२३. जाति वंश सब - एक समान
२४. नर और नारी - एक समान
२५. नारी का सम्मान जहाँ है - संस्कृति का उत्थान वहाँ है
२६. जागेगी भाई जागेगी - नारी शक्ति जागेगी
२७. नशा नाश की जड़ है भाई - जिसने किया मुसीबत लाई
२८. हमारी युग निर्माण योजना - सफल हो, सफल हो, सफल हो
२९. हमारा युग निर्माण सत् संकल्प - पूर्ण हो, पूर्ण हो, पूर्ण हो
३०. इक्कीसवीं सदी - उज्ज्वल भविष्य
३१. वन्दे वेद मातरम्

९. कक्षा के उपरान्त संस्कार संवर्धन हेतु निम्नलिखित गतिविधियाँ चलाएँ

१. सप्ताह में पड़ने वाले पर्व-त्योहारों का संक्षिप्त आयोजन करें।

२. सप्ताह में जिन छात्रों का जन्मदिन आया हो, उनका संक्षिप्त आयोजन कर जन्मदिन संस्कार मनायें।

३. बाल शिष्टाचार-चर्चा एवं प्रयोग।

४. प्रज्ञायोग।

५. आओ खेलें खेल (मूल्य परक, मनोरंजक तथा मैदानी खेल)
(खेल परिशिष्ट) एक या दो खेल समयानुसार

६. रोचक अभ्यास (रोचक अभ्यास परिशिष्ट) एक या दो समयानुसार करायें।

संस्कार संवर्धन हेतु अन्य गतिविधियाँ:-

१. प्रतियोगिताएँ, मनोरंजन, कहानी, निबंध, भाषण आदि।

२. आसन प्राणायाम-सूर्य नमस्कार, प्रज्ञायोग के आसन आदि।

३. लघुनाटक एवं नृत्य नाटिका। पुरस्कार के रूप में पुस्तकें भेंट करें।

४. पर्वों त्योहारों की प्रेरणा और यथा संभव/ समय उनका संक्षिप्त आयोजन।

५. महापुरुषों के जन्मदिन मनाना, उनके बचपन के प्रेरणाप्रद प्रसंगों की जानकारी देना।

६. शैक्षणिक भ्रमण आयोजन- वर्ष में एक या दो बार।

१०. भ्रमण

वर्ष में एक या दो बार सांस्कृतिक भ्रमण कार्यक्रम आयोजित करें।

सबके लिए सद्बुद्धि, सबके लिए उज्ज्वल भविष्य की प्रार्थनाएँ

गायत्री मंत्र - सार्वभौम प्रार्थना

ॐ भूर्भवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

भावार्थ- उस प्राण स्वरूप, दुःखनाशक, सुख स्वरूप, श्रेष्ठ, तेजस्वी, पापनाशक, देवस्वरूप परमात्मा को हम अपनी अन्तरात्मा में धारण करें। वह परमात्मा हमारी बुद्धि को सन्मार्ग की ओर प्रेरित करे।

जैन- नमो अरिहंताणं। नमो सिद्धाणं। नमो आयरियाणं।
नमो उवज्झायाणं। नमो लोए सव्व-साहूणं।
एसो पंच-नुमक्कारो सव्व- पावप्पणसणो।
मंगलाणं च सव्वेसिं पढमं हवइ मंगलं॥

सिक्ख-एक ओंकार (ॐ) सतिनामु, कर्तापुरखु, निर्भउ, निर्वैरु, अकालमूरति अजूनी सैभं,गुरुप्रसाद। जपु। आदि सचु, जुगादि सचु। है भी सचु नानक होसी भी सचु।

मुस्लिम-बिस्मिल्लाहिर्रहमाननिर्रहीम् अल्-हम्दु लिल्लाह-ए रब्बिल आलमीन। अर्रहमानिर्रहीम्। मालिकेयौमिद्दीन। ईय्याकन-अबोदो वइय्याक नस्तईन। एहदिनस्सेरातल् मुस्तकीम। सीरातल्लजीनऽअन-अम्तो-अलैहिम गैरिल मगदूब-ए अलैहिम्-वलद्दुआलिन।

आमीन

क्रिश्चियन-

Almighty God unto whom all hearts be open, all desires known, and from whom no secrets are hid; cleanse the thoughts of our hearts by the inspiration of Thy Holy Spirit, that we may perfectly love thee, and worthily magnify thy Holy Name through Christ our Lord

यहाँ परमात्मा चेतन सत्ता (Super power) के रूप में हैं। उसका- अल्लाह, गॉड, वाहे गुरु, तीर्थंकर, बुद्ध आदि अपने इष्टानुसार, ध्यान किया जा सकता है।



बाल प्रबोधन

प्रेरणाप्रद कहानियाँ (भाग- १)

१. भला आदमी

एक धनी पुरुष ने एक मन्दिर बनवाया। मन्दिर में भगवान् की पूजा करने के लिए एक पुजारी रखा। मन्दिर के खर्च के लिये बहुत-सी भूमि, खेत और बगीचे मन्दिर के नाम कर दिए। उन्होंने ऐसा प्रबंध किया था कि जो भूखे, दीन -दुःखी या साधु संत आएँ, वे वहाँ दो-चार दिन ठहर सकें और उनको भोजन के लिए भगवान् का प्रसाद मन्दिर से मिल जाया करे। अब उन्हें एक ऐसे व्यक्ति की आवश्यकता थी, जो मन्दिर की सम्पत्ति का प्रबंध करे और मन्दिर के सब कामों को ठीक-ठीक चलाता रहे।

बहुत से लोग उस धनी पुरुष के पास आये। वे लोग जानते थे कि यदि मन्दिर की व्यवस्था का काम मिल जाय तो वेतन अच्छा मिलेगा। लेकिन उस धनी पुरुष ने सबको लौटा दिया। वह सबसे कहता, मुझे एक भला आदमी चाहिये, मैं उसको अपने-आप छाँट लूँगा।'

बहुत से लोग मन ही मन उस धनी पुरुष को गालियाँ देते थे। बहुत लोग उसे मूर्ख या पागल कहते। लेकिन वह धनी पुरुष किसी की बात पर ध्यान नहीं देता था। जब मन्दिर के पट खुलते थे और लोग भगवान् के दर्शनों के लिये आने लगते थे, तब वह धनी पुरुष अपने मकान की छत पर बैठकर मन्दिर में आने वाले लोगों को चुपचाप देखा करता था।

एक दिन एक व्यक्ति मन्दिर में दर्शन करने आया। उसके कपड़े मैले फटे हुए थे। वह बहुत पढ़ा-लिखा भी नहीं जान पड़ता था। जब वह भगवान् का दर्शन करके जाने लगा, तब धनी पुरुष ने उसे अपने पास बुलाया और कहा-'क्या आप इस मन्दिर की व्यवस्था सँभालने का काम स्वीकार करेंगे?'

वह व्यक्ति बड़े आश्चर्य में पड़ गया। उसने कहा-'मैं तो बहुत पढ़ा-लिखा नहीं हूँ। मैं इतने बड़े मन्दिर का प्रबन्ध कैसे कर सकूँगा?'

धनी पुरुष ने कहा- 'मुझे बहुत विद्वान् नहीं चाहिए। मैं तो एक भले आदमी को मन्दिर का प्रबंधक बनाना चाहता हूँ।'

मैं जानता हूँ कि आप भले आदमी हैं। मन्दिर के रास्ते में एक ईंट का टुकड़ा गड़ा रह गया था और उसका एक कोना ऊपर निकला था। मैं इधर बहुत दिनों से देखता था कि ईंट के टुकड़े की नोक से लोगों को ठोकर लगती थी। लोग गिरते थे, लुढ़कते थे और उठकर चल देते थे। आपको उस टुकड़े से ठोकर नहीं लगी; किन्तु आपने उसे देखकर ही उखाड़ देने का यत्न किया। मैं देख रहा था कि आप मेरे मजदूर से फावड़ा माँगकर ले गये और उस टुकड़े को खोदकर आपने वहाँ की भूमि भी बराबर कर दी।

उस व्यक्ति ने कहा-'यह तो कोई बड़ी बात नहीं है। रास्ते में पड़े काँटे, कंकड़ और ठोकर लगने वाले पत्थर, ईटों को हटा देना तो प्रत्येक मनुष्य का कर्त्तव्य है।'धनी पुरुष ने कहा-'अपने कर्त्तव्य को जानने और पालन करने वाले लोग ही भले आदमी होते हैं।' मैं आपको ही मंदिर का प्रबंधक बनाना चाहता हूँ।' वह व्यक्ति मन्दिर का प्रबन्धक बन गया और उसने मन्दिर का बड़ा सुन्दर प्रबन्ध किया।

२. शिवाजी को बुढ़िया की सीख

बात उन दिनों की है, जिन दिनों छत्रपति शिवाजी मुगलों के विरुद्ध छापा मार युद्ध लड़ रहे थे। एक दिन रात को वे थके-माँदे एक वनवासी बुढ़िया की झोंपड़ी में पहुँचे और कुछ ख़ाने के लिए माँगा। बुढ़िया के घर में केवल चावल था, सो उसने प्रेम पूर्वक भात पकाया और उसे ही परोस दिया। शिवाजी बहुत भूखे थे, सो झट से भात खाने की आतुरता में उँगलियाँ जला बैठे। हाथ की जलन शान्त करने के लिए फूँकने लगे। यह देख बुढ़िया ने उनके चेहरे की ओर गौर से देखा और बोली-'सिपाही तेरी सूरत शिवाजी जैसी लगती है और साथ ही यह भी लगता है कि तू उसी की तरह मूर्ख है।'

शिवाजी स्तब्ध रह गये। उनने बुढ़िया से पूछा- 'भला शिवाजी की मूर्खता तो बताओ और साथ ही मेरी भी।'

बुढ़िया ने उत्तर दिया-'तूने किनारे-किनारे से थोड़ा-थोड़ा ठण्डा भात खाने की अपेक्षा बीच के सारे भात में हाथ डाला और उँगलियाँ जला लीं। यही मूर्खता शिवाजी करता है। वह दूर किनारों पर बसे छोटे-छोटे किलों को आसानी से जीतते हुए शक्ति बढ़ाने की अपेक्षा बड़े किलों पर धावा बोलता है और हार जाता है।'

शिवाजी को अपनी रणनीति की विफलता का कारण विदित हो गया। उन्होंने बुढ़िया की सीख मानी और पहले छोटे लक्ष्य बनाए और उन्हें पूरा करने

की रीति-नीति अपनाई। इस प्रकार उनकी शक्ति बढ़ी और अन्ततः वे बड़ी विजय पाने में समर्थ हुए।

शुभारंभ हमेशा छोटे-छोटे संकल्पों से होता है, तभी बड़े संकल्पों को पूरा करने का आत्मविश्वास जागृत होता है।

३. स्वर्ग के दर्शन

लक्ष्मी नारायण बहुत भोला लड़का था। वह प्रतिदिन रात में सोने से पहले अपनी दादी से कहानी सुनाने को कहता था। दादी उसे नागलोक, पाताल, गन्धर्व लोक, चन्द्रलोक, सूर्यलोक आदि की कहानियाँ सुनाया करती थी। एक दिन दादी ने उसे स्वर्ग का वर्णन सुनाया। स्वर्ग का वर्णन इतना सुन्दर था कि उसे सुनकर लक्ष्मी नारायण स्वर्ग देखने के लिये हठ करने लगा।

दादी ने उसे बहुत समझाया कि मनुष्य स्वर्ग नहीं देख सकता, किन्तु लक्ष्मीनारायण रोने लगा। रोते-रोते ही वह सो गया। उसे स्वप्न में दिखायी पड़ा कि एक चम-चम चमकते देवता उसके पास खड़े होकर कह रहे हैं- "बच्चे! स्वर्ग देखने के लिये मूल्य देना पड़ता है। तुम सरकस देखने जाते हो तो टिकट देते हो न? स्वर्ग देखने के लिये भी तुम्हें उसी प्रकार रुपये देने पड़ेंगे।"

स्वप्न में लक्ष्मीनारायण सोचने लगा कि मैं दादी से रुपये माँगूँगा। लेकिन देवता ने कहा-स्वर्ग में तुम्हारे रुपये नहीं चलते। यहाँ तो भलाई और पुण्यकर्मों का रुपया चलता है। अच्छा, काम करोगे तो एक रुपया इसमें आ जायगा और जब कोई बुरा काम करोगे तो एक रुपया इसमें से उड़ जायगा। जब यह डिबिया भर जायगी, तब तुम स्वर्ग देख सकोगे।

जब लक्ष्मीनारायण की नींद टूटी तो उसने अपने सिरहाने सचमुच एक डिबिया देखी। डिबिया लेकर वह बड़ा प्रसन्न हुआ। उस दिन उसकी दादी ने उसे एक पैसा दिया। पैसा लेकर वह घर से निकला। एक रोगी भिखारी उससे पैसा माँगने लगा। लक्ष्मीनारायण भिखारी को बिना पैसा दिये भाग जाना चाहता था, इतने में उसने अपने अध्यापक को सामने से आते देखा। उसके अध्यापक उदार लड़कों की बहुत प्रशंसा किया करते थे। उन्हें देखकर लक्ष्मीनारायण ने भिखारी को पैसा दे दिया। अध्यापक ने उसकी पीठ ठोंकी और प्रशंसा की।

घर लौटकर लक्ष्मीनारायण ने वह डिबिया खोली, किन्तु वह खाली पड़ी थी। इस बात से लक्ष्मी नारायण को बहुत दुःख हुआ। वह रोते-रोते सो गया। सपने में उसे वही देवता फिर दिखायी पड़े और बोले-तुमने अध्यापक से प्रशंसा

पाने के लिये पैसा दिया था, सो प्रशंसा मिल गयी। अब रोते क्यों हो? किसी लाभ की आशा से जो अच्छा काम किया जाता है, वह तो व्यापार है, वह पुण्य थोड़े ही है।

दूसरे दिन लक्ष्मीनारायण को उसकी दादी ने दो आने पैसे दिये। पैसे लेकर उसने बाजार जाकर दो संतरे खरीदे। उसका साथी मोतीलाल बीमार था। बाजार से लौटते समय वह अपने मित्र को देखने उसके घर चला गया। मोतीलाल को देखने उसके घर वैद्य आये थे। वैद्य जी ने दवा देकर मोती लाल की माता से कहा-इसे आज संतरे का रस देना। मोतीलाल की माता बहुत गरीब थी। वह रोने लगी और बोली-'मैं मजदूरी करके पेट भरती हूँ। इस समय बेटे की बीमारी में कई दिन से काम करने नहीं जा सकी। मेरे पास संतरे खरीदने के लिये एक भी पैसा नहीं है।'

लक्ष्मीनारायण ने अपने दोनों संतरे मोतीलाल की माँ को दिये। वह लक्ष्मीनारायण को आशीर्वाद देने लगी। घर आकर जब लक्ष्मीनारायण ने अपनी डिबिया खोली तो उसमें दो रुपये चमक रहे थे।

एक दिन लक्ष्मीनारायण खेल में लगा था। उसकी छोटी बहिन वहाँ आयी और उसके खिलौनों को उठाने लगी। लक्ष्मीनारायण ने उसे रोका। जब वह न मानी तो उसने उसे पीट दिया। बेचारी लड़की रोने लगी। इस बार जब उसने डिबिया खोली तो देखा कि उसके पहले के इकट्ठे कई रुपये उड़ गये हैं। अब उसे बड़ा पश्चाताप हुआ। उसने आगे कोई बुरा काम न करने का पक्का निश्चय कर लिया।

मनुष्य जैसे काम करता है, वैसा उसका स्वभाव हो जाता है। जो बुरे काम करता है, उसका स्वभाव बुरा हो जाता है। उसे फिर बुरा काम करने में ही आनन्द आता है। जो अच्छा काम करता है, उसका स्वभाव अच्छा हो जाता है। उसे बुरा काम करने की बात भी बुरी लगती है। लक्ष्मीनारायण पहले रुपये के लोभ से अच्छा काम करता था। धीरे-धीरे उसका स्वभाव ही अच्छा काम करने का हो गया। अच्छा काम करते-करते उसकी डिबिया रुपयों से भर गयी। स्वर्ग देखने की आशा से प्रसन्न होता, उस डिबिया को लेकर वह अपने बगीचे में पहुँचा।

लक्ष्मीनारायण ने देखा कि बगीचे में पेड़ के नीचे बैठा हुआ एक बूढ़ा साधु रो रहा है। वह दौड़ता हुआ साधु के पास गया और बोला-'बाबा! आप क्यों रो रहे है?' साधु बोला-बेटा जैसी डिबिया तुम्हारे हाथ में है, वैसी ही एक डिबिया मेरे पास

थी। बहुत दिन परिश्रम करके मैंने उसे रुपयों से भरा था। बड़ी आशा थी कि उसके रुपयों से स्वर्ग देखूँगा, किन्तु आज गङ्गा जी में स्नान करते समय वह डिबिया पानी में गिर गयी।

लक्ष्मी नारायण ने कहा-'बाबा! आप रोओ मत। मेरी डिबिया भी भरी हुई है। आप इसे ले लो।'

साधु बोला-'तुमने इसे बड़े परिश्रम से भरा है, इसे देने से तुम्हें दुःख होगा।'

लक्ष्मी नारायण ने कहा-'मुझे दुःख नहीं होगा बाबा! मैं तो लड़का हूँ। मुझे तो अभी बहुत दिन जीना है। मैं तो ऐसी कई डिबिया रुपये इकट्ठे कर सकता हूँ। आप बूढ़े हो गये हैं। आप मेरी डिबिया ले लीजिये।'

साधु ने डिबिया लेकर लक्ष्मीनारायण के नेत्रों पर हाथ फेर दिया। लक्ष्मीनारायण के नेत्र बंद हो गये। उसे स्वर्ग दिखायी पड़ने लगा। ऐसा सुन्दर स्वर्ग कि दादी ने जो स्वर्ग का वर्णन किया था, वह वर्णन तो स्वर्ग के एक कोने का भी ठीक वर्णन नहीं था।

जब लक्ष्मीनारायण ने नेत्र खोले तो साधु के बदले स्वप्न में दिखायी पड़ने वाला वही देवता उसके सामने प्रत्यक्ष खड़ा था। देवता ने कहा-बेटा! जो लोग अच्छे काम करते हैं, उनका घर स्वर्ग बन जाता है। तुम इसी प्रकार जीवन में भलाई करते रहोगे तो अन्त में स्वर्ग में पहुँच जाओगे।' देवता इतना कहकर वहीं अदृश्य हो गये।

४. धर्म का मर्म

एक साधु शिष्यों के साथ कुम्भ के मेले में भ्रमण कर रहे थे। एक स्थान पर उनने एक बाबा को माला फेरते देखा। लेकिन वह बाबा माला फेरते-फेरते बार-बार आँखें खोलकर देख लेते कि लोगों ने कितना दान दिया है। साधु हँसे व आगे बढ़ गए।

आगे एक पंडित जी भागवत कह रहे थे, पर उनका चेहरा यंत्रवत था। शब्द भी भावों से कोई संगति नहीं खा रहे थे, चेलों की जमात बैठी थी। उन्हें देखकर भी साधु खिल-खिलाकर हँस पड़े।

थोड़ा आगे बढ़ने पर इस मण्डली को एक व्यक्ति रोगी की परिचर्या करता मिला। वह उसके घावों को धोकर मरहम पट्टी कर रहा था। साथ ही अपनी मधुर वाणी से उसे बार-बार सांत्वना दे रहा था। साधु कुछ देर उसे देखते रहे, उनकी आँखें छलछला आईं।

आश्रम में लौटते ही शिष्यों ने उनसे पहले दो स्थानों पर हँसने व फिर रोने का कारण पूछा। वे बोले-'बेटा पहले दो स्थानों पर तो मात्र आडम्बर था पर भगवान की प्राप्ति के लिए एक ही व्यक्ति आकुल दिखा-वह, जो रोगी की परिचर्या कर रहा था। उसकी सेवा भावना देखकर मेरा हृदय द्रवित हो उठा और सोचने लगा न जाने क़ब जनमानस धर्म के सच्चे स्वरूप को समझेगा।'

५. ब्रह्मा जी के थैले

इस संसार को बनाने वाले ब्रह्माजी ने एक बार मनुष्य को अपने पास बुलाकर पूछा- 'तुम क्या चाहते हो?'

मनुष्य ने कहा- 'मैं उन्नति करना चाहता हूँ, सुख-शान्ति चाहता हूँ और चाहता हूँ कि सब लोग मेरी प्रशंसा करें।'

ब्रह्माजी ने मनुष्य के सामने दो थैले धर दिये। वे बोले-'इन थैलों को ले लो। इनमें से एक थैले में तुम्हारे पड़ोसी की बुराइयाँ भरी हैं। उसे पीठ पर लाद लो। उसे सदा बंद रखना। न तुम देखना, न दूसरों को दिखाना। दूसरे थैले में तुम्हारे दोष भरे हैं। उसे सामने लटका लो और बार-बार खोलकर देखा करो।'

मनुष्य ने दोनों थैले उठा लिये। लेकिन उससे एक भूल हो गयी। उसने अपनी बुराइयों का थैला पीठ पर लाद लिया और उसका मुँह कसकर बंद कर दिया। अपने पड़ोसी की बुराइयों से भरा थैला उसने सामने लटका लिया। उसका मुँह खोल कर वह उसे देखता रहता है और दूसरों को भी दिखाता रहता है। इससे उसने जो वरदान माँगे थे, वे भी उलटे हो गये। वह अवनति करने लगा। उसे दुःख और अशान्ति मिलने लगी।

तुम मनुष्य की वह भूल सुधार लो तो तुम्हारी उन्नति होगी। तुम्हें सुख-शान्ति मिलेगी। जगत् में तुम्हारी प्रशंसा होगी। तुम्हें करना यह है कि अपने पड़ोसी और परिचितों के दोष देखना बंद कर दो और अपने दोषों पर सदा दृष्टि रखो।

६. उपकार

अफ्रीका बहुत बड़ा देश है। उस देश में बहुत घने वन हैं और उन वनों में सिंह, भालू, गैंडा आदि भयानक पशु बहुत होते हैं। बहुत से लोग सिंह का चमड़ा पाने के लिये उसे मारते हैं।

गरमी के दिनों में हाथी जिस रास्ते झरने पर पानी पीने जाते हैं, उस रास्ते में लोग बड़ा और गहरा गड्ढा खोद देते हैं, उस गड्ढे के चारों ओर भाले के समान नोंकवाली लकड़ियों को गाड़ देते हैं। फिर गड्ढे को पतली लकड़ियों और पत्तों

से ढक देते हैं। जब हाथी पानी पीने निकलते हैं तो उनके दल में सबसे आगे-आगे चल रहा हाथी गड्ढे के ऊपर बिछी टहनियों के कारण गड्ढे को देख नहीं पाता और जैसे ही टहनियों पर पैर रखता है, टहनियाँ टूट जाती हैं और हाथी गड्ढे में गिर जाता है।

हाथी पकड़ने वाले उस हाथी को लाकर पहले कई दिनों भूखा रखते हैं। गड्ढे में भी हाथी कई दिन भूखा रखा जाता है, जिससे कमजोर हो जाने के कारण निकलते समय बहुत उधम न मचाए। भूख के मारे हाथी जब छटपटाने लगता है, तब एक आदमी उसे चारा देने जाता है। चारा देने के बहाने वह आदमी हाथी से धीरे-धीरे जान-पहचान कर लेता है और फिर हाथी को वही सिखाता है। शिक्षा देने के बाद हाथी को लोग बेच देते हैं।

कई बार हाथी पकड़ने के लिये जो गड्ढा बनाया जाता है, उसमें रात को धोखे से हिरन, नीलगाय, चीते या जंगल के दूसरे पशु भी गिर जाते हैं। गड्ढा बनाने वाले उन्हें भी निकाल लाते हैं। हाथी पकड़ने वालों ने अफ्रीका के जंगल में एक बार हाथी फँसाने के लिये गड्ढा बनाया और ढक दिया। रात में एक सिंह उस गड्ढे में गिर पड़ा। सिंह किसी छोटे पशु को पकड़ने दौड़ा होगा और भूल से गड्ढे में जा पड़ा होगा।

एक शिकारी उधर से निकला। उसने सिंह को गड्ढे में गिरा देखा। वीर पुरुष किसी को दु:ख में देखकर उसे मारते नहीं, उसकी सहायता करते हैं। सिंह बार-बार उछलता था, परन्तु गड्ढे के चारों ओर गड़ी नोक वाली लकड़ियों से उसे चोट लगती थी और वह फिर गड्ढे में गिर जाता था। शिकारी ने एक रस्सी में दो लकड़ियों को बाँधा और पेड़ पर चढ़ गया। पेड़ पर रस्सी खींचकर उसने लकड़ियाँ उखाड़ दी। शिकारी ने नीचे से लकड़ियाँ इसलिये नहीं उखाड़ी कि कहीं गड्ढे से निकलने पर सिंह उसे मार न डाले। दो लकड़ियाँ उखाड़ने से सिंह को रास्ता मिल गया। वह उछलकर गड्ढे से बाहर निकल आया और जंगल में चला गया।

वही शिकारी एक दिन एक झरने के किनारे पानी पीकर बंदूक रखकर बैठा था। वह बहुत थका था, इसलिये लेट गया और उसे नींद आ गयी। इतने में वहाँ एक चीता आया और शिकारी को मारने के लिये उस पर चढ़ बैठा, बेचारा शिकारी डर के मारे चिल्ला भी न सका।

इतने में एक भारी सिंह जोर से गर्जा। उसकी गर्जना सुनकर चीता पूँछ दबाकर भागने लगा; पर सिंह चीते के ऊपर कूद पड़ा और उसने चीते को मार डाला।

शिकारी समझता था कि चीते को मारकर सिंह अब उसे मारेगा; लेकिन सिंह आया और शिकारी के सामने बैठकर पूँछ हिलाने लगा। शिकारी ने पहचान लिया कि यह वही सिंह है, जिसे गड्ढे में से निकलने में शिकारी ने सहायता की थी।

सिंह जैसा भयङ्कर पशु भी अपने उपकार करने वाले को नहीं भूला था। तुम मनुष्य हो, तुम्हें तो कोई थोड़ा भी उपकार करे तो उसे नहीं भूलना चाहिये और उस परोपकारी की सेवा-सहायता करने के लिये सदा तैयार रहना चाहिये।

७. सबसे बड़ा गरीब

एक महात्मा भ्रमण करते हुए नगर में से जा रहे थे। मार्ग में उन्हें एक रुपया मिला। महात्मा तो विरक्त और संतोषी व्यक्ति थे। वे भला उसका क्या करते? अत: उन्होंने किसी दरिद्र को यह रुपया देने का विचार किया। कई दिन तक वे तलाश करते रहे, लेकिन उन्हें कोई दरिद्र नहीं मिला।

एक दिन उन्होंने देखा कि एक राजा अपनी सेना सहित दूसरे राज्य पर चढ़ाई करने जा रहा है। साधु ने वह रुपया राजा के ऊपर फेंक दिया। इस पर राजा को नाराजगी भी हुई और आश्चर्य भी। क्योंकि, रुपया एक साधु ने फेंका था इसलिए उसने साधु से ऐसा करने का कारण पूछा।

साधु ने धैर्य के साथ कहा- 'राजन्! मैंने एक रुपया पाया, उसे किसी दरिद्र को देने का निश्चय किया। लेकिन मुझे तुम्हारे बराबर कोई दरिद्र व्यक्ति नहीं मिला, क्योंकि जो इतने बड़े राज्य का अधिपति होकर भी दूसरे राज्य पर चढ़ाई करने जा रहा हो और इसके लिए युद्ध में अपार संहार करने को उद्यत हो रहा हो, उससे ज्यादा दरिद्र कौन होगा?'

राजा का क्रोध शान्त हुआ और अपनी भूल पर पश्चात्ताप करते हुए उसने वापिस अपने देश को प्रस्थान किया।

प्रेरणा:- हमें सदैव संतोषी वृत्ति रखनी चाहिए। संतोषी व्यक्ति को अपने पास जो साधन होते हैं, वे ही पर्याप्त लगते हैं। उसे और अधिक की भूख नहीं सताती।

८. मनुष्य या पशु

यह एक सच्ची घटना है। छुट्टी हो गयी थी। सब लड़के उछलते-कूदते, हँसते-गाते पाठशाला से निकले। पाठशाला के फाटक के सामने एक आदमी सड़क पर लेटा था। किसी ने उसकी ओर ध्यान नहीं दिया। सब अपनी धुन में चले जा रहे थे।

एक छोटे लड़के ने उस आदमी को देखा, वह उसके पास गया। वह आदमी बीमार था, उसने लड़के से पानी माँगा। लड़का पास के घर से पानी ले आया। बीमार ने पानी पीया और फिर लेट गया। लड़का पानी का बर्तन लौटा कर खेलने चला गया।

शाम को वह लड़का घर आया। उसने देखा कि एक सज्जन उसके पिता को बता रहे हैं कि 'आज, पाठशाला के सामने दोपहर के बाद एक आदमी सड़क पर मर गया।' लड़का पिता के पास गया और उसने कहा- 'बाबूजी! मैंने उसे देखा था। वह सड़क पर पड़ा था। माँगने पर मैंने उसे पानी भी पिलाया था।'

इस पर पिता ने पूछा, " फिर तुमने क्या किया।" लड़के ने बताया-"फिर मैं खेलने चला गया। "

पिता थोड़ा गम्भीर हुए और उन्होंने लड़के से कहा-'तुमने आज बहुत बड़ी गलती कर दी। तुमने एक बीमार आदमी को देखकर भी छोड़ दिया। उसे अस्पताल क्यों नहीं पहुँचाया?

डरते-डरते लड़के ने कहा- 'मैं अकेला था। भला, उसे अस्पताल कैसे ले जाता?' इस पर पिता ने समझाया -"तुम नहीं ले जा सकते थे तो अपने अध्यापक को बताते या घर आकर मुझे बताते। मैं कोई प्रबन्ध करता। किसी को असहाय पड़ा देखकर भी उसकी सहायता न करना पशुता है।"

बच्चो! आप सोचो कि आप क्या करते हो? किसी रोगी, घायल या दुःखिया को देख कर यथाशक्ति सहायता करते हो या चले जाते हो? आपको पता लगेगा कि आप क्या हो- 'मनुष्य या पशु?'

९. संतोष का फल

एक बार एक देश में अकाल पड़ा। लोग भूखों मरने लगे। नगर में एक धनी दयालु पुरुष थे। उन्होंने सब छोटे बच्चों को प्रतिदिन एक रोटी देने की घोषणा कर दी। दूसरे दिन सबेरे बगीचे में सब बच्चे इकट्ठे हुए। उन्हें रोटियाँ बँटने लगीं।

रोटियाँ छोटी-बड़ी थीं। सब बच्चे एक-दूसरे को धक्का देकर बड़ी रोटी पाने का प्रयत्न कर रहे थे। केवल एक छोटी लड़की एक ओर चुपचाप खड़ी थी। वह सबसे अन्त में आगे बढ़ी। टोकरे में सबसे छोटी अन्तिम रोटी बची थी। उसने उसे प्रसन्नता से ले लिया और वह घर चली गयी।

दूसरे दिन फिर रोटियाँ बाँटी गयीं। उस लड़की को आज भी सबसे छोटी रोटी मिली। लड़की ने जब घर लौट कर रोटी तोड़ी तो रोटी में से सोने की एक

मुहर निकली। उसकी माता ने कहा कि-'मुहर उस धनी को दे आओ।' लड़की दौड़ी -दौड़ी धनी के घर गयी।''

धनी ने उसे देखकर पूछा-'तुम क्यों आयी हो?'

लड़की ने कहा-'मेरी रोटी में यह मुहर निकली है। आटे में गिर गयी होगी। देने आयी हूँ। आप अपनी मुहर ले लें।'

धनी बहुत प्रसन्न हुआ। उसने उसे अपनी धर्मपुत्री बना लिया और उसकी माता के लिये मासिक वेतन निश्चित कर दिया। बड़ी होने पर वही लड़की उस धनी की उत्तराधिकारिणी बनी।

१०. गाली पास ही रह गयी

एक लड़का बड़ा दुष्ट था। वह चाहे जिसे गाली देकर भाग खड़ा होता। एक दिन एक साधु बाबा एक बरगद के नीचे बैठे थे। लड़का आया और गाली देकर भागा। उसने सोचा कि गाली देने से साधु चिढ़ेगा और मारने दौड़ेगा, तब बड़ा मजा आयेगा लेकिन साधु चुपचाप बैठे रहे। उन्होंने उसकी ओर देखा तक नहीं।

लड़का और निकट आ गया और खूब जोर-जोर से गाली बकने लगा। साधु अपने भजन में लगे थे। उन्होंने उसकी ओर कोई ध्यान न दिया। तभी एक दूसरे लड़के ने आकर कहा-'बाबा जी! यह आपको गालियाँ देता है?'

बाबा जी ने कहा-'हाँ भैया, देता तो है, पर मैं लेता कहाँ हूँ। जब मैं लेता नहीं तो सब वापस लौटकर इसी के पास रह जाती हैं।'

लड़का बोला-लेकिन यह बहुत खराब गालियाँ देता है।

साधु-यह तो और खराब बात है। पर मुझे तो वे कहीं नहीं चिपकीं, सब की सब इसी के मुख में भरी हैं। इससे इसका ही मुख गंदा हो रहा है।

गाली देने वाला लड़का सब सुन रहा था। उसने सोचा, साधु ठीक ही तो कह रहा है। मैं दूसरों को गाली देता हूँ तो वे ले लेते हैं। इसी से वे तिलमिलाते हैं, मारने दौड़ते हैं और दुःखी होते हैं। यह गाली नहीं लेता तो सब मेरे पास ही तो रह गयीं। लड़का मन ही मन बहुत शर्मिंदा हुआ और सोचने लगा छिः मेरे पास कितनी गंदी गालियाँ हैं। वह साधु के पास गया, क्षमा माँगी और बोला- बाबाजी! मेरी यह गंदी आदत कैसे छूटे और मुख कैसे शुद्ध हो?

साधु ने समझाया -'पश्चात्ताप करने तथा फिर ऐसा न करने की प्रतिज्ञा करने से बुरी आदत दूर हो जायेगी। मधुर वचन बोलने और भगवान् का नाम लेने से मुख शुद्ध हो जायेगा।'

११. बड़ों की बात मानो

एक बहुत घना जंगल था, उसमें पहाड़ थे और शीतल निर्मल जल के झरने बहते थे। जंगल में बहुत-से पशु रहते थे। पर्वत की गुफा में एक शेर-शेरनी और इन के दो छोटे बच्चे रहते थे। शेर और शेरनी अपने बच्चों को बहुत प्यार करते थे।

जब शेर के बच्चे अपने माँ बाप के साथ जंगल में निकलते तो उन्हें बहुत अच्छा लगता था। लेकिन शेर-शेरनी अपने बच्चों को बहुत कम अपने साथ ले जाते थे। वे बच्चों को गुफा में छोड़कर वन में अपने भोजन की खोज में चले जाया करते थे।

शेर और शेरनी अपने बच्चों को बार-बार समझाते थे कि वे अकेले गुफा से बाहर भूलकर भी न निकलें। लेकिन बड़े बच्चे को यह बात अच्छी नहीं लगती थी। एक दिन शेर-शेरनी जंगल में गये थे, बड़े बच्चे ने छोटे से कहा-चलो झरने से पानी पी आएँ और वन में थोड़ा घूमें। हिरनों को डरा देना मुझे बहुत अच्छा लगता है।

छोटे बच्चे ने कहा-'पिता जी ने कहा है कि अकेले गुफा से मत निकलना। झरने के पास जाने को बहुत मना किया है। तुम ठहरो पिताजी या माताजी को आने दो। हम उनके साथ जाकर पानी पी लेंगे।'

बड़े बच्चे ने कहा-'मुझे प्यास लगी है। सब पशु तो हम लोगों से डरते ही हैं। फिर डरने की क्या बात है?'

छोटा बच्चा अकेला जाने को तैयार नहीं हुआ। उसने कहा- 'मैं तो माँ- बाप की बात मानूँगा। मुझे अकेला जाने में डर लगता है।' बड़े भाई ने कहा। 'तुम डरपोक हो, मत जाओ, मैं तो जाता हूँ।' बड़ा बच्चा गुफा से निकला और झरने के पास गया। उसने पेट भर पानी पिया और तब हिरनों को ढूँढते हुए इधर-उधर घूमने लगा।

जंगल में उस दिन कुछ शिकारी आये हुए थे। शिकारियों ने दूर से शेर के बच्चे को अकेले घूमते देखा तो सोचा कि इसे पकड़कर किसी चिड़िया घर में बेच देने से अच्छे रुपये मिलेंगे। शिकारियों ने शेर के बच्चे को चारों ओर से घेर लिया और एक साथ उस पर टूट पड़े। उन लोगों ने कम्बल डालकर उस बच्चे को पकड़ लिया।

बेचारा शेर का बच्चा क्या करता। वह अभी कुत्ते जितना बड़ा भी नहीं हुआ था। उसे कम्बल में खूब लपेटकर उन लोगों ने रस्सियों से बाँध दिया। वह न तो छटपटा सकता था, न गुर्रा सकता था।

शिकारियों ने इस बच्चे को एक चिड़िया घर को बेच दिया। वहाँ वह एक लोहे के कटघरे में बंद कर दिया गया। वह बहुत दु:खी था। उसे अपने माँ-बाप की बहुत याद आती थी। बार-बार वह गुर्राता और लोहे की छड़ों को नोचता था, लेकिन उसके नोचने से छड़ तो टूट नहीं सकती थी।

जब भी वह शेर का बच्चा किसी छोटे बालक को देखता तो बहुत गुर्राता और उछलता था। यदि कोई उसकी भाषा समझा सकता तो वह उससे अवश्य कहता-'तुम अपने माँ-बाप तथा बड़ों की बात अवश्य मानना। बड़ों की बात न मानने से पीछे पश्चात्ताप करना पड़ता है। मैं बड़ों की बात न मानने से ही यहाँ बंदी हुआ हूँ।'

सच है-जे सठ निज अभिमान बस, सुनहिं न गुरुजन बैन।
जे जग महँ नित लहहिं दु:ख, कबहुँ न पावहिं चैन॥

१२. स्वच्छता

एक किसान ने एक बिल्ली पाल रखी थी। सफेद कोमल बालों वाली बिल्ली। रात को वह किसान की खाट पर ही उसके पैरों के पास सो जाती थी। किसान जब खेत पर से घर आता तो बिल्ली उसके पास दौड़ कर जाती और उसके पैरों से अपना शरीर रगड़ती, म्याऊँ -म्याऊँ करके प्यार दिखलाती। किसान अपनी बिल्ली को थोड़ा सा दूध और रोटी देता था।

किसान का एक लड़का था। वह बहुत आलसी था। रोज नहाता भी नहीं था। एक दिन किसान के लड़के ने अपने पिता से कहा-'पिता जी! आज रात को मैं आपके साथ सोऊँगा।'

किसान बोला- 'नहीं! तुम्हें अलग खाट पर ही सोना चाहिये।'

लड़का कहने लगा-'बिल्ली को तो आप अपनी ही खाट पर सोने देते हैं, परंतु मुझे क्यों नहीं सोने देते?'

किसान ने कहा-'तुम्हें खुजली हुई है। तुम्हारे साथ सोने से मुझे भी खुजली हो जायेगी। पहले तुम अपनी खुजली अच्छी होने दो।'

लड़का-खुजली से बहुत तंग था। उसके पूरे शरीर में छोटे-छोटे फोड़े-जैसे हो रहे थे। खुजली के मारे वह बेचैन रहता था। उसने अपने पिता से कहा-यह खुजली मुझे ही क्यों हुई है? इस बिल्ली को क्यों नहीं हुई?

किसान बोला-'कल सबेरे तुम्हें यह बात बताऊँगा।' दूसरे दिन सबेरे किसान ने बिल्ली को कुछ अधिक दूध और रोटी दी, लेकिन जब बिल्ली का पेट भर

गया तो वह दूध-रोटी छोड़कर दूर चली गयी और धूप में बैठकर बार-बार अपना एक पैर चाटकर अपने मुँह पर फिराने लगी।

किसान ने अपने लड़के को वहाँ बुलाया और बोला- 'देखो, बिल्ली कैसे अपना मुँह साफ कर रही है। यह इसी प्रकार अपना सब शरीर स्वच्छ रखती है। इसीसे इसे खुजली नहीं होती। तुम अपने कपड़े और शरीर को मैला रखते हो,इस कारण तुम्हें खुजली हुई है। मैल में एक प्रकार का विष होता है। वह पसीने के साथ जब शरीर की चमड़ी में लगता है और भीतर जाता है, तब खुजली, फोड़े और दूसरे भी कई रोग हो जाते हैं।

लड़के ने कहा-'मैं आज सब कपड़े गरम पानी में उबालकर धोऊँगा। बिस्तर और चद्दर भी धोऊँगा। खूब नहाऊँगा। पिता जी! इससे मेरी खुजली दूर हो जायेगी।'

किसान ने बताया-'शरीर के साथ पेट भी स्वच्छ रखना चाहिये। देखो, बिल्ली का पेट भर गया तो उसने दूध भी छोड़ दिया। पेट भर जाने पर फिर नहीं खाना चाहिये। ऐसी वस्तुएँ भी नहीं खानी चाहिये, जिनसे पेट में गड़बड़ी हो। मिर्च, खटाई, बाजार की चाट, अधिक मिठाइयाँ खाने और चाय पीने से पेट में गड़बड़ी हो जाती है। इससे पेट साफ नहीं रहता। पेट साफ न रहे तो बहुत से रोग होते हैं। बुखार भी पेट की गड़बड़ी से आता है। जो लोग जीभ के जरा से स्वाद के लिये बिना भूख ज्यादा खा लेते हैं अथवा मिठाई, घी में तली हुई चीजें, दही-बड़े आदि बार-बार खाते रहते हैं, उनको और भी तरह-तरह की बीमारियाँ हो जाती हैं। पेट साफ करने के लिये चोकर मिले आटे की रोटी, हरी सब्जी तथा मौसमी-सस्ते फल अधिक खाने चाहिये।'

किसान के लड़के ने उस दिन से अपने कपड़े स्वच्छ रखने आरम्भ कर दिये। वह रोज शरीर रगड़कर स्नान करता। वह इस बात का ध्यान रखता कि ज्यादा न खाए तथा कोई ऐसी वस्तु न खाए, जिससे पेट में गड़बड़ी हो। उसकी खुजली अच्छी हो गयी। वह चुस्त, शरीर का तगड़ा और बलवान् हो गया। उसके पिता और दूसरे लोग भी अब उसे बड़े प्रेम से अपने पास बैठाने लगे।

१३. बैल और गधा

दो पण्डित एक गृहस्थ के घर अतिथि हुए। एक विद्वान स्नान गृह में गये तो। गृहस्थ ने दूसरे से उनके बारे में पूछा। वह कहने लगे, वह तो बिल्कुल बैल है। पहला बाहर आ गया और दूसरा स्नान करने गया तो गृहस्थ ने उससे भी वही बात पूछी । दूसरा विद्वान बोला- वह तो पूरा गधा है। दोनों भोजन के लिए बैठे तो

गृहस्थ एक के आगे भूसा और दूसरे के आगे घास पटक कर बोला लीजिये महाराज बैल और गधे का भोजन हाजिर है। यह सुनकर दोनों बड़े लज्जित हुए।

एक दूसरे से ईर्ष्या और निन्दा अमानवीयता का ही द्योतक है।

१४. सद्व्यहार का अचूक अस्त्र

एक राजा ने एक दिन स्वप्न देखा कि कोई परोपकारी साधु उससे कह रहा है कि बेटा! कल रात को तुझे एक विषैला सर्प काटेगा और उसके काटने से तेरी मृत्यु हो जायेगी। वह सर्प अमुक पेड़ की जड़ में रहता है, पूर्व जन्म की शत्रुता का बदला लेने के लिए वह तुम्हें काटेगा।

प्रात:काल राजा सोकर उठा और स्वप्न की बात पर विचार करने लगा। धर्मात्माओं को अक्सर सच्चे ही स्वप्न हुआ करते हैं। राजा धर्मात्मा था, इसलिए अपने स्वप्न की सत्यता पर उसे विश्वास था। वह विचार करने लगा कि अब आत्म-रक्षा के लिए क्या उपाय करना चाहिए?

सोचते-सोचते राजा इस निर्णय पर पहुँचा कि मधुर व्यवहार से बढ़कर शत्रु को जीतने वाला और कोई हथियार इस पृथ्वी पर नहीं है। उसने सर्प के साथ मधुर व्यवहार करके उसका मन बदल देने का निश्चय किया।

संध्या होते ही राजा ने उस पेड़ की जड़ से लेकर अपनी शय्या तक फूलों का बिछौना बिछवा दिया, सुगन्धित जलों का छिड़काव करवाया, मीठे दूध के कटोरे जगह-जगह रखवा दिये और सेवकों से कह दिया कि रात को जब सर्प निकले तो कोई उसे किसी प्रकार कष्ट पहुँचाने या छेड़-छाड़ करने का प्रयत्न न करे।

रात को ठीक बारह बजे सर्प अपनी बाँबी में से फुसकारता हुआ निकला और राजा के महल की तरफ चल दिया। वह जैसे-जैसे आगे बढ़ता गया, अपने लिए की गई स्वागत व्यवस्था को देख-देखकर आनन्दित होता गया। कोमल बिछौने पर लेटता हुआ मनभावनी सुगन्ध का रसास्वादन करता हुआ, स्थान-स्थान पर मीठा दूध पीता हुआ आगे बढ़ता था। क्रोध के स्थान पर सन्तोष और प्रसन्नता के भाव उसमें बढ़ने लगे।

जैसे-जैसे वह आगे चलता गया, वैसे ही वैसे उसका क्रोध कम होता गया। राजमहल में जब वह प्रवेश करने लगा तो देखा कि प्रहरी और द्वारपाल सशस्त्र खड़े हैं, परन्तु उसे जरा भी हानि पहुँचाने की चेष्टा नहीं करते। यह असाधारण सौजन्य देखकर सर्प के मन में स्नेह उमड़ आया। सद्व्यवहार, नम्रता, मधुरता के जादू ने उसे मन्त्र-मुग्ध कर लिया था। कहाँ वह राजा को काटने चला था, परन्तु

अब उसके लिए अपना कार्य असंभव हो गया। हानि पहुँचाने के लिए आने वाले शत्रु के साथ जिसका ऐसा मधुर व्यवहार है, उस धर्मात्मा राजा को काटूँ तो किस प्रकार काटूँ? यह प्रश्न उससे हल न हो सका। राजा के पलंग तक जाने तक सर्प का निश्चय पूर्ण रूप से बदल गया।

सर्प के आगमन की राजा प्रतीक्षा कर रहा था। नियत समय से कुछ विलम्ब में वह पहुँचा। सर्प ने राजा से कहा-'हे राजन्! मैं तुम्हें काटकर अपने पूर्व जन्म का बदला चुकाने आया था, परन्तु तुम्हारे सौजन्य और सद्व्यवहार ने मुझे परास्त कर दिया। अब मैं तुम्हारा शत्रु नहीं मित्र हूँ। मित्रता के उपहार स्वरूप अपनी बहुमूल्य मणि मैं तुम्हें दे रहा हूँ। लो इसे अपने पास रखो।' इतना कहकर और मणि राजा के सामने रखकर सर्प उलटे पाँव अपने घर वापस चला गया।

भलमनसाहत और सद्व्यवहार ऐसे प्रबल अस्त्र हैं, जिनसे बुरे-से-बुरे स्वभाव के दुष्ट मनुष्यों को भी परास्त होना पड़ता है।

१५. सज्जनता और शालीनता की विजय यात्रा

एक राजा ने अपने राजकुमार को किसी दूरदर्शी मनीषी के आश्रम में सुयोग्य शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजा। उसे भर्ती कर लिया गया और पढ़ाई चल पड़ी। एक दिन मनीषी ने राजकुमार से पूछा- तुम क्या बनना चाहते हो यह तो बताओ? तब तुम्हारी शिक्षा का क्रम ठीक से बनेगा।

राजकुमार ने उत्तर दिया- वीर योद्धा।

मनीषी ने उसे समझाया, यह दोनों शब्द तो एक जैसे हैं, पर इनमें अन्तर बहुत है। योद्धा बनना है तो शस्त्र कला का अभ्यास करो और घुड़सवारी सीखो, किन्तु यदि वीर बनना हो तो नम्र बनो और सबसे मित्रवत् व्यवहार करने की आदत डालो। सबसे मित्रता करने की बात राजकुमार को जँची नहीं और वह असन्तुष्ट होकर अपने घर वापस चला गया। पिता ने लौटने का कारण पूछा, तो उसने मन की बात बता दी। भला सबके साथ मित्रता बरतना भी कोई नीति है?

राजा चुप हो गया। पर जानता था, उससे जो कहा गया है सो सच है। कुछ दिन बाद राजा अपने लड़के को साथ लेकर घने जंगलों में वन-विहार के लिए गया। चलते-चलते शाम हो गई। राजा को ठोकर लगी और वह गिर पड़ा। उठा तो देखा कि उसकी अँगूठी में जड़ा कीमती हीरा निकलकर पथरीले रेत में गिरकर गुम हो गया है। हीरा बहुत कीमती था, सो राजा को बहुत चिन्ता हुई, पर किया क्या जाता, अन्धेरी रात में कैसे ढूँढ़ते?

राजकुमार को एक उपाय सूझा। उसने अपनी पगड़ी खोली और वहाँ का सारा पथरीला रेत समेटकर पोटली में बाँध लिया और उस भयानक जंगल को पार करने के लिए निकल पड़े।

रास्ते में सन्नाटा तोड़ते हुए राजा ने पूछा-"हीरा तो एक छोटा-सा टुकड़ा है, उसके लिए इतनी सारी रेत समेटने की क्या जरूरत थी?" राजकुमार ने कहा- "जब हीरा अलग से नहीं मिलता, तो यही उपाय रह जाता है कि उस जगह की सारी रेत समेटी जाय और फिर सुविधानुसार उसमें से काम की चीज ढूँढ़ ली जाय।"

राजा चुप हो गया किन्तु कुछ दूर चलकर उसने राजकुमार से पुन: पूछा कि फिर मनीषी अध्यापक का यह कहना कैसे गलत हो गया कि 'सबसे मित्रता का अभ्यास करो।' मित्रता का दायरा बड़ा होने से ही तो उसमें से हीरे ढूँढ़ सकना संभव होगा।

राजकुमार का समाधान हो गया और वह फिर उस विद्वान् के आश्रम में पढ़ने के लिए चला गया।

१६. दृष्टिकोण व्यक्तित्व का आईना है

एक धर्मात्मा ने जंगल में एक सुंदर मकान बनाया और उद्यान लगाया, ताकि उधर आने वाले उसमें ठहरें और विश्राम करें। समय-समय पर अनेक लोग आते और ठहरते। दरबार हरेक आने वाले से पूछता "आपको यहाँ कैसा लगा। बताइए मालिक ने इसे किन लोगों के लिए बनाया है।"

आने वाले अपनी-अपनी दृष्टि से उसका उद्देश्य बताते रहे। चोरों ने कहा- "एकांत में सुस्ताने, योजना बनाने, हथियार जमा करने और माल का बँटवारा करने के लिए।"

व्यभिचारियों ने कहा-"बिना किसी रोक-टोक और खटके के स्वेच्छाचारिता बरतने के लिए।"

जुआरियों ने कहा,- "जुआ खेलने और लोगों की आँखों से बचे रहने के लिए।"

कलाकारों ने कहा-"एकांत का लाभ लेकर एकाग्रता पूर्वक कला का अभ्यास करने के लिए।"

संतो ने कहा-"शांत वातावरण में भजन करने और ब्रह्मलीन होने के लिए।"

कुछ विद्यार्थी आए, उनने कहा-"शांत वातावरण में विद्या अध्ययन ठीक प्रकार होता है।"

हर आने वाला अपने दृष्टिकोण द्वारा अपने कार्यों की जानकारी देता गया।

दरबान ने निष्कर्ष निकाला- "जिसका जैसा दृष्टिकोण होता है, वैसा ही उसका व्यक्तित्व होता है।"

१७. सबसे बड़ा पुण्यात्मा

काशी प्राचीन समय से प्रसिद्ध है। संस्कृत विद्या का वह पुराना केन्द्र है। इसे भगवान् विश्वनाथ की नगरी या विश्वनाथपुरी भी कहा जाता है। विश्वनाथजी का वहाँ बहुत प्राचीन मन्दिर है। एक दिन विश्वनाथ मंदिर के पुजारी ने स्वप्न देखा कि भगवान् विश्वनाथ उससे मन्दिर में विद्वानों तथा धर्मात्मा लोगों की सभा बुलाने को कह रहे हैं। पुजारी ने दूसरे दिन सबेरे ही सारे नगर में इसकी घोषणा करवा दी।

काशी के सभी विद्वान्, साधु और अन्य पुण्यात्मा दानी लोग भी गंगा जी में स्नान करके मन्दिर में आये। सबने विश्वनाथ जी को जल चढ़ाया, प्रदिक्षणा की और सभा-मण्डप में तथा बाहर खड़े हो गये। उस दिन मन्दिर में बहुत भीड़ थी। सबके आ जाने पर पुजारी ने सबसे अपना स्वप्न बताया। सब लोग हर-हर महादेव की ध्वनि करके शंकर जी की प्रार्थना करने लगे।

जब भगवान् की आरती हो गयी घण्टे-घड़ियाल के शब्द बंद हो गये और सब लोग प्रार्थना कर चुके, तब सबने देखा कि मन्दिर में अचानक खूब प्रकाश हो गया है। भगवान् विश्वनाथ की मूर्ति के पास एक सोने का पात्र पड़ा था, जिस पर बड़े-बड़े रत्न जड़े हुए थे। उन रत्नों की चमक से ही मन्दिर में प्रकाश हो रहा था। पुजारी ने वह रत्न-जड़ित स्वर्णपात्र उठा लिया। उस पर हीरों के अक्षरों में लिखा था- 'सबसे बड़े दयालु और पुण्यात्मा के लिये यह विश्वनाथ जी का उपहार है।'

पुजारी जी बड़े त्यागी और सच्चे भगवद्भक्त थे। उन्होंने वह पात्र उठाया सबको दिखाया। वे बोले-'प्रत्येक सोमावार को यहाँ विद्वानों की सभा होगी, जो सबसे बड़ा पुण्यात्मा और दयालु अपने को सिद्ध कर देगा, उसे यह स्वर्णपात्र दिया जाएगा।'

देश में चारों ओर यह समाचार फैल गया। दूर-दूर से तपस्वी,त्यागी, व्रत करने वाले, दान करने वाले लोग काशी आने लगे। एक साधू ने कई महीने लगातार चान्द्रायण-व्रत किया था। वे उस स्वर्णपात्र को लेने आये। लेकिन जब स्वर्णपात्र उन्हें दिया गया, उनके हाथ में जाते ही वह मिट्टी का हो गया। उसकी ज्योतिं नष्ट हो गयी। लज्जित हो कर उन्होंने स्वर्णपात्र लौटा दिया। पुजारी के हाथ में जाते ही वह फिर सोने का हो गया और उसके रत्न चमकने लगे।

एक धर्मात्मा ने बहुत से विद्यालय बनवाये थे। कई स्थानों पर सेवाश्रम चलाते थे। दान करते-करते उन्होंने लगभग सारा धन खर्च कर दिया था। बहुत सी संस्थाओं को सदा दान देते थे। अखबारों में उनका नाम छपता था। वे भी स्वर्णपात्र लेने आये, किन्तु उनके हाथ में भी जाकर मिट्टी का हो गया। पुजारी ने उनसे कहा- 'आप पद, मान या यश के लोभ से दान करते जान पड़ते हैं। नाम की इच्छा से होने वाला दान सच्चा दान नहीं हैं।

इसी प्रकार बहुत-से लोग आये, किन्तु कोई भी स्वर्णपात्र पा नहीं सका। सबके हाथों में पहुँचकर वह मिट्टी का हो जाता था। कई महीने बीत गये। बहुत से लोग स्वर्णपात्र पाने के लोभ से भगवान् विश्वनाथ के मन्दिर के पास ही दान-पुण्य करने लगे। लेकिन स्वर्णपात्र उन्हें भी नहीं मिला।

एक दिन एक बूढ़ा किसान भगवान् विश्वनाथ के दर्शन करने आया। वह देहाती किसान था। उसके कपड़े मैले और फटे थे। वह केवल विश्वनाथ जी का दर्शन करने आया था। उसके पास कपड़े में बँधा थोड़ा सत्तू और एक फटा कम्बल था। लोग मन्दिर के पास गरीबों को कपड़े और पूड़ी-मिठाई आदि बाँट रहे थे; किन्तु एक कोढ़ी मन्दिर से दूर पड़ा कराह रहा था। उससे उठा नहीं जाता था। उसके सारे शरीर में घाव थे। वह भूखा था, किन्तु उसकी ओर कोई देखता तक नहीं था। बूढ़े किसान को कोढ़ी पर दया आ गयी। उसने अपना सत्तू उसे खाने को दे दिया और अपना कम्बल उसे उढ़ा दिया। वहाँ से वह मन्दिर में दर्शन करने आया।

मन्दिर के पुजारी ने अब नियम बना लिया था कि सोमवार को जितने यात्री दर्शन करने आते थे, सबके हाथ में एक बार वह स्वर्णपात्र रखते थे। बूढ़ा किसान जब विश्वनाथ जी का दर्शन करके मन्दिर से निकला, पुजारी ने उसके हाथ में स्वर्णपात्र रख दिया। उसके हाथ में जाते ही स्वर्णपात्र में जड़े रत्न दुगुने प्रकाश से चमकने लगे। सब लोग बूढ़े की प्रशंसा करने लगे।

पुजारी ने कहा- जो निर्लोभ है, दीनों पर दया करता है, जो बिना किसी स्वार्थ के दान करता है, और दुखियों की सेवा करता है, वही सबसे बड़ा पुण्यात्मा है।

१८. अवश्यमेव भोक्तव्यं कर्मफल शुभाशुभम्

आठों वसु एक बार सपत्नीक पृथ्वी लोक पर भ्रमण के लिए उतरे। कई तीर्थ और देवताओं के दर्शन करते हुये वे वशिष्ठ ऋषि के आश्रम में पहुँचे। वशिष्ठ का आश्रम उन दिनों तप, ज्ञान, साधना और ब्रह्मवर्चस् के लिए विश्व विख्यात था। वहाँ अलौकिक शान्ति छाई हुई थी।

वसु और उनकी पत्नियाँ देर तक आश्रम की प्रत्येक वस्तु को देखती रहीं। आश्रम की यज्ञशाला, साधना-भवन और स्नातकों के निवास आदि सभी स्वच्छ, सजे हुए एवं सुव्यवस्थित देखकर उन्हें बड़ी प्रसन्नता हुई। बड़ी देर तक वसुगण, ऋषियों के तप, ज्ञान, दर्शन और उनकी जीवन व्यवस्था पर चर्चा करते और प्रसन्न होते रहे।

इसी बीच वसु प्रभास एवं उनकी धर्म पत्नी, आश्रम के उद्यान भाग की ओर निकल आये। वहाँ ऋषि की कामधेनु नन्दिनी हरी घास चर रही थी। गाय की सुंदरता, भोली आकृति, धवल वर्ण को देखकर वे दंग रह गए। प्रभास-पत्नी तो उसे पाने के लिये व्याकुल हो उठीं।

उन्होंने प्रभास को सम्बोधित करते हुए कहा-"स्वामी! नन्दिनी की मृदुल दृष्टि ने मुझे विमोहित किया है। मुझे इस गाय में आसक्ति हो गई है, अतएव इसे अपने साथ ले चलिये।"

प्रभास हँसकर बोले- "देवी! औरों की प्यारी वस्तु को देखकर लोभ करना और उसे अनाधिकार पाने की चेष्टा करना पाप है। उस पाप के फल से मनुष्य तो मनुष्य, हम देवता भी नहीं बच सकते, क्योंकि ब्रह्माजी ने कर्मों के अनुसार ही सृष्टि की रचना की है। हम अच्छे कर्मों से देवता हुये हैं, बुराई पर चलने के लिये विवश मत करो, अन्यथा कर्म-भोग का दण्ड हमें भी भुगतना पड़ेगा।"

"हम देवता हैं, इसीलिये पहले ही अमर हैं। नन्दिनी का दूध तो अमरत्व के लिये है, इसलिये उससे अपना कोई प्रयोजन भी तो सिद्ध नहीं होता?" प्रभास ने अपनी धर्म-पत्नी को सब प्रकार से समझाया। पर वे नहीं मानीं। उन्होंने कहा-"ऐसा मैं अपने लिये तो कर नहीं रही। मृत्यु लोक में मेरी एक सहेली है, उसके लिये कर रही हूँ। ऋषि भी आश्रम में हैं नहीं, इसलिये यथाशीघ्र गाय को यहाँ से ले चलिये।"

प्रभास ने फिर समझाया-"देवी! चोरी और छल से प्राप्त वस्तु को परोपकर में भी लगाने से पुण्य-फल नहीं होता। अनीति से प्राप्त वस्तु के द्वारा किये हुए दान और धर्म से शान्ति भी नहीं मिलती। इसलिये तुमको यह जिद छोड़ देनी चाहिये।"

वसु-पत्नी समझाने से भी न समझीं। प्रभास को गाय चुरानी ही पड़ी। थोड़ी देर में अन्यत्र गये हुये ऋषि वशिष्ठ आश्रम लौटे। गाय को न पाकर उन्होंने सबसे पूछ-ताछ की। किसी ने उसका अता-पता नहीं बताया। ऋषि ने ज्ञान-चक्षुओं से देखा तो उन्हें वसुओं की करतूत मालूम पड़ गई। देवताओं के इस

उद्धत-पतन पर शांत ऋषि को भी क्रोध आ गया। उन्होंने शाप दे दिया- "सभी वसु देव शरीर त्यागकर पृथ्वी पर जन्म लें।"

शाप व्यर्थ नहीं हो सकता था। देवगुरु के कहने पर उन्होंने ७ वसुओं को तो तत्काल मुक्ति का वरदान दे दिया, पर अन्तिम वसु प्रभास को चिरकाल तक मनुष्य शरीर में रहकर कष्टों को सहन करना ही पड़ा।

वह आठों वसु क्रमशः महाराज शान्तनु और गंगा के घर जन्मे। सात की तत्काल मृत्यु हो गई, पर आठवें प्रभास को पितामह के रूप में जीवित रहना पड़ा। महाभारत युद्ध में उनका शरीर छेदा गया। यह उसी पाप का फल था, जो उन्हें देव शरीर में करना पड़ा था। इसलिये कहते हैं कि गलती देवताओं को भी क्षम्य नहीं। मनुष्य को तो उसका फल अनिवार्य रूप से भोगना ही पड़ता है। दुष्कर्म के लिए पश्चात्ताप करना ही पड़ता है। ऐसा न सोचें कि एकान्त में किया गया अपराध किसी ने देखा नहीं। नियन्ता की दृष्टि सर्वव्यापी है। उससे कोई बच नहीं सकता।

१९. सत्य, ज्ञान के समन्वय में निहित

सम्राट ब्रह्मदत्त ने सुना कि उनके चारों पुत्र विद्याध्ययन कर लौट रहे हैं, तो उनके हर्षातिरेक का ठिकाना न रहा। स्वतःजाकर नगर-द्वार पर उन्होंने अपने पुत्रों की आगवानी की और बड़े लाड़-प्यार के साथ उन्हें राज-प्रासाद ले आये। राजधानी में सर्वत्र उल्लास और आनन्द की धूम मच गई।

किन्तु हवा के झोंके के समान आई वह प्रसन्नता एकाएक तब समाप्त होती जान पड़ी जब चारों पुत्रों में परस्पर श्रेष्ठता का विवाद उठ खड़ा हुआ।

पहले राजकुमार का कहना था- मैंने खगोल विद्या पढ़ी है-खगोल विद्या से मनुष्य को विराट का ज्ञान होता है इसलिये मेरी विद्या सर्वश्रेष्ठ है। सत्य-असत्य का जितना अच्छा निर्णय मैं दे सकता हूँ, दूसरा नहीं।

द्वितीय राजकुमार का तर्क था कि तारों की स्थिति और उनके स्वभाव का ज्ञान प्राप्त कर लेने से कोई ब्रह्म नहीं हो जाता-ज्ञान तो मेरा सार्थक है क्योंकि मैंने वेदान्त पर आचार्य किया है। ब्रह्म विद्या से बढ़कर कोई विद्या नहीं, इससे लोक-परलोक के बन्धन खुलते हैं। इसलिये मैं अपने को श्रेष्ठ कहूँ, तब तो कोई बात है। इन भाई साहब को ऐसा मानने का क्या अधिकार?

तीसरे राजकुमार का मत था-वेदान्त को व्यवहार में प्रयोग न किया जाए, साधनाएँ न की जाएँ तो वाचिक ज्ञान मात्र से कोई प्रयोजन सिद्ध नहीं होता-देखने वाली बात है कि हम अपने सामाजिक जीवन में कितने व्यवस्थित

हैं-मैंने सामजशास्त्र पढ़ा है इसलिये मेरा दावा है कि श्रेष्ठता का अधिकारी मैं ही हो सकता हूँ।

चौथे रसायनशास्त्री राजकुमार इन सबकी बातें सुनकर हँसे और बोले- बन्धुओं झगड़ो मत। इस संसार में श्रेष्ठता का माप दण्ड है लक्ष्मी। तुम जानते हो मैंने लोहे और ताँबे को भी सोना बनाने वाली विद्या पढ़ी है। पारद को फूँककर मैं अलौकिक औषधियाँ बना सकता हूँ और तुम सबकी विद्या खरीद लेने जितना अर्थ उपार्जन कर सकता हूँ, तब फिर बोलो, मेरी विद्या श्रेष्ठ हुई या नहीं?

श्रेष्ठता सिद्धि के अखाड़े के चारों, प्रतिद्वन्द्वियों में से किसी को भी हार न मानते देख सम्राट ब्रह्मदत्त अत्यन्त दुःखी हुये। सारी स्थिति पर विचारकर एक योजना बनाई। उन्होंने एक राजकुमार को पतझड़ के समय जंगल में भेजा और किंशुक तरु को पहचानकर आने को कहा। उस समय किंशुक में एक भी पत्ता नहीं था। वह ठूँठ खड़ा था, सो पहले राजकुमार ने यह ज्ञान प्राप्त किया किंशुक एक ऐसा वृक्ष है जिसमें पत्ते नहीं होते। अगले माह दूसरे राजकुमार गये, तब तक कोंपलें फूट चुकी थीं। तीसरे माह उसमें पुष्प आ चुके थे और चौथे माह फूल-फलों में परिवर्तित हो चुके थे। हर राजकुमार ने किंशुक की अलग-अलग पहचान बताई।

तब राजपुरोहित ने उन चारों को पास बुलाया और कहा-"तात्! किंशुक तरु इस तरह का होता है- चार महीने उसमें परिवर्तन के होते हैं। तुम लोगों में से हर एक ने उसका भिन्न रूप देखा पर यथार्थ कुछ और ही था। इसी प्रकार संसार में ज्ञान अनेक प्रकार के हैं पर सत्य उन सबके समन्वय में है। किसी एक में नहीं।"

राजकुमार सन्तुष्ट हो गये और उस दिन से श्रेष्ठता के अहंकार का परित्याग कर परस्पर मिल-जुलकर रहने लगे।

२०. सेवाभावी की कसौटी

स्वामीजी का प्रवचन समाप्त हुआ। अपने प्रवचन में उन्होंने सेवा-धर्म की महत्ता पर विस्तार से प्रकाश डाला और अन्त में यह निवेदन भी किया कि जो इस राह पर चलने के इच्छुक हों, वह मेरे कार्य में सहयोगी हो सकते हैं। सभा विसर्जन के समय दो व्यक्तियों ने आगे बढ़कर अपने नाम लिखाये। स्वामीजी ने उसी समय दूसरे दिन आने का आदेश दिया।

सभा का विसर्जन हो गया। लोग इधर-उधर बिखर गये। दूसरे दिन सड़क के किनारे एक महिला खड़ी थी, पास में घास का भारी ढेर। किसी राहगीर की

प्रतीक्षा कर रही थी कि कोई आये और उसका बोझा उठवा दे। एक आदमी आया, महिला ने अनुनय-विनय की, पर उसने उपेक्षा की दृष्टि से देखा और बोला-"अभी मेरे पास समय नहीं है। मैं बहुत महत्त्वपूर्ण कार्य को सम्पन्न करने जा रहा हूँ।" इतना कह वह आगे बढ़ गया। थोड़ी ही दूर पर एक बैलगाड़ी दलदल में फँसी खड़ी थी। गाड़ीवान् बैलों पर डण्डे बरसा रहा था पर बैल एक कदम भी आगे न बढ़ पा रहे थे। यदि पीछे से कोई गाड़ी के पहिये को धक्का देकर आगे बढ़ा दे तो बैल उसे खींचकर दलदल से बाहर निकाल सकते थे। गाड़ीवान ने कहा-"भैया! आज तो मैं मुसीबत में फँस गया हूँ। मेरी थोड़ी सहायता करदो।"

राहगीर बोला-मैं इससे भी बड़ी सेवा करने स्वामी जी के पास जा रहा हूँ। फिर बिना इस कीचड़ में घुसे, धक्का देना भी सम्भव नहीं, अत: अपने कपड़े कौन खराब करे। इतना कहकर वह आगे बढ़ गया। और आगे चलने पर उसे एक नेत्रहीन वृद्धा मिली। जो अपनी लकड़ी सड़क पर खटखट कर दयनीय स्वर से कह रही थी, "कोई है क्या? जो मुझे सड़क के बायीं ओर वाली उस झोंपड़ी तक पहुँचा दे। भगवान् तुम्हारा भला करेगा। बड़ा अहसान होगा।" वह व्यक्ति कुड़कुड़ाया-"क्षमा करो माँ! क्यों मेरा सगुन बिगाड़ती हो? तुम शायद नहीं जानती मैं बड़ा आदमी बनने जा रहा हूँ। मुझे जल्दी पहुँचना है।"

इस तरह सबको दुत्कार कर वह स्वामीजी के पास पहुँचा। स्वामीजी उपासना के लिए बैठने ही वाले थे, उसके आने पर वह रुक गये। उन्होंने पूछा-क्या तुम वही व्यक्ति हो, जिसने कल की सभा में मेरे निवेदन पर समाज सेवा का व्रत लिया था और महान् बनने की इच्छा व्यक्त की थी।

जी हाँ! बड़ी अच्छी बात है, आप समय पर आ गये। जरा देर बैठिये, मुझे एक अन्य व्यक्ति की भी प्रतीक्षा है, तुम्हारे साथ एक और नाम लिखाया गया है।

जिस व्यक्ति को समय का मूल्य नहीं मालुम, वह अपने जीवन में क्या कर सकता है? उस व्यक्ति ने हँसते हुए कहा। स्वामीजी उसके व्यंग्य को समझ गये थे, फिर भी वह थोड़ी देर और प्रतीक्षा करना चाहते थे। इतने में ही दूसरा व्यक्ति भी आ गया। उसके कपड़े कीचड़ में सने हुए थे। साँस फूल रही थी। आते ही प्रणाम कर स्वामी जी से बोला-"कृपा कर क्षमा करें! मुझे आने में देर हो गई, मैं घर से तो समय पर निकला था, पर रास्ते में एक बोझा उठवाने में, एक गाड़ीवान् की गाड़ी को कीचड़ से बाहर निकालने में तथा एक नेत्रहीन वृद्धा को उसकी

झोंपड़ी तक पहुँचाने में कुछ समय लग गया और पूर्व निर्धारित समय पर आपकी सेवा में उपस्थित न हो सका।''

स्वामीजी ने मुस्कारते हुए प्रथम आगन्तुक से कहा- दोनों की राह एक ही थी, पर तुम्हें सेवा के जो अवसर मिले, उनकी अवहेलना कर यहाँ चले आये। तुम अपना निर्णय स्वयं ही कर लो, क्या सेवा कार्यों में मुझे सहयोग प्रदान कर सकोगे?

जिस व्यक्ति ने सेवा के अवसरों को खो दिया हो, वह भला क्या उत्तर देता?

२१. एकान्त नहीं मिला

आचार्य उपकौशल को अपनी पुत्री के लिये योग्य वर की खोज थी। उनके गुरुकुल में कई विद्वान् ब्रह्मचारी थे, किन्तु वे कन्यादान के लिए ऐसे सत्पात्र की खोज में थे, जो विकट से विकट परिस्थितियों में भी आत्मा को प्रताड़ित न करे। परीक्षा के लिए सब ब्रह्मचारियों को गुप्त रूप से आभूषण लाने को कहा, जिसे माता-पिता क्या, कोई भी न जाने।

सब छात्र चोरी से कुछ न कुछ आभूषण लेकर लौटे। आचार्य ने वे आभूषण संभालकर रख लिये। अन्त में वाराणसी के राजकुमार ब्रह्मदत्त खाली हाथ लौटे। आचार्य ने उनसे पूछा- 'क्या तुम्हें एकान्त नहीं मिला?' ब्रह्मदत्त ने उत्तर दिया- 'निर्जनता तो उपलब्ध हुई, पर मेरी आत्मा और परमात्मा तो चोरी को देखते ही थे।'

बस आचार्य को वह सत्पात्र मिल गया, जिसकी उन्हें खोज थी।

१. ईश्वर को सर्वत्र विद्यमान देखने वाला कभी अनुचित कार्य नहीं कर सकता।
२. अनुचित कार्य, चाहे जिसने भी आदेश दिया हो, नहीं करना चाहिए। (गुरु की आज्ञा होने पर भी नहीं)।

२२. जीवों को सताना नहीं चाहिये

माण्डव्य ऋषि तपस्या में लीन थे। उधर से कुछ चोर गुजरे। वे राजकोष लूट कर भागे थे। लूट का धन भी उनके साथ था। राजा के सिपाही उनका पीछा कर रहे थे। चोरों ने लूट का धन ऋषि की कुटिया में छिपा दिया और स्वयं भाग गये।

सिपाही जब वहाँ पहुँचे तो चोरों की तलाश में कुटिया के भीतर गये। चोर तो नहीं मिले पर वहाँ रखा धन उन्हें मिल गया। सिपाहियों ने सोचा कि निश्चित ही बाहर जो व्यक्ति बैठा है, वही चोर है। स्वयं को बचाने के लिये साधु का वेष बना, तपस्या का ढोंग कर रहा है। उन्होंने ऋषि को पकड़ लिया और राजा के सामने ले जाकर प्रस्तुत किया। राजा ने भी कोई विचार नहीं किया और न ही पकड़े गये अभियुक्त से कोई प्रश्न किया और सूली पर लटकाने की सजा सुना दी।

माण्डव्य ऋषि विचार करने लगे कि ऐसा क्यों हुआ? यह उन्हें किस पाप की सजा मिल रही है? उन्होंने अपने जीवन का अवलोकन किया, कहीं कुछ नहीं मिला। फिर विगत जीवन का अवलोकन किया। देखते-देखते पूरे सौ जन्म देख लिये, पर कहीं उन्हें ऐसा कुछ नहीं दिखाई दिया जिसके परिणाम स्वरूप यह दण्ड सुनाया जाता। अब उन्होंने परमात्मा की शरण ली। आदेश हुआ, 'ऋषि अपना १०१ वाँ जन्म देखो।' ऋषि ने देखा "एक ८-१० वर्ष का बालक है। उसने एक हाथ में एक कीट को पकड़ रखा है। दूसरे हाथ में एक काँटा है। बालक कीट को वह काँटा चुभाता है तो कीट तड़पता है और बालक खुश हो रहा है। कीट को पीड़ा हो रही है और बालक का खेल हो रहा है।" ऋषि समझ गये कि उन्हें किस पाप का दण्ड दिया जा रहा है।

पर वह तो तपस्वी हैं। क्या उनकी तपस्या भी उनके इस पाप को नष्ट न कर पाई थी? ऋषि विचार ही कर रहे थे कि कुछ लोग जो ऋषि को जानते थे, वे राजा के पास पहुँचे और ऋषि का परिचय देते हुए उनकी निर्दोषता बताई। राजा ने ऋषि से क्षमायाचना करते हुए ऋषि को मुक्त कर दिया।

इतनीं देर में क्या-क्या घट चुका था। भगवान् का न्याय कितना निष्पक्ष है, कितना सूक्ष्म है। इसे तो ऋषि ही समझ रहे थे। मन ही मन उस कीट से क्षमा याचना करते हुए वे पुनः अपनी तपस्या में लीन हो गये।

२३. छोटी आयु में बड़ी सफलता

नेपोलियन ने २५ वर्ष की आयु में इटली नी विजय प्राप्त की थी। न्यूटन ने २१ वर्ष का होने से पूर्व ही अपने महत्वपूर्ण आविष्कार कर डाले थे। विक्टर ह्यूगो जब १५ वर्ष के थे तब तंक उनने कई नाटक लिख लिये थे और तीन पुरस्कार जीते थे। सिकन्दर जब दिग्विजय को निकला तब कुल २२ वर्ष का था। फ्रांस की क्रांति का नेतृत्व करने वाली देवी जौन १७ वर्ष की थी।

झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई जब वीरगति को प्राप्त हुई तब वह केवल २३ वर्ष की थी। स्वामी विवेकानंद ने केवल ३९ वर्ष का जीवन जिया। भगत सिंह को जब फाँसी दी गई तब वे भी केवल २३ वर्ष के थे। गुरू गोबिंदसिंह जी के शहजादों के विषय में तो सभी जानते हैं। वे बाल्यावस्था में ही वीरगति को प्राप्त हो गए थे।

यदि उत्कट इच्छा, अदम्य साहस और प्रबल भावना जागृत हो जाए तो अल्प आयु में भी मनुष्य बहुत कुछ कर सकता है। बहुत कुछ बन सकता है।

बाल प्रबोधन

प्रेरक प्रसंग (भाग- २)

जिन्होंने जीवन ही बदल दिया
(बड़ों के जीवन की कुछ सच्ची घटनाएँ)

जिस प्रकार छोटे-से बीज के भीतर विशाल वृक्ष समाया रहता है, उसी प्रकार बालक के भीतर भी विकसित मानव समाविष्ट रहता है। कदाचित् इसी सत्य को लक्ष्य कर अंग्रेजी के महाकवि वर्डस्वर्थ ने कहा था-"चाइल्ड इज़ द फादर ऑफ द मैन।" अर्थात् बालक में मानव का जनक विद्यमान है। आवश्यकता इस बात की है कि बालक की अन्तर्निहित वृत्तियों और शक्तियों को सहज भाव से विकसित होने का अवसर दिया जाय। कौन जानता है कि बालक किस वृत्ति के विकास से क्या-से-क्या बन जाय! अभिभावकों को चाहिये कि बच्चों के प्रति अपने व्यवहार में वे सजग एवं सावधान रहें।

नीचे हम कतिपय महापुरुषों के जीवन की कुछ छोटी-छोटी घटनाएँ दे रहे हैं। पाठक देखेंगे कि छोटी होने पर भी उन्होंने उन महापुरुषों के जीवन पर कितना गहरा प्रभाव डाला। उनके जीवन को एक दिशा में मोड़ दिया। इन घटनाओं से यह भी स्पष्ट हो जाता है कि बच्चों पर दबाव डालकर उनका निर्माण करने की प्रचलित परिपाटी अत्यन्त दोषपूर्ण है। समझ-बूझकर स्वेच्छा से गलती करके भी बालक अपना जितना विकास कर सकता है, उतना अभिभावकों की सख्ती या ज़ोर-जबरदस्ती से नहीं।

१. संकल्प

वह एक सम्पन्न घर था। घर क्या, आलीशान महल कहिये। वैभव के जितने उपकरण हो सकते हैं, वे सब वहाँ मौजूद थे। मूल्यवान् मेज-कुर्सियाँ, रंग-बिरंगे एक से बढ़कर एक आचरण, दरियाँ, मखमली कालीन, पियानो, रेडियो। वहाँ के समूचे वायुमण्डल में आभिजात्य की भावना व्याप्त थी और यह स्वाभाविक ही था। कारण कि उस भवन के स्वामी सामान्य व्यक्ति नहीं थे। देश के बड़े-बड़े लोगों में उनकी गणना होती थी। दैवयोग से पत्नी भी उन्हें बड़े घर की मिली थी। घर की साज-सज्जा में उनका बड़ा हाथ था।

घर में कई बालक थे, जिनका पालन-पोषण घर के वैभव और प्रतिष्ठा के अनुरूप ही होता था। उनके रहन-सहन, शिक्षा-दीक्षा, बोल-चाल सब में घर का बड़प्पन झलकता था। लेकिन उनमें एक बालक था, जो अन्य बालकों की अपेक्षा कहीं अधिक सुन्दर और प्यारा लगता था। रंग तो-दूसरे बच्चों का भी साफ था, परंतु इस बालक की आकृति में कुछ ऐसा आकर्षण था कि जो भी उसे देखता था, मुग्ध हो जाता था। घर और पड़ोस सबका उसके प्रति असीम प्रेम था। संयोग से बालक का स्वभाव भी अन्य बालकों से कुछ भिन्न था। उस वैभवशाली वायुमण्डल में उसे विशेष रस न था। वह सीधे-सादे ढंग से रहता था और बिना भेद-भाव के सबसे मिलता-जुलता था।

एक दिन अनायास ही घर में कोलाहल मच गया। बात बड़ी नहीं थी। नौकर से चीनी की कुछ मूल्यवान् रकाबियाँ टूट गयीं। अपराध नौकर का नहीं था। वह रकाबियाँ लेकर आ रहा था कि पैर फिसल गया और रकाबियाँ धरती पर गिरकर चूर-चूर हो गयीं। गृह-स्वामी और गृहिणी दोनों ने देखा तो आग-बबूला हो गये। उन्होंने कहनी-अनकहनी सब तरह की बातें उससे कहीं और जब नौकर ने धीमी आवाज में इतना कह दिया 'कि उसने जान-बूझकर थोड़ी तोड़ डाली?' तो उनका पारा और भी चढ़ गया। गृह-स्वामी ने कहा-'अच्छा, तुम यों बाज नहीं आओगे तो मैं तुम्हें थाने भेज देता हूँ।'

इतना कहकर उन्होंने आवेश में थाने के अधिकारी को पत्र लिखा और उसके साथ नौकर को थाने भेज दिया। बेचारे को जाना पड़ा। न जाता तो करता क्या!

थाने में उस पर कोड़ों की मार पड़ी और इतनी कि उसकी देह नीली पड़ गयी। पिट-पिटाकर शाम को जब वह घर लौटा, तब ऐसा लगता था मानो महीनों का बीमार हो। उसका चेहरा पीला पड़ गया था और कोड़ों की मार तथा अपमान के कारण उसके पैर ठीक से नहीं उठते थे। ज्यों ही उसने घर में प्रवेश किया, वही बालक सामने आया। अपने प्यारे नौकर और उसके मुरझाये चेहरे को देखकर बालक ठिठक कर खड़ा हो गया और क्षणभर उसकी ओर देखता-का-देखता रह गया। नौकर की आँखें सूजी हुई थीं और चेतना इतना विवश दीख पड़ता था मानो अभी रो पड़ेगा।

बालक को देखते ही नौकर भी खड़ा हो गया और एक बार उसने निगाह भरकर उसे देखा। वह कुछ कहना चाहता था, पर होंठ नहीं खुले। देखते-देखते उसकी आँखों की बेबसी क्रोध में परिणत हो गयी और उसने मुँह जरा

टेढ़ा करके धीमे पर आवेश भरे स्वर में कहा-'देखते क्या हो बाबू। एक दिन तुम भी ऐसे ही बनोगे।'

बालक का सारा शरीर काँप उठा, जैसे किसी ने उसके शरीर से बिजली का स्पर्श करा दिया हो। उसका हृदय रो पड़ा। मन-ही-मन उसने कहा कि 'हे भगवन! धरती फट-जाय तो मैं उसमें समा जाऊँ।'

नौकर के साथ जो हुआ, उससे बालक पहले ही से बहुत क्षुब्ध था और वह प्रतीक्षा कर रहा था कि कब नौकर लौटे और कब वह उसका हाथ पकड़कर बार-बार चूमे और उसे ढाढ़स बँधाये! लेकिन नौकर लौटा तो उसके मुँह से ऐसे शब्द सुनकर उसका बाल-हृदय एक साथ चीत्कार कर उठा। नौकर मूर्तिवत् खड़ा था मानो स्पन्दनहीन हो और बालक के भीतर भारी तूफान उठ रहा था।

नौकर फिर बोला, 'क्यों बाबू! मैं झूठ कहता हूँ?'

बालक ने अपने सिर को लटका दिया। बोला-'नहीं, नहीं, मैं कदापि ऐसा नहीं करूँगा।' इतना कहकर वह तेजी से आगे बढ़ा और नौकर को अपनी-पतली बाहों में भरकर उसके कपड़ों में उसने अपना मुँह छिपा लिया।

बालक के इस सद् व्यवहार से नौकर का हृदय उमड़ आया। वह अपनी व्यथा को भूल गया।

बचपन का वह संकल्प रूस के महान् अराजकतावादी विचारक प्रिंस क्रोपोट्किन को आजीवन स्मरण रहा और उन्होंने बड़े से बड़ा अपराध होने पर भी अपराधी के प्रति सदा सहानुभूति और करुणा का भाव रखा। करुणा का बीज उनमें पहले से मौजूद था। उक्त घटना से उसे जीवन मिला और वह आगे जाकर लहलहा उठा।

२. प्रायश्चित

वह बारह-तेरह वर्ष का बालक ही तो था। कच्ची बुद्धि थी और साथ अच्छा न था। उसके एक सम्बन्धी सिगरेट पीते थे। उसे भी शौक लगा। सिगरेट से फायदा तो क्या, धुआँ उड़ाना उसे अच्छा लगता था। समस्या आयी कि सिगरेट खरीदने के लिये पैसे कहाँ से आयें बड़ों के सामने न तो वह पी ही जा सकती थी, न खरीदने के लिये उन से पैसे ही माँगे जा सकते थे। तब, क्या हो? नौकरों की जेबें टटोली जाने लगीं और पैसा-धेला जो भी पल्ले पड़ता, उड़ा लिया जाता। बड़े सिगरेट पीकर फेंक देते तो वे टुकड़े बीनकर इकट्ठे कर लिये जाते। किसी ने कह दिया कि एक पेड़ की डंठल होती है, जिसे जलाकर पीने से सिगरेट-सा आनन्द आता है। उसका भी प्रयोग किया गया, लेकिन मजा नहीं आया। मजा तो सिगरेट

पीने में भी नहीं आता था, पर उससे क्या? यह सिलसिला कुछ दिन तक चला, अचानक एक दिन विचार उठा कि ऐसा काम क्यों करना, जो बड़ों से छिपाना पड़े और जिसके लिये चोरी करनी पड़े? बात उठी। और वहीं की वहीं दब गयी।

फिर उभरी और पराधीनता दिन पर दिन खलने लगी। यह भी क्या कि बड़ों की आज्ञा के बिना कुछ न कर सकें? ऐसे जीने से लाभ क्या? इससे तो जीवन का अन्त कर देना ही अच्छा है।

पर करें कैसे? किसी ने कहा था कि धतूरे के बीज खा लेने से मृत्यु हो जाती है। बीज इकट्ठे किये गये, पर खाने की हिम्मत न हुई। प्राण न निकले तो? फिर भी साहस करके दो-चार बीज खा ही डाले, लेकिन उनसे क्या होता था। मौत से वह डर गया और उसने मरने का विचार छोड़ दिया। जान बची, साथ ही एक लाभ यह हुआ कि बीड़ी की जूठन पीने, नौकरों के पैसे चुराने की आदत भी छूट गयी।

दो वर्ष बाद बालक के उस सम्बन्धी-साथी पर २५ का कर्ज हो गया। वह कैसे निकले? जब कोई उपाय दिखायी न दिया, तब सोचा गया कि साथी के हाथ में सोने का जो ठोस कड़ा था, क्यों न उसमें से थोड़ा-सा सोना काटकर बेच दिया जाय और कर्ज चुका दिया जाय? अन्त में यही किया गया। कड़ा कटा, सोना बिका और ऋण से मुक्ति हो गयी।

ऋण से मुक्ति तो हुई, पर वह घटना बालक के लिये असह्य हो गयी। उसने आगे कभी चोरी न करने का निश्चय किया। साथ ही यह भी कि अपनी चोरी को अपने पिता के सामने स्वीकार कर लेगा। यह डर तो था कि पिताजी उसे पीटेंगे, और यह भी कि वे यह सब सुनकर बहुत दुखी होंगे। अगर उन्होंने स्वयं अपना ही सिर पीट लिया, तो जो हो, पर भूल स्वीकार किये बिना मन की व्यथा दूर न होगी।

पिता के आगे मुँह तो खुल नहीं सकता था। तब बालक ने चिठ्टी लिखकर अपना दोष स्वीकार किया। चिठ्टी अपने हाथों ही पिता को दी। उसमें सारा दोष कबूल किया गया था, साथ ही उसके लिये दण्ड माँगा गया था। आगे चोरी न करने का निश्चय भी था।

पिताजी बीमार थे। वे बिस्तर पर लेटे थे। चिट्ठी पकड़ने के लिये उठ बैठे। चिट्ठी पढ़ी। आँखों से आँसू की बूँदें टपकने लगीं। थोड़ी देर के लिये उन्होंने आँखे बंद कर लीं। चिट्ठी के टुकड़े-टुकड़े कर डाले और बिस्तर पर पुनः लेट गये।

मुँह से उन्होंने एक शब्द भी नहीं कहा। बालक अवाक् रह गया। पिता की

वेदना को उसने अनुभव किया और उनकी पीड़ा तथा शान्तिमय क्षमा से वह रो पड़ा।

बड़े होने पर उसने लिखा–'जो मनुष्य अधिकारी व्यक्ति के सामने स्वेच्छापूर्वक अपने दोष शुद्ध हृदय से कह देता है और फिर कभी न करने की प्रतिज्ञा करता है, वह मानो शुद्धतम प्रायश्चित करता है।'

इस बालक से भारत ही नहीं, सारा संसार परिचित है। वह था मोहनदास करमचंद गाँधी।

३. दया

एक बालक कहीं से लौट रहा था। सन्ध्या हो चुकी थी और मार्ग जंगल से होकर था। बालक खेलता-कूदता आ रहा था। अचानक एक पेड़ की नीची टहनी पर क्या देखता है कि एक छोटे से घोंसले में दो अंडे रखे हैं और उन पर एक चिड़िया बैठी है। बालक रुक गया। उसे वे अंडे बड़े अच्छे लगे। देखने में सुन्दर तो थे ही, साथ ही बाल-सुलभ कौतूहल भी था। उसने सोचा कि इन अंडो को ले चलूँ और माँ को दिखाऊँ तो वह बहुत खुश होगी। वह घोंसले की ओर बढ़ा, फिर ठिठका। चिड़िया फुर्र से उड़ गयी। घोंसले के बीच में जरा-सा गद्ढा था, जिसमें एक-दूसरे से सटे दोनों अंडे रखे थे। चिड़िया उड़कर ऊपर की डाल पर जा बैठी और चीं-चीं करने लगी। बालक ने धीरे-धीरे घोंसले की ओर हाथ बढ़ाया और फिर खींच लिया। नहीं, उसे अंडे नहीं उठाने चाहिये। पर क्यों? माँ उन्हें देखकर कितनी प्रसन्न होंगी? और भाई-बहनें? ...कहेंगे कि वाह, क्या बढ़िया चीज लाया है।

उसने जी कड़ा किया और दोनों अंडे हाथ में उठा लिए। चिड़िया जोर से चीत्कार कर उठी, पर बालक रुका नहीं। अंडे धीरे से मुठ्ठी में दबाकर और हाथ को कोट की जेब में डालकर वह घर चला आया।

घर आकर उसने साँस ली। हाँफता हुआ बोला, 'ओ माँ, ओ माँ! देख, कैसी बढ़िया चीज लाया हूँ।'

माँ ने अंडे देखे ओर बालक की आशा के विपरीत उनका चेहरा एकदम गम्भीर हो गया। बोली- 'हाय! तूने यह क्या किया।'

बालक ने कहा-'देखती नहीं कैसे सुन्दर हैं।' माँ कहती गयी, 'तूने यह नहीं सोचा कि चिड़िया कितनी हैरान होगी। वह बार-बार घोंसले पर आकर इन्हें खोजती होगी और अपना सिर पीटती होगी। हाय! तूने यह क्या किया। ...और...अगर लाना ही था तो एक ले आता। कम से कम एक तो उसके लिये छोड़ ही आता।'

बालक को अपनी भूल मालूम हुई, पर अब वह क्या करे? देर जो हो चुकी थी।

माँ रातभर नहीं सो सकी और बालक भी सारी रात सपने में चिड़िया का भयंकर आर्त्तनाद सुनता रहा, उसका फड़फड़ाना देखता रहा।

सबेरे उठते ही वह दौड़ा-दौड़ा गया। बड़ी मुश्किल से उसे वह जगह मिली। उसने देखा कि चिड़िया सूने घोंसले के एक द्वार पर सुस्त-सी बैठी है। शायद रातभर रोते-रोते थक गयी थी।

बालक के आगे बढ़ते ही वह उड़कर दूसरी शाखा पर जा बैठी। बालक ने दोनों अंडे घोंसले में रख दिये और आड़ में खड़े होकर देखने लगा कि आगे क्या होता है?

चिड़िया आयी घोंसले पर बैठ गयी। उसने तिरछी गर्दन करके अंडों को घूरा। बालक को हर्ष हुआ, लेकिन उसने देखा कि चिड़िया की आँखों में वह दुलार नहीं है, जो पहले था। वह चुपचाप घोंसले के किनारे पर टिकी रही, पर अंडो पर नहीं बैठी।

बालक देर तक खड़ा-खड़ा इस हृदयस्पर्शी दृश्य को देखता रहा। उसके जी में आता था कि वह उस वेदना से विह्वल चिड़िया को पकड़ ले और कहे कि मेरे अपराध को क्षमा कर दे और अपने इन पेट के जायों को स्वीकार कर ले। मेरे लिये नहीं, भगवान् के लिये तू एक बार फिर इन्हें अपने पंखों के साये में समेट ले। पर चिड़िया की खोयी ममता फिर नहीं लौटी। निराश बालक घर की ओर चला तो उसका हृदय बहुत भारी था।

जीव दया का यह ऐसा पाठ था कि वह बालक के हृदय पटल पर गहरा अंकित हो गया और जब तक जिया प्राणि-मात्र के प्रति सदा दयावान् बना रहा।

पाठक इस बालक को जानते हैं। वह थे दीनबन्धु एण्ड्रयूज-भारत के अनन्य मित्र और हितैषी।

४. परदुःखकातरता

विश्वविद्यालय के प्राध्यापक अपने उपकुलपति से बहुत हैरान थे। वे विद्यार्थियों को जो भी दण्ड देते, विद्यार्थी उपकुलपति के पास जाते और माफ करा लाते। यों अनुशासन कैसे चलेगा? विद्यार्थी उनकी बात कैसे मानेंगे?

वे काफी दिन तक सहन करते रहे, लेकिन जब उन्होंने देखा कि उपकुलपति के व्यवहार में कोई परिवर्तन होने वाला नहीं है, तब उन्होंने एक दिन उनके पास जाकर शिकायत की 'आप जो करते हैं, उसका प्रभाव संस्था पर अच्छा नहीं पड़ेगा। विद्यार्थी आपको छोड़कर किसी भी अध्यापक की बात नहीं मानेंगे और

हम लोगों को काम करना मुश्किल हो जायगा।' उपकुलपति ने उनकी बात को ध्यान से सुना। फिर कुछ गम्भीर होकर बोले-'आप ठीक कहते हैं, पर क्या आप मेरी विवशता के लिये मुझे क्षमा नहीं करेंगे?'

'कैसी विवशता?' एक अध्यापक ने पूछा।

उपकुलपति थोड़ी देर मौन रहे, मानो वह वहाँ न हों। फिर कुछ सँभलकर बोले- 'अपने बचपन की एक बात मैं भूल नहीं पाता। जब मैं छोटा था, मेरे पिता नहीं रहे थे। माँ थी और घर में बेहद गरीबी थी। मैं स्कूल में पढ़ता था। फीस उन दिनों नाम मात्र को लगती थी, लेकिन वह भी समय पर नहीं निकल पाती थी। माँ चाहती थी कि मैं ढंग के कपड़े पहनकर स्कूल जाऊँ, पर लाती कहाँ से? एक दिन घर में साबुन के लिये पैसा न था। मैं मैले कपड़े पहनकर स्कूल चला गया। अध्यापक आये। उन्होंने क्लास पर एक निगाह डाली। मुझे भी देखा और उनकी निगाह मुझ पर रुक गयी। बोले, 'खड़े हो जाओ।' मैं क्या करता? खड़ा हो गया। बोले इतने गंदे कपड़े पहनकर स्कूल आने में शर्म नहीं आती? मैं तुम पर आठ आना जुर्माना करता हूँ।'

आठ आना! मेरे पैरों के नीचे से धरती खिसक गयी। मुझे अपमान की उतनी चिन्ता न थी जितनी कि इस बात की कि जब घर में साबुन के लिये एक आना पैसा नहीं था तो माँ आठ आने कहाँ से लायेंगी।' कहते-कहते उपकुलपति की आँखें भर आयीं। फिर कुछ सुस्थिर होकर बोले-'तब से मुझे बराबर इस बात का ध्यान रहता है कि विद्यार्थी की पूरी परिस्थिति जाने बिना यदि हम उसे दण्ड देते हैं तो प्रायः उसके साथ अन्याय कर बैठते हैं, दूसरी बात यह कि जब तक आदमी स्वयं कष्ट नहीं पाता, दूसरे के कष्ट को नहीं समझ सकता।'

अध्यापक निरुत्तर होकर चले गये। यह घटना भारतीय राजनीति के पण्डित माननीय श्री निवास शास्त्री के बाल्य-काल की है।

५. निष्काम की कामना

सभी भाँति समझाने, डराने, धमकाने से लेकर प्रलोभन देने तक के उपाय अपना लेने के बाद भी जब प्रह्लाद ने भगवद्भक्ति का आश्रय नहीं छोड़ा तो हिरण्यकशिपु क्रोधाविष्ट होकर बोला, "रे दुष्ट! इस कुल में विष्णु का नाम लेने वाला कोई नहीं हुआ है और तुम ईश्वर-ईश्वर की रट लगाकर कुल मर्यादा भंग किये दे रहे हो। यह अक्षम्य अपराध है।"

"श्रेष्ठ कर्म करने से कुल मर्यादा नहीं टूटती तात्!"प्रह्लाद ने शान्त गम्भीर वाणी में अपने पिता को समझाना चाहा, उन्हें कभी भी कोई भी नमन करे, उससे कुल का गौरव ही बढ़ता है।

उन्मत्त हिरण्यकशिपु की क्रोधाग्नि में प्रह्लाद के इन वचनों ने घी का काम किया और वह गरजता हुआ प्रह्लाद की ओर दौड़ा, मेरी सीख को न समझकर मुझे ही उपदेश देने वाले दुष्ट! तू ऐसे नही मानेगा। तुझ जैसे कुल कलंकी का तो कुल में न होना ही अच्छा।

हिरण्यकशिपु प्रह्लाद को मारने के लिये झपटा। आवेश में सन्तुलन न रह सका और जो घूँसा प्रह्लाद पर वार करने के लिये उठा था, वह उस खम्भे पर पड़ा जिसके सहारे प्रह्लाद खड़ा था। खम्भा टूट गया और उसी खम्बे से प्रकट हुए नृसिंह भगवान् आधा नर और आधा सिंह का रूप धारण किये। उन्होंने हिरण्यकशिपु को पकड़कर अपने तीक्ष्ण नखों से उसका पेट फाड़ डाला।

उस समय भगवान नृसिंह का रौद्र रूप देखकर उपस्थित देवगण तक काँप उठे। सबने अलग-अलग स्तुति की परन्तु किसी का कोई परिणाम नहीं हुआ। देवगण सोचने लगे कि यदि प्रभु का क्रोध शान्त नहीं हुआ। तो अनर्थ हो जायेगा। उन्होंने भगवती लक्ष्मी को भेजा किन्तु लक्ष्मी जी भी वह विकराल रूप देखकर भयभीत हो लौट आईं। अन्त में ब्रह्माजी ने प्रह्लाद से कहा,"बेटा तुम्हीं समीप जाकर उनका क्रोध शान्त करो।"

प्रह्लाद सहज भाव से प्रभु के सम्मुख गये और दण्डवत् प्रणिपात करके उनके सामने लेट गये। भगवान् नृसिंह ने अपने भक्त को सामने देखकर कहा, "वत्स! मैं तुम्हारी भक्ति से प्रसन्न हूँ। तुम्हारी जो इच्छा हो वही वरदान माँग लो।"

"प्रभु! मेरी क्या इच्छा हो सकती है?" प्रह्लाद ने कहा-मुझे कुछ नहीं चाहिये। भगवन्! मुझे कुछ नहीं चाहिये। जो सेवक कुछ पाने की आशा से अपने स्वामी की सेवा करता है, वह तो सेवक ही नहीं है। आप तो परम उदार हैं, मेरे स्वामी हैं और मैं आपका आश्रित-अनुचर। यदि आप कुछ देना ही चाहते हैं तो यह वरदान दें कि मेरे मन में कभी कोई कामना ही उत्पन्न न हो।

'एवमस्तु', भगवान् ने कहा और पुनः आग्रह किया फिर भी प्रह्लाद कुछ तो अपने लिये माँग लो।

प्रह्लाद ने सोचा, प्रभु जब बार-बार मुझ से माँगने के लिये कहते हैं तो अवश्य ही मेरे मन में कोई कामना है। बहुत सोच-विचार करने, मनःमन्थन करने

के बाद भी जब उन्हें लगा कि कुछ भी पाने की आकांक्षा नहीं है तो वह बोले, "नाथ! मेरे पिता ने आपकी बहुत निन्दा की है और आस्तिकजनों को बहुत कष्ट दिया है। वे घोर पातकी रहे हैं। मैं यही चाहता हूँ कि वे इन पापों से छूटकर पवित्र हो जायें।"

भगवान् नृसिंह ने प्रह्लाद को गद्गद् होकर कण्ठ से लगा लिया और उसकी सराहना करते हुये कहा, "धन्य हो बेटा तुम! जिसके मन में यह कामना है कि अपने को कष्ट देने वाले की भी दुर्गति न हो।"

६. सत्य की विजय

काबुल के सम्राट नमरूद ने ऐलान कराया कि वही ईश्वर है, उसी की पूजा की जाय। भयभीत प्रजा ने उसकी मूर्तियाँ बनाईं और पूजा आरम्भ कर दी।

एक दिन राज-ज्योतिषियों ने नमरूद को बताया कि इस वर्ष एक ऐसा बालक जन्मेगा जो उसके ईश्वरत्व को चुनौती देने लगेगा।

सम्राट को यह बात अखरी और उसने उस वर्ष जन्मने वाले सब बालकों को मार डालने की आज्ञा, दे दी। बालक ढूँढ़-ढूँढ़ कर मारे जाने लगे। नमरूद की मूर्तियाँ गढ़ने वाले कलाकार आजर की धर्म-पत्नी को भी प्रसव हुआ और सुन्दर पुत्र जन्मा। मातृ-हृदय बालक की रक्षा के लिये व्याकुल हो गया। वह उसे लेकर पहाड़ की एक गुफा में गई और वहीं उसका लालन-पालन करने लगी।

बालक बन्द गुफा में बढ़ने लगा। धीरे-धीरे वह पाँच वर्ष का हो गया। एक दिन उसने माता से पूछा-हम लोग जहाँ रहते हैं, क्या उससे बड़ा इस दुनिया में और कुछ है? माता ने बालक को संसार के विस्तार के बारे में बहुत कुछ बताया और कहा इस सबका निर्माता एक ईश्वर है। बालक ईश्वर के दर्शन करने के लिये व्यग्र रहने लगा।

एक दिन अवसर पाकर बालक गुफा से बाहर निकला, सबसे पहले उसने उन्मुक्त आकाश को देखा। रात्रि का अंधकार छाया हुआ था। उसे एक चमकता हुआ तारा दिखाई दिया। बालक ने सोचा, हो न हो यही ईश्वर होगा। थोड़ी देर में तारा अस्त हो गया और चाँद निकला।

बालक सोचने लगा कम प्रकाश वाला तारा ईश्वर नहीं, अधिक चमकने वाला यह चाँद ईश्वर होना चाहिये। थोड़ी देर में रात समाप्त हुई, चन्द्रमा डूबा और सूरज निकल आया और दिन गुजरते-गुजरते उसके भी डूबने की तैयारी होने लगी।

बालक इब्राहीम के मन में भारी उथल-पुथल मची। उसने सोचा जो बार-बार डूबता और उदय होता है, ऐसा ईश्वर नहीं हो सकता। वह तो ऐसा होना चाहिये जो न जन्मे और न मरे। विचार ने विश्वास का रूप धारण किया। ईश्वर का स्वरूप उसकी समझ में आ गया। इब्राहीम ने ईश्वर-चिन्तन का व्रत लिया और साधुओं की तरह न जन्मने और न मरने वाले ईश्वर की उपासना करने के लिये प्रचार करने लगा। नमरूद को पता चला कि उसकी सत्ता को चुनौती देने वाला कोई फकीर पैदा हो गया है, तो उसने इब्राहीम को पकड़ बुलाया और अनेक यन्त्रणायें देने लगा। जब इब्राहीम के विचार नहीं बदले, तो उसे जलती आग में पटक कर मार डालने का आदेश हुआ।

अग्नि प्रकोप से बचाने में सहायता करने के लिये जब देवता इब्राहीम के पास पहुँचे, तो उन्होंने यह कहकर वह सहायता अस्वीकार कर दी कि सत्य की निष्ठा कष्ट सहने से ही परिपक्व होती है और आत्मा का तेज परीक्षा के बाद ही निखरता है। मुझे अपनी निष्ठा की परीक्षा कष्ट सहने के द्वारा देने दीजिये। मेरा आत्मबल विचलित न हो, यदि ऐसी सहायता कर सकें तो आपका इतना अनुग्रह ही पर्याप्त है।

अन्त में सत्य ही जीता। नमरूद का गर्व गल गया। इब्राहीम अपनी सत्यनिष्ठा के कारण और अधिक चमके। नमरूद नहीं रहा, पर इब्राहीम की ईश्वर विवेचना आज भी बहु-संख्यक मनुष्यों के हृदय में स्थान प्राप्त किए हुये है। बल नहीं जीतता और न आतंक ही अन्त तक ठहरता है। असत्य कितना ही साधन सम्पन्न क्यों न हो वह सत्य के आगे ठहर नहीं पाता। साधनहीन होते हुये भी सत्य, सुसम्पन्न असत्य से कहीं अधिक सामर्थ्यवान होता है। विजय असत्य की नहीं सत्य की ही होती है।

७. 'ब्रह्म तेजो बलं बलम्'

विश्वामित्र तब तक एक क्षत्रिय राजा थे। उनका प्रचंड प्रताप दूर-दूर तक प्रख्यात था। शत्रुओं की हिम्मत उनके सम्मुख पड़ने की न होती थी। दुष्ट उनके दर्प से थर-थर काँपा करते थे। बल में उनके समान दूसरा उस समय न था।

एक दिन राजा विश्वामित्र शिकार खेलते-खेलते वशिष्ठ मुनि के आश्रम में जा पहुँचे। मुनि ने राजा का समुचित आतिथ्य-सत्कार किया और अपने आश्रम की सारी व्यवस्था उन्हें दिखाई। राजा ने नन्दिनी नामक उस गाय को भी देखा, जिसकी प्रशंसा दूर-दूर तक हो रही थी। यह गाय प्रचुर मात्रा में अमृत के समान गुणकारी दूध तो देती ही थी, साथ ही उसमें और भी दिव्य गुण थे, जिस स्थान पर

वह रहती वहाँ देवता निवास करते और किसी बात का घाटा न रहता। सुन्दरता में तो अद्वितीय ही थी। राजा विश्वामित्र का मन इस गाय को लेने के लिए ललचाने लगा। उन्होंने अपनी इच्छा मुनि के सामने प्रकट की पर उन्होंने मना कर दिया। राजा ने बहुत समझाया और बहुत से धन का लालच दिया पर वशिष्ठ उस गाय को देने के लिए किसी प्रकार तैयार न हुए। इस पर विश्वामित्र को बहुत क्रोध आया। मेरी एक छोटी-सी बात भी यह ब्राह्मण नहीं मानता। यह मेरी शक्ति को नहीं जानता और मेरा तिरस्कार करता है। इन्हीं विचारों से अंहकार और क्रोध उबल आया। रोष में उनके नेत्र लाल हो गये। उन्होंने सिपाहियों को बुलाकर आज्ञा दी कि जबरदस्ती इस गाय को खोलकर ले चलो। नौकर आज्ञा पालन करने लगे।

वशिष्ठ साधारण व्यक्ति न थे। उन्होंने कुटी से बाहर निकलकर निर्भयता की दृष्टि से सबकी ओर देखा। अकारण मेरी गाय लेने का साहस किसमें है, वह जरा आगे तो आए। यद्यपि उनके पास अस्त्र-शस्त्र न थे, अहिंसक थे तो भी उनका आत्मतेज प्रस्फुटित हो रहा था।

विश्वामित्र विचार करने लगे। भौतिक वस्तुओं का बल मिथ्या है। तन, मन की शक्ति बहुत ही तुच्छ, अस्थिर और नश्वर है। सच्चा बल तो आत्मबल है। आत्मबल से आध्यात्मिक और पारलौकिक उन्नति तो होती ही है, साथ ही लौकिक शक्ति भी प्राप्त होती है। मैं इतना पराक्रमी राजा, जिसके दर्प को बड़े-बड़े शूर-सामन्त सहन नहीं कर सकते। इस ब्राह्मण के सम्मुख हत-प्रभ होकर बैठा हूँ और मुझसे कुछ भी बन नहीं पड़ रहा है। निश्चय ही तनबल, धनबल की अपेक्षा आत्मबल अनेकों गुनी शक्ति रखता है। उन्होंने निश्चय कर लिया कि भविष्य में वे सब ओर से मुँह मोड़कर आत्मसाधना करेंगे और ब्रह्मतेज को प्राप्त करेंगे। ब्रह्म तेज पर वे इतने मुग्ध हुए कि अनायास ही उनके मुँह से निकल पड़ा **'धिक् बलं, क्षत्रिय बलं, ब्रह्मतेजो बलंबलम्।'** क्षत्रिय बल तुच्छ है, बल तो ब्रह्म तेज ही है। उसी दिन विश्वामित्र ने संकल्प किया और घोर तपस्या में जुट गए व ब्रह्म तेज को प्राप्त किया।

८. दैवी प्रतिशोध

सूर्यास्त के बाद अन्धकार घना होता जा रहा था। अरब की मरुभूमि में रातें भी बड़ी भयावह लगा करती हैं। ऐसे ही रेतीले सुनसान स्थान पर यात्री को एक झोंपड़ी दिखाई दी, जिसमें कोई व्यक्ति गीत गा रहा था। यात्री एक क्षण को रुका और गीत के बोल सुनने लगा।

यात्री को झोंपड़ी में रहने वाली वृद्ध पुरुष की आकृति जानी-पहचानी लगी। स्मृतियाँ उघड़ती गयीं और उसे याद आया कि इस व्यक्ति से उसका निकटतम सम्बन्ध रह चुका है। झोंपड़ी में रहने वाला वृद्ध व्यक्ति युसुफ के नाम से जाना जाता था, जो अपने समय के बहुत ही विख्यात सन्त थे। यात्री ने यूसुफ से कहा- "मैं समाज द्वारा बहिष्कृत एक पापी हूँ। सभी ने मुझे अधम कहकर मेरा परित्याग कर दिया। राज कर्मचारी मुझे पकड़कर दण्डित करने के लिए मेरा पीछा कर रहे हैं। आज की रात आपके घर में गुजारने का मौका मिल जाय तो बड़ी दया होगी। युसुफ आप तो अपनी दया के लिये संसार भर में प्रसिद्ध हैं।"

युसुफ ने बड़ी विनम्रतापूर्वक कहा-"भद्र पुरुष। यह घर मेरा नहीं उस परमात्मा का ही है। इसमें तुम्हारा भी उतना ही अधिकार है जितना कि मेरा। मैं तो इस देह का भी स्वामी नही हूँ, यह भी एक धर्मशाला है। तुम प्रसन्नतापूर्वक जो चाहे तब तक यहाँ रहो।"

वह अन्दर खाना खाने के लिए चला गया। अभ्यागत को भरपेट भोजन करवाकर सोने के लिए बिस्तर लगा दिया और बिना परिचय पूछे ही सो जाने के लिए कहा।

प्रातःकाल हुआ। पूर्व दिशा में अरुणिमा फैलने लगी और पक्षियों का कलरव गूँजने लगा। यूसुफ उठ गये थे और नहा-धोकर अतिथि के जागने का इन्तजार कर रहे थे। उधर अतिथि कई दिनों का थका हारा होने के कारण चैन की नींद ले रहा था। यूसुफ अतिथि के पास गये और धीरे से जगाकर बोले-"उठो भाई, सूरज उग आया है। तुम्हारी सुविधा के लिये मैं थोड़ा-बहुत धन लाया हूँ, उसे लेकर द्रुतगामी घोड़े पर सवार होकर दूर चले जाना ताकि तुम अपने शत्रुओं की पहुँच से बाहर निकल सको।"

इस सत्पुरुष के मुखमण्डल पर हार्दिक पवित्रता 'शीतल' रजनी चन्द्रिका की भाँति फैली हुई थी। उनके शब्द जैसे अन्तःकरण से निकलकर आ रहे थे तभी तो उनका व्यवहार इतना दिव्य बन पड़ा था। इस दिव्य व्यवहार के प्रभाव स्वरूप ही आगन्तुक के हृदय में भी पवित्र और सात्विक विचारों का प्रवाह बहने लगा था। अतिथि को अपना पूरा विगत स्मृत हो आया और लगा कि पापपूर्ण प्रवृत्तियों की कालिमा पश्चाताप के रसायन से स्वच्छ होती जा रही हैं और उनके स्थान पर निर्मल भावों की तरंगें उठने लगी हैं।

पृथ्वी पर घुटने टेक यूसुफ के चरणों में झुककर अतिथि ने कहा-"हे शेख! आपने मुझे शरण दी, भोजन दिया, शान्ति दी और पवित्रता भी दी, अब आपके

प्रति कृतज्ञता के लिये क्या कहूँ? मैं कैसे कहूँ कि यह उपकार पापी इब्राहीम के लिए किया है, जो आपके बड़े पुत्र का हत्यारा है। हमारे कबीलों में हत्यारे को शिरच्छेद कर को मृतात्मा शांति पहुँचायी जाती है, आप भी उसी परम्परा का पालन कीजिए।"

इब्राहीम यह कहकर मौन हो गया, परन्तु यूसुफ ने तो उसे भगाने में और भी जल्दी की क्योंकि वे डरने लगे थे-अपने आप से कहीं अपने पुत्र के हत्यारे का वध करने के लिए पाशविक प्रतिशोध न जाग पड़े। वे बोले-तब तो तुम और भी जल्दी चले जाओ। कहीं मैं प्रतिशोध के कारण कर्त्तव्य भ्रष्ट न हो जाऊँ।

इब्राहीम चला गया और यूसुफ ने अपने दिवंगत पुत्र को सम्बोधित करते हुए कहा-"मैं तेरे लिये दिन-रात तड़पता रहा हूँ। आज मैंने तेरा बदला ले लिया है। तेरे हत्यारे की नृशंस भावना पश्चाताप की अग्नि में जलकर नष्ट हो गयी है और उसका हृदय पवित्र हो गया। अब तू शान्ति की चिरनिद्रा में सो जा।"

९. मंगलामंगलम्

भवन अमंगल-मकड़ियों ने जहाँ-तहाँ जाले बुन रखे हैं, शिशुओं का शौच दुर्गन्ध फैला रहा है- पशुओं ने सर्वत्र गोबर फैला रखी है, सर्वत्र, अस्वच्छता, अमंगल ऐसे घर में रहना तो नर्क में रहना है। दिन भर यही विचार उठता रहता, श्रुतिधर बेचैन हो उठे, यह भवन अमंगल है कह कर एक दिन उन्होंने गृह-परित्याग किया और समीप के एक गाँव में जाकर रहने लगे। ग्रामवासी निर्धन हैं, अशिक्षित हैं मैले-कुचैले वस्त्र पहनकर सत्संग में सम्मिलित होते हैं। गाँव की गन्दगी ने पुनः श्रुतिधर के मन में पीड़ा भर दी। ग्राम भी अमंगल है- इस अमंगल में कैसे जिया जाए? श्रुतिधर ने उसका भी परित्याग किया और निर्जन वन में एक वृक्ष के नीचे एकाकी कुटी बनाकर रहने लगे।

रात आनंद और शान्ति के साथ व्यतीत हो गई किन्तु प्रातःकाल होते ही पक्षियों का कलरव, कुछ जंगली जीव उधर से गुजरे थे कुटी के बाहर उन्होंने आखेट किये जीवों की हड्डियाँ छोड़ दी थीं, आशंका से ओत-प्रोत श्रुतिधर के अन्तःकरण को आकुलित करने के लिए इतना ही पर्याप्त था, उन्हें वन में भी अमंगल के ही दर्शन हुए। अब क्या किया जाए वे इसी चिन्ता में थे तभी उन्हें सामने बहती हुई श्वेत सलिला सरिता दिखाई दी, उन्हें आनन्द हुआ, विचार करने लगे यह नदी ही सर्वमंगल सम्पन्न है सो कानन-कुटी का परित्याग कर वे उस शीतल, पयस्विनी के आश्रय में चल पड़े।

शीतल जल के सामीप्य से उन्हें सुखद् अनुभूति हुई, अंजुलि बाँधकर उन्होंने जल ग्रहण किया तो अन्तःकरण प्रफुल्लित हुआ, पर इस तृप्ति के क्षण अभी पूरी तरह समाप्त भी नहीं हो पाये थे कि उन्होंने देखा एक बड़ी मछली ने आक्रमण किया और छोटी मछली को निगल लिया, इस उथल-पुथल से सरिता के तट पर हिलोर पहुँची-जिससे वहाँ रखे मेढकों-मच्छरों के अण्डे बच्चे पानी में उतराने लगे अभी यह स्थिति भी न हो पाई थी कि ऊपर से बहते-बहते किसी श्वान का शव उनके समीप आ पहुँचा। यह दृश्य देखते ही श्रुतिधर का हृदय घृणा से भर गया। उन्हें उस नदी के जल में भी अमंगल के ही दर्शन हुए।

अब कहाँ जाया जाए? इस प्रश्न ने श्रुतिधर को झकझोरा! वन, पर्वत, आकाश सभी तो अमंगल से परिपूर्ण हैं उनका हृदय उद्वेलित हो उठा। इससे अच्छा तो यही है, कि जीवन ही समाप्त कर दिया जाए, अमंगल से बचने का एक ही उपाय उनकी दृष्टि में शेष रहा था।

श्रुतिधर ने लकड़ियाँ चुनीं, चिता बनाई, प्रदक्षिणा की और उस पर आग लगाने लगे तभी उधर कहीं से वासुकी आ पहुँचे। यह सब कौतुक देखकर उन्होंने पूछा- "तात्! तुम क्या कर रहे हो?" दुःख भरे स्वर में श्रुतिधर ने अपनी अब तक की सारी कथा सुनाई और कहा- "जिस सृष्टि में सर्वत्र अमंगल ही अमंगल हो उसमें रहने से तो मर जाना अच्छा।"

वासुकी मुस्काराये, एक क्षण चुप रहे फिर मौन भंग करते हुए बोले- "वत्स तुम चिता मे बैठोगे, तुम्हारा शरीर जलेगा, शरीर में भरे मल भी जलेंगे, उससे भी अमंगल ही तो उपजेगा, उस अमंगल में क्या तुम्हें शान्ति मिल पायेगी?'

तात्। सृष्टि में अमंगल से मंगल कहीं अधिक है घर में रहकर सुयोग्य नागरिकों का निर्माण गाँव में शिक्षा संस्कृति का विस्तार, वन में उपासना की शान्ति और जल में दूषण का प्रच्छालन प्रकृति की प्रेरणा यही तो है कि सृष्टि में जो मंगल है उसका अभिसिंचन,. परिवर्द्धन और विस्तार हो, जो अमंगल है, उसका शुचि-संस्कार, यदि तुम इसमें जुट पड़ो तो अशान्ति का प्रश्न ही शेष न रहे। श्रुतिधर को यथार्थ का बोध हुआ वे घर लौट आये और मंगल की साधना में जीवन बिताने लगे।

१०. सत्यनिष्ठ बालक

अपने शयनागार में सोये हुए महाराज छत्रपति शिवाजी के निकट पहुँचकर वह बालक तलवार का प्रहार करने ही वाला था कि सेनापति तानाजी ने उसे देख लिया और लपककर उसका हाथ पकड़ लिया धक्का देकर जमीन पर गिरा दिया।

धमाका सुनकर महाराज शिवाजी जाग पड़े। देखा कि तानाजी द्वारा एक बालक पकड़ा हुआ है, जो उन्हें मारने के लिए किसी प्रकार शयनागार में घुस आया था, पकड़ा हुआ बालक निर्भीकता से खड़ा हुआ था। शिवाजी ने उससे पूछा-'तुम कौन हो? और यहाँ किसलिए आये थे?'

बालक ने कहा-मेरा नाम मालोजी है और मैं आपकी हत्या करने के लिए यहाँ आया था। महाराज ने पूछा-तुम नहीं जानते हो कि इसके लिए तुम्हें क्या दण्ड मिलेगा?

"जानता हूँ महाराज! मृत्युदण्ड" बालक ने उत्तर दिया।

तो इतना जानते हुए भी तुम मेरी हत्या करने क्यों आये? क्या तुम्हें अपने प्राणों का मोह नहीं था, मालो। शिवाजी ने उससे पूछा।

बालक ने अपनी सारी कथा कह सुनाई। उसने कहा-"मेरे पिता आपकी सेना में नौकर थे, वे एक युद्ध में मारे गये। पीछे राज्य से हम लोगों को कोई सहायता न मिली। अब हम माँ-बेटे बड़े कष्ट से जीवन काट रहे है। माँ तो कई रोज से बीमार पड़ी है, घर में अन्न का एक दाना भी न होने के कारण हम लोगों को कई फाके हो गये।" बालक की आँखे छलक आईं, उसने अपने वृत्तान्त को जारी रखते हुए कहा-मैं भोजन की तलाश में घर से बाहर निकला था कि आपके शत्रु सुभागराय ने मुझे बताया, कि शिवाजी कितना निष्ठुर है, जिसकी सेवा में तेरे पिता की मृत्यु हुई उस शिवाजी से बदला लेना चाहिए, यदि तू उन्हें मार आवेगा, तो मैं तुझे बहुत-सा धन दूँगा। यह बात मुझे उचित प्रतीत हुई और मैं आपकी हत्या के लिये चला आया।

तानाजी ने कहा- "दुष्ट! तेरे कुकृत्य से महाराष्ट्र का दीपक बुझ गया होता, अब तू मरने के लिए तैयार हो जा।"

तैयार हूँ! मृत्यु से मैं बिल्कुल नहीं डरता, पर एक बात चाहता हूँ कि मृत्यु शय्या पर पड़ी हुई माता के चरण स्पर्श करने की एक बार आज्ञा मिल जाय। माता के दर्शन करके सबेरे ही वापस लौट आऊँगा। बालक ने उत्तर दिया।

शिवाजी ने कहा- यदि तुम भाग जाओ और वापस न आओ तो?

बालक ने गम्भीरतापूर्वक उत्तर दिया-मैं क्षत्रिय पुत्र हूँ, वचन से नहीं लौटूँगा। महाराज ने मालोजी को घर जाने की आज्ञा दे दी।

दूसरे दिन सवेरे ही मालोजी दरबार में उपस्थित था, उसने कहा-महाराज। मैं आ गया, अब मृत्यु दण्ड के लिए तैयार हूँ।

शिवाजी का दिल पिघल गया। ऐसे चरित्रवान बालक को दण्ड दूँ, न मुझसे

यह न होगा। महाराज ने बालक को छाती से लगा लिया और कहा-"तेरे जैसे उज्जवल रत्न ही देश और जाति का गौरव बढ़ा सकते हैं, मालो। तुझे मृत्युदण्ड नहीं, सेनापति का पद प्राप्त होगा। तेरी सत्यनिष्ठा को सम्मानपूर्ण गौरव से पुरस्कृत किया जायेगा।"

११. अपनी कमाई-सदा काम आई

राजा जनमेजय प्रति माह कुछ समय राज्य में यह देखने के लिए भ्रमण किया करते थे कि उनकी प्रजा को किसी प्रकार कष्ट तो नहीं है। विकास की जो योजनाएँ क्रियान्वित की जाती हैं, उनका परिपालन होता है या नहीं? उनका लाभ नागरिकों को मिलता है या नहीं?

वे एक गाँव से गुजर रहे थे। छद्म वेश में थे, इसलिए कोई पहचान नहीं सका। एक जगह, लड़के खेल, खेल रहे थे। एक लड़का उनमें शासक बनकर बैठा था, सभासद बने लड़के सामने बैठे थे। शासक का अभिनय करने वाला लड़का, जिसका नाम कुलेश था, खड़ा सभासदों को व्याख्यान दे रहा था- "सभासदों! जिस राज्य के कर्मचारीगण वैभव-विलास में डूबे रहते हैं, उसका राजा कितना ही नेक और प्रजावत्सल क्यों न हो, उस राज्य की प्रजा सुखी नहीं रहती। मैं चाहता हूँ, जो भूल जनमेजय के राज्याधिकारी कर रहे हैं, वह आप लोग न करें, ताकि मेरी प्रजा असन्तुष्ट न हो। तुम सबको वैभव-विलास का जीवन छोड़कर जीना चाहिए। जो ऐसा नहीं कर सकता वह अभी शासन सेवा से अलग हो जाय।"

सभासद तो अलग न हुए पर बालक की यह प्रतिभा उसे ही वहाँ से अवश्य खींच ले गई। जनमेजय उससे बहुत प्रभावित हुए और उसे ले जाकर महामन्त्री बना दिया। कुलेश युवक था तो भी वह बड़ी सूक्ष्म दृष्टि से राज्य कार्यो में सहयोग देने लगा। सामान्य प्रजा से उठकर जब वह महामन्त्री बनने चला था, तब उसके पास एक कुदाली, लाठी और एक उतरीय वस्त्र अँगोछे के अतिरिक्त कुछ नहीं था, वह इन्हें अपने साथ ही लेता गया।

उसके प्रधानमंत्रीत्व काल में अन्य मन्त्रियों सामन्तों एवं राज्य कर्मचारियों के लिए आचार-संहिता बनाई गई, जिसके अनुसार प्रत्येक पदाधिकारी को दस घण्टे अनिवार्य रूप से कार्य करना पड़ता था। अतिरिक्त आय के स्रोत बन्द कर दिये गये, इससे बचा बहुत-सा धन प्रजा की भलाई मे लगने लगा। सारी प्रजा में खुशहाली छा गई। जनमेजय कुलेश के आदर्श व प्रबन्ध से बड़े प्रसन्न हुए।

लेकिन शेष सभासद, जिनकी आय व विलासितापूर्ण जीवन को रोक लगी थी, महामन्त्री कुलेश से जल उठे और उसे अपदस्थ करने का षड्यन्त्र रचने लगे।

उन्हें किसी तरह पता चल गया कि महामन्त्री के निवास स्थान पर एक कक्ष ऐसा भी है, जहाँ वह किसी भी व्यक्ति को जाने नहीं देता, जब वह दिन भर के काम से लौटता है, तब स्वयं ही कुछ देर उसमें विश्राम करता है।

सभासदों ने इस रहस्य को लेकर ही जनमेजय के कान भर दिए कि कुलेश ने बहुत-सी अवैध सम्पत्ति एकत्रित कर ली है। महाराज उनके कहने में आ गये अतएव जाँच का निश्चय कर एक दिन वे स्वयं सैनिकों सहित कुलेश के निवास पर जा पहुँचे। सब ओर घूमकर देखा पर महाराज को सम्पत्ति के नाम पर वहाँ कुछ भी तो नहीं दिखा, तभी उनकी दृष्टि उस कमरे में गई, वे समझे कुलेश निश्चय ही अपनी कमाई इसमें रखता है।

महाराज ने पूछा-"कुलेश! तुम इस कक्ष में एकान्त में क्या किया करते हो?" इनकी पूजा महाराज! उसने उत्तर दिया। कुदाली मुझे सदैव परिश्रम के प्रेरणा देती है और लाठी स्वजनों की सुरक्षा की उत्तरीय वस्त्र की पूजा मैं इसलिए करता हूँ कि घर हो या बाहर यही बिछौना मेरे लिए पर्याप्त है। यह कहकर कुलेश ने तीनों वस्तुएँ उठा लीं और फिर उसी ग्रामीण जीवन में चला गया।

महाराज जनमेजय को सभासदों के षड्यन्त्र का दुःख अब भी बना हुआ है, वह तब दूर हो जब कुलेश जैसे राज्य कर्मचारी देश में उत्पन्न हों।

१२. लोकरंजन के लिए नहीं, लोकमंगल के लिए

घर के सब लोग सो चुके थे। पर रसोईघर में दीपक का मन्द प्रकाश अभी टिमटिमा रहा है। इसी दीपक तले बैठा एक चौदह वर्षीय बालक जमीन पर खड़िया से चित्र बना रहा था।

आधी रात इसी प्रकार बीत गयी। नींद आने लगी, तो वह कमरे में सोने चला गया और यह सोचकर प्रसन्न हो रहा था कि प्रातः जब लोग मेरे मर्मस्पर्शी चित्र को देखेंगे, तो खुश होंगे, पुरस्कार देंगे।

सुबह हुई। बालक प्रतिक्रिया जानने पिता के पास यह सोचते हुए पहुँचा कि आज यदि पुरस्कार मिला, तो सबसे पहले वह उससे एक तूलिका और कुछ रंग-रोगन खरीदेगा एवं कागज पर चित्रकारी करेगा। पिता के समक्ष जब वह उपस्थित हुआ तो इनाम की जगह मिला उसे एक जोरदार तमाचा और अपमान भरे भद्दे शब्द-चित्रकार बनने चला है। अरे! पहले यह भी सोचा है कि तेरे इस पेट को

भरेगा कौन? चितेरा ही बनना है, तो पहले अपने इस पेट को भरने का उपाय कर फिर अपनी कलाकारी दिखाना अन्यथा निकल जा इस घर से। मैं इतना धनी-मानी नहीं, जो तुम्हें बिठाकर खिला सकूँ और तुम्हें हाथ भी न हिलाना पड़े।

बालक अभी था तो किशोरावस्था की दहलीज में ही पर इतना अबोध भी नहीं कि मान-अपमान भी न समझ सके। स्वाभिमान जगा तो घर और घरवालों को सदा-सदा के लिए तिलांजलि देकर निकल पड़ा, आजीविकोपार्जन के लिए। थोड़े से ही प्रयास से बालक राउल्ड को पेरिस के स्टेन्ले ग्लास मेकर कम्पनी में नौकरी मिल गयी। प्रतिमाह 4 फ्रेंक इस छोटी सी नौकरी से ही उसने किराये का एक छोटा सा मकान लिया और किसी प्रकार अपनी गुजर करने लगा। मितव्ययिता निर्वाह से पाँच महीने में उसने इतनी राशि इकट्ठी कर ली, जिससे कैनवास, स्टैण्ड, ब्रुश और रंग खरीदा जा सके। बस, फिर उसने चिरइच्छित अपनी चित्रकारी शुरू कर दी।

बालक राउल्ड बड़ा संवेदनशील था। वह चित्र के माध्यम से मानवीय संवेदनाओं को उभारना चाहता था। चूँकि वह अल्पशिक्षित था, अतः मानवीय करुणा को मूर्तिमान कर दूसरों के अन्तःकरण को छूने और पीड़ा का आभास दिलाने का एक मात्र आधार भी तो यही था, इसीलिए अपनी इस कला को और अधिक निखारने और जीवन्त बनाने के लिए पेरिस के नेशनल आर्ट इंस्टीट्यूट में उसने दाखिला ले लिया।

कहते हैं कि यदि सोने में सुगन्ध होती, तो अपनी चमक-दमक से वह चन्दन को भी फीका कर देता। राउल्ड के साथ ऐसा ही हुआ। सोने में सुगन्ध का सम्मिलन, जब वह प्रशिक्षण लेकर बाहर निकला तो मानवता के प्रति उसके हृदय में कसक और वेदना थी, वह उसकी तूलिका से ऐसी उभरी, मानो साक्षात् मानवीय करुणा को उठाकर कैनवास पर रख दिया हो। उसने पहला चित्र प्रशिक्षण लेने के बाद बनाया, वह एक ऐसी पीड़ित नारी का था, जिसके पाँवों के घावों पर मरहम पट्टी करते हुए एक सुहृदय की सौजन्यता को दर्शाया गया था। दूसरी तस्वीर उसने एक गाय को ऊँट के बच्चे को दूध पिलाते हुए बनायी थी। तीसरा चित्र उसने एक भूख से बिलबिलाते प्राण त्यागते बालक का बनाया था। इसी प्रकार उसने ढेर सारी तस्वीरें बनायीं, जो समाज की किसी न किसी समस्या का प्रतिनिधित्व करती थीं, जो भी उन चित्रों को देखता, आह निकले बिना न रहती। हाय! ऐसी दुर्दशा है हमारे समाज की लोगों के मुँह से बरबस उस समय वेदना फूट पड़ती।

एक बार राडल्ड के एक घनिष्ठ मित्र ने उसे सलाह दी-राउल्ड! यह क्या समाज की घिसी-पिटी समस्याओं को लेकर चित्र बनाते हो। शायद इसीलिए तुम्हारे चित्र दूसरों की तुलना में अधिक नहीं बिकते। मेरा कहा मानो तो मार्डन तस्वीर बनाओ, फिर देखो तुम रातों-रात किस तरह चमकते हो?

यह मार्डन तस्वीर क्या बला होती है? राउल्ड ने उत्सुकतावश पूछा, क्योंकि इस नये शब्द को उसने पहली बार सुना था।

वही जो दूसरों की समझ में न आये। मित्र ने स्पष्ट किया।

जो दूसरों की समझ में ही न आये, वैसी तस्वीर बनाने का क्या तात्पर्य, उससे समाज को क्या लाभ?'

शायद तुमने एक शायर की यह पंक्तियाँ नहीं सुनीं।

"कौन सी?" राउल्ड ने पूछ लिया।

"वही तस्वीर कलामय है, जिसे आलिम तो क्या समझे।

अगर सौ साल सर मारे, तो शायद ही खुदा समझे।"

आज मार्डन आर्ट की परिभाषा यही है और एक बात और! तुम समाज के हानि-लाभ के व्यापार में मत पड़ो। अपने नफे-नुकसान की बात सोचो।

बस तुम्हारे-हमारे विचारों में यही सबसे बड़ा अन्तर है। राउल्ड ने कहा-तुम अपने हानि-लाभ के लिए अपनी यश कीर्ति के लिए काम करना चाहते हो, जबकि हमारा मत ठीक इसके विपरीत है। मैं हर कार्य को करने से पूर्व यह सोचता हूँ कि इससे समाज को क्या और कितना लाभ मिलेगा, भले ही उसमें हमें व्यक्तिगत रूप से हानि उठानी पड़े।

इसलिए प्रिय बन्धु! मैं समाज के समस्यामूलक चित्रों को बनाना न छोड़ूँगा, भले ही वे न बिकें और मेरा उद्देश्य भी पैसा कमाना नहीं है। मैं इन चित्रों की जगह-जगह प्रदर्शनी लगाकर समाज की विभिन्न समस्याओं के प्रति जनचेतना उभारूँगा और लोगों को उनके प्रति जागरूक करूँगा? भड़ाकने और यौन-उन्माद उत्पन्न करने अथवा प्रेरणाहीन तथाकथित आधुनिक चित्र बनाने को मैं कला की श्रेणी में नहीं गिनता। यही मेरा अन्तिम निर्णय और निश्चय है।

मित्र उसके तर्क के आगे नतमस्तक हो गया। कभी फ्रांस में मूक क्रांति लाने वाले इस चित्रकार की क्रान्तिधर्मी तस्वीरें आज भी पेरिस के मोरियो गुटराव संग्रहालय में सुरक्षित पड़ी हैं। यद्यपि आज इन चित्रों का सृष्टा तो न रहा, किन्तु काश कोई उसकी प्रेरणा को ग्रहण कर उसके अधूरे आन्दोलन को पूरा करे।

काश! आधुनिक चित्रकार उनकी अन्त:पीड़ा को समझकर उनकी आदर्शवादी लीक पर चल सकते तो सामाजिक समस्याओं के प्रति जन-जागृति लाने में काफी मदद मिलती।

१३. प्रतिकूलताओं ने प्रशस्त किया सफलता का पथ

अमेरिका का ख्यातिनामा शहर शिकागो-सर्दी के दिन! व्यस्त राजमार्ग पर भी बहुत कम चहल-पहल नजर आ रही थी। जितने अमरीकी, सड़क पर गुजरते हुए दिखाई भी देते, वे लम्बा ऊनी कोट पहने और कैप लगाए थे। होटल और रेस्तरां खचाखच भरे थे। लोग गर्म चीजें खा-पीकर अपनी ठण्ड को भुलाने का प्रयास कर रहे थे।

ऐसी कड़ाके की ठण्ड में एक भारतीय सन्यासी बोस्टन से आने वाली रेलगाड़ी से शिकागो स्टेशन पर उतरा। सिर पर पगड़ी बँधी थी, उसका भी रंग गेरुआ ही था। विचित्र वेश-भूषा को देखकर अनेक यात्रियों की दृष्टि उस पर जम गई। वह फाटक पर पहुँचा। लम्बे चोगे की जेब से टिकिट निकाला और टिकिट कलेक्टर को देकर वह प्लेटफार्म से बाहर आ गया। उसे देखने वालों की भीड़ बढ़ती जा रही थी। भीड़ में से ही किसी ने पूछ लिया-"आप कहाँ से आए हैं ?"

बोस्टन से, पर निवासी भारत का हूँ।

यहाँ किससे मिलना है ?

डॉ बैरोज से,

कौन डॉ बैरोज ?

सन्यासी ने अपने चोगे की जेब में हाथ डाला पर हाथ खाली ही निकला।

क्यों, क्या हुआ ?

मैं डॉ. बैरोज के नाम बोस्टन से प्रोफेसर जे. एच. राइट का एक पत्र लाया था। उसी पर पता लिखा था, पर वह कहीं रास्ते में गुम हो गया।

दर्शक उसकी बात को सुनकर हँसने लगे। भीड़ धीरे-धीरे छँटने लगी। सन्यासी अब अकेला रह गया। पास से निकलने वाले एक शिक्षित व्यक्ति को रोककर संन्यासी ने पूछा-'क्या आप मुझे डॉ. बैरोज के घर का पता बता सकते हैं ?'

वह अनसुनी करके अपनी आँखें मटकाता हुआ आगे बढ़ गया। सन्यासी स्टेशन की सीमा पार कर राजमार्ग पर चलने लगा। उसकी दृष्टि दोनों ओर लगे साइन बोर्डों पर थी। शायद इन्हीं के बीच कहीं डॉ. बैरोज का बोर्ड दिखाई दे जाए। ढूँढते-ढूँढते शाम हो गयी। बिना पूरे पते के इतने बड़े शहर में किसी व्यक्ति

से मिलना आसान काम न था। ठण्ड बढ़ने लगी। शीत लहर चलने लगी। साधु के पास गर्म कपड़े तो थे नही। उसने दो दिन से भोजन भी न किया था। पास में एक पैसा नही सोचा था शिकागो पहुँचकर वह डॉ. बैरोज का अतिथि बनेगा, पर कभी-कभी सोचा हुआ काम कहाँ हो पाता है?

उसे सामने एक बहुत बड़ा होटल दिखाई दिया। केवल रात काटनी थी। उसने होटल की ओर कदम बढ़ाए। सीढ़ियों की ओर चढ़ना था कि दरबान ने रोक दिया-तुम कौन हो?

मैं रात्रि में यहाँ विश्राम करना चाहता हूँ।

नीग्रो को ठहरने के लिए इस होटल में कोई स्थान नहीं।

मैं भारतीय हूँ।

तुम काले हो। काले लोगों के लिए इस होटल में कोई जगह नहीं। दरबान ने बड़ी बेरहमी से कहा।

सन्यासी के चरण पुनः सड़क की ओर अनमने भाव से बढ़ने लगे। उसे लगा कि अब आगे एक कदम भी चलना मुश्किल है। आँखों के सामने अन्धेरा छाने लगा। यदि वह और आगे बढ़ा तो जमीन पर गिर जाएगा, पर क्या करता? आगे बढ़ना ही जिसके जीवन का एकमात्र लक्ष्य हो।

उसने देखा वह रेलवे मालगोदाम के पास आ गया है। वह उसी तरफ बढ़ता चला गया, गोदाम बन्द हो चुका था। बाहर लकड़ी का एक बड़ा बॉक्स खाली था अन्दर थोड़ी घास पड़ी थी। ऊपर ढक्कन रखा हुआ था। भोजन की कोई व्यवस्था न हो पायी, पर ठण्ड से अपने शरीर की रक्षा करनी ही थी। वह अन्दर की घास को एक तरफ करके उसमें उतर गया, ऊपर से ढक्कन खिसका लिया।

रात भर बर्फीली हवा चलती रही। जब तख्तों के छेदों से सर्दी अन्दर प्रवेश कर जाती तो वह काँप उठता था। जैसे-तैसे रात कट गयी। बॉक्स से सन्यासी बाहर निकला। शरीर सुन्न पड़ गया था, जैसे-तैसे लकड़ी की पेटी से निकलकर सड़क के किनारे पड़ी बैंच पर बैठ गया।

बैठकर सोच रहा था क्या करे? संघर्ष, निरन्तर संघर्ष, परिस्थितियाँ कैसी भी क्यों न हों, उसने हार मानना सीखा न था। विपरीतताएँ-उसका क्या कर सकती हैं, जिसने हार मानना सीखा न हो। फिर जिन्हें परम सत्ता पर, उसके निर्देशों के अनुसार चलने का विश्वास हो उनका क्या कहना। उसे पूर्ण विश्वास था कि जब मनुष्य किसी सत्कार्य में पूरी तरह अपने शरीर व मन को खपा देता है, तो जैसे ही उसकी

शक्तियाँ चुकने को होती हैं, दैवी-चेतना उसकी सहायता के लिए तत्पर हो जाती है। और हुआ भी ऐसा ही-जिस स्थान पर बैठे थे, अचानक उसके सामने के भवन का द्वार खुला। एक सुशील सौम्य महिला बाहर निकली, पास आयी और बोली- स्वामी जी मैं अज्ञात किन्तु सशक्त प्रेरणा से आपके पास आयी हूँ। आप यहाँ सर्व धर्म सम्मेलन हेतु पधारे हैं-मैं आपकी क्या सहायता कर सकती हूँ?

मेरा नाम विवेकानन्द है। मैं भारत से इस सम्मेलन में भाग लेने आया हूँ। मुझे बोस्टन से डॉ.बैरोज के नाम प्रो.राइट ने पत्र दिया था वह कहीं गुम हो गया।

वह महिला बड़े सम्मान के साथ उन्हें अपने घर ले गयी। भोजन, गर्म कपड़े तथा निवास की पूर्ण व्यवस्था की। दूसरे दिन सर्वधर्म सम्मेलन के कार्यालय में ले जाकर परिचय कराया।

11 सितम्बर, 1893 का दिन बड़े ही महत्त्व का था। इसी दिन हजारों की संख्या में लोगों ने उनके उद्‌गारों को सुना, सराहा और अनुयायी हुए। अब प्रत्येक अमेरिकावासी की जुबान पर उन्हीं का नाम था। यह वही व्यक्ति था जो रात काटने के लिए एक दिन भटकता रहा था। आज लोगों के हृदय में अपना स्थान बनाए हुए था। अनेक समाचारों के मुखपृष्ठ पर उनके भाषण छपने लगे। उसी नगर में स्थान-स्थान पर अनेक बड़े-बड़े चित्र लगाए गए जिसके नीचे मोटे-मोटे अक्षरों में लिखा था "स्वामी विवेकानन्द एमाँक फ्रॉम इण्डिया " क्या था उनकी सफलता का राज? उसे उन्होंने ही बताते हुए एक अवसर पर कहा था-"उठो जागो, रुको मत, जब तक अपने लक्ष्य तक न पहुँच जाओ।" इसी मन्त्र की उन्होंने साधना की, आदि काल से महामानवों ने इसी को अपने जीवन मन्त्र के रूप में अपनाया है। हमारे अपने लिए भी यही महामन्त्र है।

१४. सबसे श्रेष्ठ-सबसे महान् स्मारक

घटना कलकत्ता की है। आजकल श्री सोमानी जी बड़ी ही उलझन में रहते थे, उनके पिताजी का देहान्त हो चुका था और वे उनकी स्मृति को अमर बनाने के लिये कोई प्रतीक बनवाना चाहते थे। वे एक धनीमानी व्यक्ति हैं साथ ही बुद्धिमान भी। यों तो परम्परागत कई चीजे हैं बनवाने को-कुआँ, मन्दिर, धर्मशाला, अस्पताल तथा अन्य उपकरण किन्तु इन सबसे परे वे कोई ऐसी चीज बनवाना चाहते थे, जिससे अधिक से अधिक व्यक्ति केवल लाभान्वित ही न हों-बल्कि जीवन में कोई सही दिशा भी पा सकें।

क्या बनावाएँ? यही निर्णय वे नहीं ले पा रहे थे और इसी से मानसिक स्थिति उद्विग्न बनी रहती थी। आज भी जब भोजन से निवृत्त हुए तो थोड़ी देर आराम करने के उद्देश्य से लेटे थे। पत्नी से भी छिपी न रही थी वह मानसिक ग्रन्थि। वह आई और पास बैठ गई। पूछा-"आजकल आप बहुत सोच-विचार किया करते हैं। ऐसी क्या नई बात आ गई है? पिताजी के न रहने से काम की सारी जिम्मेदारी आपके ऊपर आ गई है। काम भी बढ़ ही गया है। न हो तो एक-आध आदमी और रख लें।"

तब श्री सोमानी जी बोले-नहीं, ऐसी कोई बात नहीं। काम से मैं नहीं घबराता। सब हो ही रहा है। मेरे दिमाग मे एक ही चिन्ता है। पिताजी का स्वर्गवास हुए एक वर्ष होने को आया और मैं अभी तक उनके स्मारक के रूप में कुछ बनवाने की बात को पूरा नहीं कर सका हूँ।

तब सौहार्द्र भरे स्वर में पत्नी बोली-यदि आप स्वयं इस समस्या का हल निकालने में सफल नहीं हो पा रहे हैं, तो अपने मित्रों से सलाह लीजिये। कोई न कोई बात जँच ही जायेगी।

और दूसरे दिन से सचमुच ही वे अपने सब मित्रों से इस विषय पर परामर्श करने लगे। मित्र भी सभी स्तरों के थे। अधिकांश ने वही बातें दुहराई। किसी ने मन्दिर बनवाने को कहा, किसी ने प्याऊ लगाने को। किसी ने अन्न तथा वस्त्र के वितरण पर जोर दिया तो किसी ने बच्चों को मुफ्त दूध बँटवाने की सलाह दी, पर सारे ही परामर्श उन्हें उपयोगी होते हुए भी प्राणहीन से लगे। वे कोई ऐसी योजना चाहते थे, जिससे व्यक्ति कोई स्थायी सहायता पा सके। तभी उनके एक मित्र ने उन्हें परामर्श दिया कि आप एक पुस्तकालय बनवाएँ, उससे अधिक से अधिक व्यक्ति लाभान्वित होंगे तथा जीवन का शाश्वत-ज्ञान प्राप्त करेंगे।

यह बात श्री सोमानी जी को बहुत पसन्द आई। उनके मस्तिष्क के तन्तु जिस तत्व की खोज में थे, वह मिल गया था। अब उन्होंने तत्काल ही योजना को कार्यान्वित करने के लिये सारी योजनाएँ जुटाने की जिम्मेदारी विभिन्न व्यक्तियों को सौंप दी।

श्री सोमानी जी ने तीस हजार रुपया इस शुभ कार्य के लिये व्यय किया। पुस्तकालय बन गया, उसमें चुन-चुन कर व्यक्ति और समाज का सही मार्ग-दर्शन कर सकने वाली पुस्तकें रखी गई, निरर्थक साहित्य का एक कागज भी उनमें नहीं घुसने दिया। अब सैकड़ों व्यक्ति हर रोज उसका लाभ उठाने लगे।

अनेक दिशाहीनों को जीवन जीने का ढंग मिला। ज्ञान आत्मा का भोजन है वह जिसे भी मिला है उसने सद्पथ की ओर ही कदम बढ़ाये हैं। सदा अनेक व्यक्ति इस पुस्तकालय से जीवन निर्माण का प्रकाश प्राप्त कर रहे हैं।

निश्चय ही इस स्वरूप में अपना स्मारक देखकर स्वर्ग में उनके पिताजी की आत्मा बहुत ही प्रसन्न तथा संतुष्ट हुई होगी।

१५. वीर बाला रत्नावती

जैसलमेर - नरेश महारावल रत्नसिंह अपने किले से बाहर राज्य के शत्रुओं का दमन करने गये थे। जैसलमेर किले की रक्षा का दायित्व उन्होंने अपनी पुत्री रत्नावती को सौंपा था। इसी समय दिल्ली के बादशाह अलाउद्दीन की सेना ने जैसलमेर को घेर लिया। इस सेना का सेनापति मलिक काफूर था। किले के चारों ओर मुसलमानी सेना ने पड़ाव डाल दिया, लेकिन इससे रत्नावती घबराई नहीं। वह वीर सैनिक का वेश पहने, तलवार बाँधे, धनुष-बाण चढ़ाये घोड़े पर बैठी किले की बुर्जों पर और दूसरे सब आवश्यक स्थानों पर घूमती और सेना का संचालन करती थी। उसकी चतुरता और फुर्ती के कारण मुसलमान सेना ने जब-जब किले पर आक्रमण करना चाहा, उसे अपने बहुत से वीर खोकर पीछे हट जाना पड़ा।

जब अलाउद्दीन के सैनिकों ने देखा कि किले को तोड़ा नहीं जा सकता, तब एक दिन बहुत से सैनिक किले की दीवारों पर चढ़ने लगे। रत्नावती ने पहले तो अपने रक्षक सैनिक हटा लिये और उन्हें चढ़ने दिया, पर जब वे दीवार पर ऊपर तक चढ़ आये तब उसने उनके ऊपर पत्थर बरसाने और गरम तेल डालने की आज्ञा दे दी। इससे शत्रु का वह पूरा दल नष्ट हो गया।

एक बार एक मुसलमान सैनिक छिपकर रात में किले पर चढ़ने लगा, लेकिन रत्नावती इतनी सावधान रहती थी कि उसने उस सैनिक को देख लिया। सैनिक ने पहले तो यह कहकर धोखा देना चाहा कि मैं तुम्हारे पिता का संदेश लाया हूँ। किन्तु राजकुमारी रत्नावती को धोखा देना आसान नहीं था। उसने शत्रु सैनिक को बाणों से बींध दिया।

सेनापति मलिक काफूर ने देखा कि वीरता से जैसलमेर का किला जीतना कठिन है। उसने बूढ़े द्वारपाल को सोने की ईंटें दीं कि वह रात को किले का फाटक खोल दे। लेकिन सच्चे राजपूत लोभ में आकर विश्वासघात नहीं करते। द्वारपाल ने रत्नावती को यह बात बतला दी। रत्नावती ने भी देखा कि शत्रु को पकड़ने का यह अच्छा अवसर है। उसने द्वारपाल को रात में किले का दरवाजा खोल देने को कहा।

आधी रात को सौ सैनिकों के साथ मलिक काफूर किले के फाटक पर आया। बूढ़े द्वारपाल ने फाटक खोल दिया। वे लोग भीतर आ गये तो फाटक बंद करके वह उन्हें रास्ता दिखाता आगे ले चला। थोड़ी दूर जाकर बूढ़ा किसी गुप्त रास्ते से चला गया। मलिक काफूर और उसके साथी हैरान रह गये। किले के बुर्ज पर खड़ी होकर राजकुमारी रत्नावती हँस रही थी। राजकुमारी की सूझ-बूझ से वे लोग कैद कर लिये गये थे। सेनापति के पकड़े जाने पर भी मुसलमान सेना ने किले को घेरे रखा। किले के भीतर जो अन्न था वह समाप्त होने लगा। राजपूत सैनिक उपवास रखने लगे। रत्नावती भूख से दुबली और पीली पड़ गई। लेकिन ऐसे संकट में भी उसने राजा के न्याय-धर्म को नहीं छोड़ा। अपने यहाँ जेल में पड़े शत्रु को पीड़ा नहीं देनी चाहिये, यह अच्छे राजा का धर्म है। रत्नावती अपने सैनिकों को रोज एक मुट्ठी अन्न देती पर मलिक काफूर और उसके कैदी साथियों को रोज दो मुट्ठी अन्न दिया जाता था।

अलाउद्दीन को जब पता लगा कि जैसलमेर के किले में उसका सेनापति कैद है और किला जीता नहीं जा सकता तो उसने महारावल जी के पास संधि का प्रस्ताव भेज दिया। रत्नावती ने देखा कि एक दिन किले के चारों ओर से मुसलमानी सेनाएँ अपना तम्बू-डेरा उखाड़ रही हैं और उसके पिता अपने सैनिकों के साथ चले आ रहे हैं।

मलिक काफूर जब किले की जेल से छोड़ा गया तो उसने राजकुमारी को शीश नवाया और कहा - राजकुमारी साधारण लड़की नहीं हैं। वे वीर तो हैं ही, देवी भी हैं। उन्होंने खुद भूखी रहकर हम लोगों का पालन किया है। वे पूजा करने योग्य हैं।

१६. साहस और सामूहिकता का अनुपम चमत्कार

सन्ध्या बेला थी। दिवाकर की अन्तिम अरुणिम किरणें उस हरी-भरी वाटिका के पुष्पों को दुलार रही थीं। नाना प्रकार के सुन्दर-सुरभित पुष्प-गुच्छ उपवन की शोभा को द्विगुणित कर रहे थे।

सभी बच्चों ने मिलकर इसी वाटिका को अपना क्रीड़ा-स्थल चुना था। आज भी सदैव की भाँति सभी बालक एकत्रित हो, यहीं खेलने आये। सभी अपना अलग-अलग मन्तव्य देने लगे कि आज अमुक खेल खेलेंगे, किन्तु कुछ समय पश्चात् यह निर्णय लिया गया कि आज लुका-छिपी का खेल खेला जायेगा। छिपने के लिए एक बालक उस वाटिका की सीमा से बाहर निकलकर कुछ दूरी

पर एक पेड़ के नीचे जाकर छिप गया। सभी बालक इकट्ठे होकर फिर छिपने की तैयारी में थे, तभी एक बालक को कम पाया। सभी चिन्तित हो गये।

एक लड़का जो कि टोलीनायक था; उसने सभी का शोरगुल बन्द करवाया तथा एक-एक से पूछने लगा। कोई भी उसका सही पता नहीं बता सका।

इसी शान्त वातावरण के बीच ही एक ओर से कुछ चीखें सुनाई दीं। बालकों ने सोचा शायद उसी की आवाज होगी। वे सभी तुरंत ही उस आवाज की ओर भागे। कुछ ही क्षण में सभी बालक उस निर्जन स्थान में पहुँच गये, जहाँ वह बालक अजगर की लपेट में फँसा छटपटा रहा था। बालक इस भयावह दृश्य को देखते ही उल्टे पाँव भागे, किन्तु उन्हीं बालकों में से एक ग्यारह वर्षीय बालक वहीं खड़ा रहा। वह अपने साथी को इस स्थिति में छोड़कर न जा सका।

उसने अपने भागते हुए साथियों को पुकारकर कहा-"हमें अपने साथी को इस विपत्तिग्रस्त स्थिति में छोड़कर नहीं भागना चाहिए। एक तरफ तो वह अकेला अजगर है और एक तरफ हम इतने ढेर सारे साथी। फिर डरकर क्यों भागें? क्या हम सभी अपने साथी को छुड़ा न सकेंगे? अपना वह साथी कुछ ही क्षणों में मृत्यु का ग्रास बनने वाला है और हम हैं कि उसे बचाने का प्रयास भी नहीं कर पा रहे हैं, दूर से ही डर रहे हैं। यह तो उसके प्रति विश्वासघात होगा। हमें ऐसा नहीं करना चाहिये। हम साथ खेलने आये थे, साथ ही जाना चाहिये।"

इतना कहते ही वह उस बालक को बचाने के प्रयास में अपने प्राणों का मोह त्यागकर सर्प की तरफ भागा। उसे जाते देख अन्य साथी भी निकट से डण्डे उठाकर ले आये, कोई टहनियाँ तोड़ लाया और वे अपने साथी को छुड़ाने हेतु आगे बढ़े। लड़कों की भीड़ को अपने ऊपर झपटते देख अजगर ने पकड़ ढीली कर दी और समीपवर्ती झाड़ी में छिप गया। बौखलाया हुआ बालक मृत्यु के पंजे से स्वतन्त्र हो गया और प्रसन्न होता हुआ अपने साथियों के गले से लिपट गया।

ऐसे विकट समय में यदि वह बालक साहस से काम न लेता तो अपने एक साथी को खो देता। साथ ही कायरता का कलंक भी लगता। संकट से जूझने से उन्हें आत्मविश्वास की शक्ति भी मिली और पारस्परिक सहयोग में सफलता की नींव का मर्म उनकी निर्मल बुद्धि में बैठ गया।

जिन बालकों में ऐसे साहस एवं सहयोग के गुण होते हैं, उन्हें यदि प्रस्फुटित होते रहने का पर्याप्त अवसर मिलता रहे तो वे अपने भावी जीवन में महान् कार्य

भी सम्पादित कर जाते हैं, जिससे दूसरों को भी प्रेरणा मिलती है। यही साहसी बालक था "वर्द्धमान" जो आगे चलकर तीर्थंकर "महावीर स्वामी" के नाम से प्रसिद्ध हुआ।

१७. मिस कार्लविन सी करुणा हो तो संसार स्वर्ग बन जाए

२६ नवम्बर १९६२ की बात है। हॉलैण्ड के आन्हर्म शहर में शाम को टी.वी. पर एक डाक्टर ने बड़े ही मार्मिक स्वरों में जनता से अपील की। वह अपंगों के लिए एक गाँव बसाना चाहता था। टी.वी. के माध्यम से उसने अपनी योजना और अपंगों के प्रति करुणा और सहानुभूति जगाने की प्रेरणा जनता को दी। जनता से अपंगों के लिए मदद भेजने की अपील की।

कार्लविन ने भी इस अपील को सुना और विचार करने लगी "सचमुच इस योजना के लिए कुछ न कुछ दिया जाना चाहिए। ये सब भी हमारे परिवार, समाज के अंग हैं, इनके लिए हमें कुछ करना चाहिए। पर वह क्या दे?"

"वह तो एक नौकरानी है। बहुत कम कमाती है। जो कमाती है वह सब खर्च भी हो जाता है। उसके पास कुछ बचत भी नहीं है। उसने सोचा कुछ दिनों बाद उसकी शादी होने वाली है, तब वह अपने पति से कहकर इस बस्ती के लिए यथा शक्ति दे सकगी।"

पर शादी में तो अभी बहुत समय है। तब तक के लिए इस सेवा यज्ञ में आहुति देने से रुकना नहीं चाहिए।" उसने अपनी मालकिन से दो महीने की तनख्वाह उधार माँगी। उसकी मालकिन कड़क स्वभाव की थी, "क्या करोगी? क्या जरूरत आ पड़ी?" उसने पूछा।

कार्लविन का मन हुआ कह दे कि "हेट डार्प" के लिए भेजूँगी, पर तभी मन में ख्याल आया कि मालकिन हँसी न उड़ाने लगे। सो उसने बहाना बनाया कि सहेली का विवाह है उसे उपहार देने के लिए चाहिए। "फिर अपनी शादी के लिए चार महीने की तनख्वाह पेशगी माँगोगी!" कहकर मालकिन ने पैसे देने से इन्कार कर दिया। पर कार्लविन का संकल्प दृढ़ था। वह अपनी ओर से कुछ मदद करना चाहती थी। उसने अपना संदूक टटोला कि शायद कहीं कुछ रुपए रखे हों, पर उसे एक पैसा भी नहीं मिला। वह कुछ निराश हो गई और सोचने लगी कि अब क्या करे? तभी उसकी आँखें चमक उठीं। उसके हाथ में कुछ दिनों पूर्व ही बनवाए कपड़े थे। यह कपड़े उसने पाई-पाई जोड़कर अपनी शादी के लिए बनवाए थे।

मन में प्रेरणा उठी कि हेट डार्प में बसने वाली स्त्रियों के लिए कपड़ों की जरूरत भी तो पड़ेगी। क्यों न ये कपड़े उनके लिए दे दिए जाएँ। उसने उसी दिन टी.वी. द्वारा प्रसारित पते पर एक पत्र लिखा। पत्र में अपनी पूरी स्थिति स्पष्ट करते हुए इस क्षुद्र सहयोग को स्वीकार करने का आग्रह किया।

पत्र जिस तत्परता के साथ लिखा गया था, उसी तत्परता से उत्तर भी आया। उसका योगदान न केवल स्वीकर कर लिया गया था, वरन् उसे यह उपहार देने के लिए टी.वी. स्टेशन बुलाया गया था; ताकि उसकी भावनाओं को फिल्म द्वारा जन साधारण तक पहुँचाकर उनमें भी वैसी ही भावनाएँ उभारी जाएँ। कार्लविन टी.वी. स्टेशन गई और जब उसे अपनी शादी के लिए बनवाए गए कपड़े देते हुए दिखाया गया तो दर्शक दंग रह गए।

लोगों पर इसका इतना प्रभाव पड़ा कि वे अपने रेडियो, कारें, फर्नीचर और दूसरी तरह-तरह की चीजें दान में भेजने लगे। कुछ विद्यार्थियों ने अपनी छुट्टियों में आकर अपंगों की बस्ती के निर्माण कार्य में हाथ बँटाने का उत्साह दर्शाया। छोटे-छोटे बच्चों ने अपना जेब खर्च बचाकर अपने अपाहिज भाइयों के लिए साधन जुटाए। इस प्रकार कुल मिलाकर ८५ हजार रुपए नकद इकट्ठे हुए और ७ लाख २० हजार रुपए के उपहार जमा हुए, जिनके सहारे अपंगों का वह गाँव बसा। जहाँ आज सैकड़ों व्यक्ति लोगों के सामने दया की भीख माँगने की अपेक्षा उनके कार्यों में सहयोग बँटाते हैं।

जन भावना उभारने में मिस कार्लविन ने वैसी ही भूमिका निबाही, जैसी कि अब से ढाई हजार वर्ष पहले एक अकाल पीड़ित क्षेत्र में एक निर्धन बालिका ने भगवान् बुद्ध के समय निबाही थी और पास में कुछ न होते हुए भी सब कुछ जुटाने का साहस दर्शाया था।

१८. युधिष्ठिर की उपासना

एक-दूसरे के मुख से निकलती हुई यह बात अनेक कानों में समा गई। भले ही कहने वालों के स्वर धीमे हों, पर सभी के मनों में आश्चर्य तीव्र हो उठा। "क्या करते हैं सम्राट? कहाँ जाते हैं?" यद्यपि युद्ध प्रारम्भ होने के पूर्व ही उन्होंने इस तथ्य की स्पष्ट घोषणा कर दी थी कि शाम का समय उनकी व्यक्तिगत उपासना के लिए है। इस समय उन्हें कोई व्यवधान न पहुँचाए।

"लेकिन वेष बदलकर जाना?" अर्जुन के स्वर के पीछे चिन्ता की झलक थी। प्रश्न उनकी सुरक्षा का है। भीम कुछ उद्विग्न थे। "इससे सहायक सेनाएँ

विचलित हो सकती हैं।" नकुल, सहदेव प्रायः एक साथ बोले। महायुद्ध का प्रवाह पिछले दस दिनों से धावमान था। ऐसे में इन सबका चिन्तित होना स्वाभाविक था। इन भाइयों की भाँति अन्य प्रियजनों की भी यही मनोदशा थी। "सत्य को जानने का उपाय उद्वेगपूर्ण मानसिकता-चिन्ताकुल चित्त नहीं। एक ही समाधान है। शान्त मन से शोधपूर्ण कोशिश।" पार्थसारथी के शब्दों ने सभी के मनों में घुमड़ रहे प्रश्न का उत्तर साकार कर दिया।

दिन छिपते ही युधिष्ठिर जैसे ही अपने कक्ष से बाहर निकले। अन्य भाई भी उनके पीछे हो लिए। मद्धिम पड़ते जा रहे प्रकाश में इन्होंने देखा महाराज अपने हाथ में कुछ लिए उधर की ओर बढ़ रहे हैं, जिधर दिन में संग्राम हुआ था। यह देखकर सभी की उत्सुकता और बढ़ गई। वे अपने को छिपाए उनका सावधानी से पीछा कर रहे थे। युद्धस्थल आ गया तो सब एक ओर छिपकर खड़े हो गए। तारों के मन्द प्रकाश में इन सबकी आँखें पूर्ण सतर्कता से देख रही थीं; आखिर अब ये करते क्या हैं? इनकी ओर से अनजान युधिष्ठिर उन मृतकों में घूम-घूम कर देखने लगे। कोई घायल तो नहीं है, कोई प्यासा तो नहीं है, कोई भूख से तड़प तो नहीं रहा, किसी को घायलावस्था में अपने स्नेही-स्वजनों की चिन्ता तो नहीं सता रही। वे घायलों को ढूँढ़ते, उनसे पूछते और उन्हें अन्न-जल खिलाते-पिलाते बड़ी देर तक वहाँ घूमते रहे। कौरव पक्ष का रहा हो या पाण्डव पक्ष का, बिना किसी भेदभाव के वह सबकी सेवा करते रहे। किसी को घर की चिन्ता होती तो वे उसे दूर करने का आश्वासन देते। इस तरह उन्हें रात्रि के तीन पहर वहाँ बीत गए?

ये सभी उनके लौटने की प्रतीक्षा में खड़े थे। समय हो गया। युधिष्ठिर लौटने लगे तो ये सभी प्रकट होकर सामने आ गए। अर्जुन ने पूछा "आपको यों अपने आपको छिपाकर यहाँ आने की क्या जरूरत पड़ी?"

युधिष्ठिर सामने खड़े अपने बन्धुओं को सम्बोधित कर बोले-'तात्! इनमें से अनेकों कौरव दल के हैं, वे हमसे द्वेष रखते हैं। यदि मैं प्रकट होकर उनके पास जाता तो वे अपने हृदय की बातें मुझसे न कह पाते और इस तरह मैं सेवा के सौभाग्य से वंचित रह जाता।'

भीम तनिक नाराज होकर कहने लगे-"शत्रु की सेवा करना क्या अधर्म नहीं है?"

"बन्धु! शत्रु मनुष्य नहीं, पाप और अधर्म हुआ करता है।" युधिष्ठिर का स्वर अपेक्षाकृत कोमल था "अधर्म के विरुद्ध तो हम लड़ ही रहे हैं, पर मनुष्य तो आखिर आत्मा है, आत्मा का आत्मा से क्या द्वेष?" भीम युधिष्ठिर की इस महान्

आदर्शवादिता के लिए नतमस्तक न हो पाए थे, तब तक नकुल बोल पड़े- "लेकिन महाराज! आपने तो सर्वत्र यह घोषित कर रखा है कि यह समय आपकी ईश्वरोपासना का है, इस तरह झूठ बोलने का पाप तो आपको लगेगा ही।"

"नहीं नकुल।" युधिष्ठिर बोले -"भगवान की उपासना, जप-तप और ध्यान से ही नहीं होती, कर्म भी उसका उत्कृष्ट माध्यम है। यह विराट् जगत् उन्हीं का प्रकट रूप है। जो दीन-दुःखी जन हैं उनकी सेवा करना जो पिछड़े और दलित हैं, उन्हें आत्मकल्याण का मार्ग दिखाना भी भगवान् का ही भजन है।" अब और कुछ पूछने को शेष नहीं रह गया था।

सहदेव ने आगे बढ़कर उन्हें प्रणित निवेदन करते हुए कहा-"लोग सत्य ही कहते हैं, जहाँ सच्ची धर्मनिष्ठा होती है, विजय भी वहीं होती है। हमारी जीत का कारण इसीलिए सैन्यशक्ति नहीं, आपकी धर्मपरायणता की शक्ति है।"

१९. ईश्वर पर विश्वास

उत्तरी अमेरिका में नियाग्रा नामक एक प्रपात है। इसमें पानी की बहुत चौड़ी धार १६० फीट ऊँचाई से गिरती है। यदि प्रपात के पास कोई खड़ा हो तो जल का कल-कल शब्द बहुत ही भयानक प्रतीत होता है। कोई पानी के प्रपात में गिर पड़े तो जीवित रहने की आशा नहीं है।

अभी कुछ वर्ष पहले की बात है। एक अमरीकन पहलवान ने यह घोषणा की कि वह एक तार पर चलकर नियाग्रा प्रपात पार करेगा। नियाग्रा प्रपात के एक किनारे से दूसरे किनारे तक एक हवाई जहाज की सहायता से ठीक प्रपात के ऊपर से तार फैलाया गया।

पहलवान ने जो दिन निश्चित किया था, उस दिन उसके इस कौशल को देखने को बहुत भीड़ इकट्ठी हुई। ईश्वर का नाम लेकर उसने तार पर चलना प्रारम्भ किया।

भीड़ की आँखें उस पहलवान की ओर लगी थीं। वह धीरे-धीरे चलकर उस पार कुशलता से पहुँच गया। ज्योंही उस पार पहुँचा, भीड़ उसकी प्रशंसा में चिल्ला उठी। बहुतों ने उसको ईनाम दिया। उस समय उसने लाउडस्पीकर पर ईश्वर का धन्यवाद दिया और भीड़ से पूछा, "क्या आपने मुझे तार पर चलकर प्रपात पार करते देखा?" भीड़ ने उत्तर दिया "हाँ।"

उसने दूसरा प्रश्न किया,"क्या मैं फिर इस पार से उस पार तक इसी प्रकार पार कर सकता हूँ?" भीड़ ने उत्तर दिया "हाँ।"

उसने तीसरा प्रश्न किया, "क्या आप लोगों में से कोई मेरे कन्धे पर बैठ सकता है, जब मैं इस प्रपात को पार करूँ?"

इस प्रश्न पर भीड़ में सन्नाटा छा गया। कोई भी उसके कन्धे पर पार करते समय बैठने को तैयार नहीं हुआ। फिर उसने अपने १६ वर्षीय इकलौते बेटे को कन्धे पर बैठने को कहा। पुत्र पिता के कहने पर कन्धे पर बैठ गया। पिता ने धीरे-धीरे तार पर चलना प्रारम्भ किया। भीड़ की आँखें उनकी ओर लगी हुई थीं। कोई कहता था, "अभी दोनों गिरते हैं-अब मरे" इत्यादि। परन्तु ईश्वर की कृपा से पहलवान अपने पुत्र सहित सरलता से पार हो गया।

भीड़ ने इस बार पहले से अधिक उसकी प्रशंसा की और बहुत से ईनाम दिये। उसने लाउडस्पीकर से ईश्वर की महिमा पर छोटा-सा भाषण दिया। उसने कहा, "आप लोगों को मेरी सफलता या योग्यता पर विश्वास न था। इस कारण आप लोगों में से कोई मेरे कन्धे पर बैठने को तैयार नहीं था।

मेरे पुत्र को मुझ पर विश्वास था और इस कारण वह मेरे कन्धे पर बैठने को तैयार हो गया और मैं उसे लेकर इस पार आ गया हूँ। हम सबका पिता ईश्वर है। जिस प्रकार से मेरे बेटे को मुझ पर विश्वास था, ठीक उसी प्रकार से यदि आपका विश्वास उस परम पिता परमात्मा पर हो, तो आप सांसारिक कठिनाइयों को ठीक उसी प्रकार पार सकते हैं, जैसे मेरे बेटे ने मेरे कन्धों पर नियाग्रा प्रपात पार किया है। ईश्वर पर दृढ़ विश्वास रखिये और परिश्रम करिये। मुझे ईश्वर पर दृढ़ विश्वास था कि वह मेरी इस कठिनाई के समय सहायता करेगा और उसने सहायता की।"

२०. ईश्वर की इच्छा

विक्रमादित्य के इस प्रश्न पर सभासदों के विभिन्न मत थे कि सज्जनता बड़ी है या ईश्वर शक्ति। कई दिन तक विचार-विमर्श होने पर भी निर्णय न निकल सका। कुछ दिन बीते। राजा एक दिन परिभ्रमण के लिए निकले।

दुर्भाग्य से मार्ग में किसी आखेटक जाति के आक्रमण के फलस्वरूप उनका शेष सहयोगियों से संबंध टूट गया। वे निविड़ वन में भटक गये। जंगल में प्यास के मारे राजा का दम घुटने लगा। कहीं पानी दिखाई नहीं दे रहा था। किसी तरह वे एक कुटिया के पास पहुँचे। वहाँ एक साधु समाधि में मग्न थे। वहाँ पहुँचते-पहुँचते महाराज मूर्छित होकर गिर पड़े। गिरते-गिरते उन्होंने पानी के लिये पुकार लगाई।

कुछ देर बाद जब मूर्च्छा दूर हुई तो महाराज विक्रमादित्य ने देखा, वही सन्त उनका मुँह धो रहे हैं, पंखा झल रहे और पानी पिला रहे हैं। राजा ने विस्मय से पूछा-"आपने मेरे लिये समाधि क्यों भंग की? उपासना क्यों बन्द कर दी?" सन्त मधुर वाणी में बोले-"वत्स! भगवान् की इच्छा है कि उनके संसार में कोई दीन-दु:खी न रहे। उनकी इच्छापूर्ति का महत्व अधिक है।" इस उत्तर से उनका पूर्ण समाधान हो गया। सेवा और सज्जनता भी शक्ति-साधना का अंग है।

२१. सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण -वर्तमान

प्रसिद्ध साहित्यकार टॉलस्टॉय ने 'तीन प्रश्न' नामक एक कहानी लिखी है। कहानी का सारांश इस प्रकार है। किसी समय एक राजा था। उनके मन में तीन प्रश्न उठे- (१) सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य क्या है? (२) परामर्श के लिए सबसे अधिक महत्त्व का व्यक्ति कौन है? (३) निश्चित कार्य को आरम्भ करने का सबसे महत्त्वपूर्ण समय कौन-सा है? इसका उत्तर जानने के लिए राजा ने सभासदों की बैठक बुलायी, पर किसी का उत्तर सन्तोष जनक नहीं रहा। राज्य मन्त्री का परामर्श मानकर वह सुबह ही जंगल की कुटिया में रहने वाले साधु से जिज्ञासा-समाधान के लिये चल पड़ा। साधु की कुटिया के निकट पहुँचने पर उसने साथ में आये सैनिकों को जंगल में ही छोड़कर साधु से अकेले मिलने का निश्चय किया।

साधु को खेत में कुदाल चलाते देख वह चुपचाप खड़ा होकर देखने लगा। कुछ देर बाद जब साधु ने दृष्टि उठायी तो राजा से आने का कारण पूछा। राजा ने तीनों प्रश्नों को उनके समक्ष रखा तथा उत्तर की प्रतीक्षा करने लगा। साधु ने संकेत द्वारा राजा को निकट बुलाया और अपनी कुदाल दे दी। राजा ने कुदाल लेकर खेत जोतना आरम्भ किया। संध्या होने को आयी। इतने में एक व्यक्ति साधु की कुटिया की ओर दौड़ता हुआ आया और भूमि पर गिर पड़ा। उसके कपड़े रक्त से लथपथ थे। पेट से रक्त की धार निकल रही थी। दोनों ने मिलकर उसकी मलहम-पट्टी की। घायल व्यक्ति सो गया।

प्रात: काल राजा ने घायल व्यक्ति को क्षमायाचना करते पाया। यह देखकर राजा विस्मय में पड़ गया। आगन्तुक ने अपना परिचय दिया, "मैं किसी समय आपका घोर शत्रु था। आपने मेरे भाई को फाँसी दे दी थी। तभी से बदला लेने का अवसर ढूँढ़ रहा हूँ। मुझे मालूम था कि सामान्य वेशभूषा में आप साधु के पास आये हैं। मार डालने की इच्छा से मैं झाड़ी में छुप गया, किन्तु इसी बीच

आपके सैनिकों ने हथियार से हमला कर दिया। शत्रु होते हुये भी आपने मेरे प्राणों की रक्षा की। हमारा द्वेष-भाव समाप्त हो गया। मैं आपके चरणों का सेवक हूँ। आप मुझे चाहें तो दण्ड दें अथवा क्षमा करें।"

घायल व्यक्ति की बातें सुनकर राजा स्तब्ध रह गया। अप्रत्याशित ईश्वरीय सहयोग मानकर वह मन ही मन ईश्वर को धन्यवाद देने लगा। साधु ने मुस्कराते हुये कहा, "राजन्! क्या अब भी आपको प्रश्नों के उत्तर नहीं मिले?" राजा को मौन देखकर उसने अपनी बात आगे बढ़ायी और कहा कि कार्यों द्वारा आपके प्रश्नों का उत्तर पहले ही दिया जा चुका है। सबसे महत्व का कार्य वह है जो सामने है, सबसे महत्त्वपूर्ण व्यक्ति वह है, जो हमारे पास है और सबसे महत्त्व का समय वर्तमान ही है। यदि आप आकर मुझे सहानुभूति न दिखाते तथा तुरन्त चले जाते तो आज आपकी जीवन-रक्षा संभव न हो पाती। अतएव महत्त्वपूर्ण व्यक्ति मैं था, जिसे सहायता अपेक्षित थी। दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य आगन्तुक की रक्षा थी। महत्त्वपूर्ण समय भी वही था, जिसके सदुपयोग से शत्रु भी मित्र में बदल गया। राजा को तीनों प्रश्नों का सन्तोषजनक उत्तर मिल गया।

कहानी के तीनों प्रश्नों के उत्तर में महत्त्वपूर्ण प्रेरणाएँ समाहित हैं। महत्त्वपूर्ण कार्य, महत्त्वपूर्ण व्यक्ति, महत्त्वपूर्ण समय की कल्पना अधिकांश व्यक्ति करते हैं तथा भविष्य की ओर दृष्टि गड़ाये रहते हैं, जबकि सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण वर्तमान है। जिसमें विद्यमान व्यक्ति द्वारा प्रस्तुत कार्य एवं समय का सदुपयोग कर लिया जाय तो उज्जवल भविष्य की संभावनाएँ बन सकती हैं। प्रस्तुत कार्य को पूरे मनोयोग से करना वर्तमान समय एवं सम्बन्धित व्यक्तियों का सदुपयोग ही सर्वांगीण प्रगति का मूल मन्त्र है।

२२. सुन्दर वह जो सुन्दर करई

सुकरात बहुत कुरूप थे, फिर भी वे सदा दर्पण अपने पास रखते थे और बार-बार उसमें अपना चेहरा देखते रहते थे। एक दिन उनके एक मित्र को इस पर बहुत आश्चर्य हुआ और वह पूछ ही बैठा "आप बार-बार दर्पण में चेहरा क्यों देखते हैं?"

सुकरात बोले "मैं सोचता हूँ कि अपनी इस कुरूपता का प्रतिकार मुझे अपने कार्यों की सुन्दरता को बढ़ाकर करना चाहिए। इस तथ्य को याद रखने के लिए मैं दर्पण देखता रहता हूँ।"

इसके बाद वे बोले "जो सुन्दर हैं, उन्हें भी इसी प्रकार बार-बार दर्पण देखना चाहिए और सीखना चाहिए कि ईश्वर ने जो सौंदर्य दिया है, कहीं दुष्कृत्यों के कारण उसमें दाग-धब्बा न लग जाए।"

सच ही तो है, "वास्तविक सौंदर्य तो मनुष्य के कार्यों में छिपा है। इसीलिए तो अष्टावक्र (आठ जगह से टेढ़े थे), महात्मा गाँधी, कबीर आदि महापुरुषों को, दिखने में साधारण होने पर भी समाज श्रद्धा से याद करता है। मनुष्य में चंदन जैसे गुण होने चाहिए, सुडौल हो या बेडौल, बिखेरें तो सुगंध ही बिखेरें।"

२३. रेखा छोटी हो गई

स्वामी रामतीर्थ सन्यास लेने से पूर्व एक कालेज में प्रोफेसर थे। एक दिन बच्चों के मानसिक स्तर की परीक्षा लेने के लिये उन्होंने बोर्ड पर एक लकीर खींच दी और विद्यार्थियों से कहा-"इसे बिना मिटाये ही छोटा कर दो।"

एक विद्यार्थी उठा किन्तु वह प्रश्न के मर्म को नहीं समझ सका उसने रेखा को मिटा कर छोटी करने का प्रयत्न किया। इस पर स्वामीजी ने बच्चे को रोका और प्रश्न को दोहराया। सभी बच्चे बड़े असमंजस में पड़ गये।

थोड़े समय में ही एक लड़का उठा और उसने उस रेखा के पास ही एक बडी रेखा खींच दी। प्रोफेसर साहब की खींची हुई रेखा अपने आप छोटी हो गई।

उस बालक की सराहना करते हुए स्वामी जी ने कहा "विद्यार्थियों दुनिया में बड़ा बनने के लिये किसी को मिटाने से नहीं वरन् बड़े बनने के रचनात्मक प्रयासों से ही सफलता मिलती है। बड़े काम करके ही बड़प्पन पाया जा सकता है।"

१. भोजन के उपरान्त हाथ मुँह धोकर लकड़ी की कंघी से बाल काढ़ने चाहिये। कंघी इस प्रकार चलायें जिससे काँटे कुछ-कुछ सिर में चुभें। इससे मस्तिष्क निरोग रहता है और स्मरण शक्ति बढ़ती है।

२. स्नान करते समय सबसे पहले सिर के ऊपर ठण्डे जल की धार छोड़नी चाहिये। १०-१५ मिनट तक नल के नीचे बैठकर या लोटे से जल की धार सिर पर डालें और हल्के-हल्के सिर को मलते रहें। तत्पश्चात् हाथ-पाँव व शरीर के अन्य भागों पर पानी डालें। इस प्रकार के स्नान से मष्तिष्क का बल बढ़ता है।

-'बुद्धि बढ़ाने के उपाय' पुस्तक से

द्वितीय अध्याय

बाल प्रबोधन

महापुरुषों का बचपन (भाग-३)

१. मर्यादा पुरुषोत्तम श्री रामचन्द्र

त्रेता युग समाप्त हो रहा था। संसार में राक्षसों का बल बहुत बढ़ गया था। इसी समय सरयू नदी के तट पर अयोध्या नगरी में राजा दशरथ राज्य करते थे। उनके चार पुत्र थे-रामचन्द्र, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न। रामचन्द्र इनमें सबसे बड़े थे। वैसे तो चारों भाई माता-पिता और गुरुजनों की हर आज्ञा का सदा प्रसन्नता से पालन करते थे, परन्तु रामचन्द्र जी तो गुणों के भण्डार थे। इन्होंने आयु भर बड़ों की आज्ञा-पालन करने और धर्म के अनुसार प्रजा-पालन करने में ऐसा आदर्श दिखाया कि संसार चकित रह गया। इसी से इन्हें 'मर्यादा पुरुषोत्तम' नाम से पुकारा जाता है। इन्होंने अपने जीवन में सदा मर्यादा का पालन किया।

जब राम बालक थे, उस समय इनका नियम था कि सोने से पहले और प्रात:काल उठते ही माता-पिता के चरण छूना और दिन-भर उनके कहे अनुसार ही काम करना। एक बार मुनि विश्वामित्र राजा दशरथ के पास आए और कहा कि राक्षस लोग हमें यज्ञ नहीं करने देते और बहुत दु:ख पहुँचाते हैं; आप राम और लक्ष्मण को मेरे साथ भेज दें। ये हमारे यज्ञ की रक्षा करेंगे। गुरु वसिष्ठ के समझाने पर राजा ने दोनों राजकुमारों को विदा कर दिया। महात्मा विश्वामित्र राम और लक्ष्मण को लेकर अपने आश्रम में पहुँचे। दोनों भाइयों ने दिन-रात गुरु की सेवा की। वे प्रेम से उनके पैर दबाते थे, उनके सोने के बाद सोते थे। प्रात:काल जब गुरुदेव के उठने का समय होता था, उससे पहले उठ जाते थे। उनकी हर सेवा अपने हाथों से करते थे। उनकी हर आज्ञा का पालन करते थे। भूमि पर सोते थे। उनकी सेवा से प्रसन्न होकर महात्मा विश्वामित्र ने उन्हें ऐसे-ऐसे शस्त्र दिये, जिनसे उन्होंने बड़े-बड़े राक्षसों को मार डाला और संसार में यश पाया, और ऋषि विश्वामित्र के यज्ञ को पूरा कराया।

अब भगवान् राम की, माता-पिता के आज्ञा-पालन की कहानी भी सुनो। राम सदा माताओं और पिता की हर आज्ञा का पालन करना अपना धर्म मानते थे। जब राजा दशरथ बूढ़े हुए, उन्होंने राम को युवराज बनाना चाहा। इस समय भरत

और शत्रुघ्न ननिहाल गए हुए थे। सारे नगर को सजाया गया और स्थान-स्थान पर उत्सव होने लगे। जब रानियों को पता लगा, तो वे फूली न समाई, उन्होंने भी अपने भवनों को खूब सजवाया। पर विधाता की इच्छा कुछ और ही थी।

रानी कैकेयी की एक दासी थी, जिसका नाम था-मंथरा। वह बड़ी कुटिल थी। बुरे आदमियों को सदा बुराई सूझती ही है। इसलिए हमें सदा अच्छे लोगों की ही संगति करनी चाहिए। भूलकर भी बुरों के पास नहीं बैठना चाहिए। वह यह सब जानकर जल-भुन गई। उसने जाकर रानी कैकेयी को समझाया कि तुम्हारे पुत्र भरत को बाहर भेजकर राजा दशरथ राम को राज्य दे रहे हैं। भोली रानी उसकी चाल में आ गई और उसने राजा से दो वर माँगे। एक से राम को चौदह वर्ष के लिए वनवास और दूसरे से भरत को राज्य। राजा यह सुनते ही बेहोश होकर गिर पड़े, क्योंकि उन्हें राम से बहुत प्यार था। वे राम की जुदाई सहन नहीं कर सकते थे।

जब राम को यह सब पता लगा, तो वे बड़ी प्रसन्नता से वन जाने को तैयार हो गए। उन्होंने कैकेयी से हाथ जोड़कर कहा- हे माता! आपने पिता जी को क्यों कष्ट दिया, मुझे ही कह देतीं। मैं आपकी हर आज्ञा का प्राण देकर भी पालन करूँगा। इतना कहकर राम ने राजसी वस्त्र उतारकर वल्कल पहन लिए और वन जाने के लिए तैयार हो गए। वे सीधे माता कौशल्या के पास गए और उनके चरण छुए। उनका आशीर्वाद पाकर राम वन को चल पड़े। लक्ष्मण और सीता भी उनका वियोग न सह सकते थे और साथ में चले गए। चलते समय तीनों पिता दशरथ के पास गए और उनके तथा माता कैकेयी के चरण छूकर चल दिए।

इसके बाद राजा दशरथ यह वियोग न सह सके और स्वर्ग सिधार गए। अब गुरु वसिष्ठ ने भरत और शत्रुघ्न को ननिहाल से बुलाया। जब भरत को पिता की मृत्यु और बड़े भाइयों के वन जाने का समाचार मिला तो वे दुःख से रो उठे। उन्होंने राजा बनना स्वीकार नहीं किया। सेना, माताओं और गुरुजनों को साथ लेकर वन में राम को लौटाने के लिए गए, पर राम न लौटे। उन्होंने कहा कि मैं माता और पिता की आज्ञा से वन में आया हूँ। उनकी आज्ञा का पालन करना, हम सबका धर्म है। भरत निराश होकर राम की खड़ाऊँ लेकर लौट आए और चौदह वर्ष तक अयोध्या के बाहर नन्दिग्राम में रहे। भगवान् राम के लौटने तक उन्होंने भी वनवासी की तरह ही कंद-मूल खाकर व झोंपड़ी में रहकर तपस्या भरा कठोर जीवन बिताया और राज्य का काम भी करते रहे।

चौदह वर्ष बीतने पर जब राम लौटे, तब अयोध्या में दीपमाला सजाई गई और राम को राजा बनाया गया। जब तक राम जीवित रहे, उन्होंने ऐसा अच्छा राज्य चलाया कि आज भी लोग 'राम-राज्य' के गुण गाते हैं। उस समय कोई चोर न था, सब सदाचारी थे, सब सच बोलते थे, दोनों समय संध्या-वंदन करते थे, माता-पिता के होते हुए पुत्र की मृत्यु नहीं होती थी, सब सुखी थे, समय-समय पर अच्छी वर्षा होती थी, पृथ्वी धन-धान्य से भरपूर थी। बड़े-बड़े तपस्वी और महात्माओं की आज्ञा से ही श्री रामचन्द्र जी राज्य करते थे।

२. आदर्श ब्रह्मचारी-भीष्म

बहुत समय की बात है, इस पवित्र मातृभूमि भारतवर्ष पर राजा शान्तनु राज्य करते थे। इनकी राजधानी हस्तिनापुर थी। इनके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम देवव्रत रखा गया। जब राजकुमार देवव्रत बड़े हुए, उस समय एक बार उनके पिता महाराज शान्तनु शिकार खेलने गए। वहाँ उन्होंने देखा कि एक बड़ी सुन्दर नदी बह रही है, जिसके बीच में एक कन्या नाव चला रही है। वह देखने में बहुत सुन्दर है और उसके शरीर से सुगन्ध फैल रही है। राजा ने उसे देखा और उसके पास जाकर उसका पता पूछा। वह उन्हें अपने पिता के पास ले गई। उसके पिता नाविक थे। राजा ने उसके पिता से कहा कि यदि आप चाहें तो इस कन्या का विवाह मेरे साथ कर दें, मैं इसे अपनी रानी बनाऊँगा। यह सुनकर नाविक बोला-हे राजन्! यदि आप वचन दें कि इसकी संतान ही राजगद्दी पर बैठेगी, तब मैं विवाह करने को तैयार हूँ। राजा यह सुनकर अपने महल में लौट आए, क्योंकि वे अपने पुत्र देवव्रत को ही राजा बनाना चाहते थे। परन्तु उस दिन से वे उदास रहने लगे।

जब यह सब समाचार देवव्रत को मालूम हुआ, तो वह पिता की चिन्ता को मिटाने का उपाय सोचने लगा। अन्त में वह सीधा नाविक के पास गया और उसके सामने प्रतिज्ञा की कि मैं कभी राजा नहीं बनूँगा और आपकी पुत्री से जो संतान होगी, वही राज्य करेगी। नाविक ने कहा कि आप कहते तो ठीक हैं, पर आपकी जो संतान होगी, कहीं वह राज्य का दावा न कर बैठे। इससे तो झगड़ा बना ही रहेगा। इस पर राजकुमार देवव्रत ने प्रतिज्ञा की कि मैं आयु-भर विवाह नहीं करूँगा। आप कृपया अपनी पुत्री का विवाह मेरे पिताजी से कर दें। अब नाविक मान गया। उस कन्या का विवाह राजा शान्तनु से हो गया।

ऐसा कठिन व्रत लेने के कारण ही देवव्रत का नाम भीष्म पड़ा। उन्होंने आयु-भर इस व्रत को निभाया और इस ब्रह्मचर्य के प्रताप के कारण ही वे लगभग

१५७ वर्ष जीवित रहे। मृत्यु उनके वश में थी। महाराज शान्तनु के दो और पुत्र हुए। इनके नाम थे, विचित्रवीर्य और चित्रांगद। महाराज के मरने पर भीष्म ने अपने हाथों से विचित्रवीर्य को राजा बनाया। विचित्रवीर्य और चित्रांगद छोटी आयु में ही मर गए।

माता सत्यवती ने भीष्म को बुलाकर कहा-पुत्र! अब तुम्हें चाहिए कि विवाह कर लो और राज्य संभालो, नहीं तो कौरव वंश का नाश हो जाएगा।

भीष्म गरज कर बोले- माता! सूर्य उदय होना छोड़ दे, वायु बहना छोड़ दे, जल अपनी शीतलता छोड़ दे, परन्तु भीष्म अपनी प्रतिज्ञा को नहीं छोड़ सकता।

महाभारत का युद्ध हो रहा था, भीष्म पितामह कौरवों के सेनापति थे। आठ दिन से लगातार युद्ध हो रहा था। पाण्डवों की सेना दिन-प्रतिदिन कम हो रही थी। पांडव बड़ी चिन्ता में थे कि किस प्रकार युद्ध में विजय हो, क्योंकि भीष्म पितामह को मारने की शक्ति किसी में नहीं थी। कृष्ण की राय से पाँचों पांडव भीष्म पितामह से उनकी मृत्यु का उपाय पूछने गए। उनसे नम्रता से हाथ जोड़कर कहा कि आपके होते हुए हम किस प्रकार जीतेंगे, कृपया बताइए। वे बोले- आपकी सेना में कोई ऐसा वीर नहीं, जो मुझे मार सके, और मेरे मरे बिना आपकी विजय नहीं हो सकती। हाँ, आपकी सेना में शिखण्डी नाम का एक महारथी है, जो पिछले जन्म में स्त्री था। यदि वह मुझ पर तीर चलाएगा, तो मैं हथियार नहीं उठाऊँगा। आप उसको आगे करके मुझे मार सकते हैं। यह सुनकर पांडव अपने शिविर में लौट आए। प्यारे बच्चो! देखो ब्रह्मचर्य का बल! कोई भी संसार का बड़े से बड़ा वीर उन्हें युद्ध में नहीं मार सकता था। वे स्वयं अपनी मृत्यु का उपाय बता रहे हैं।

युद्ध का नौवाँ दिन था। आज भीष्म पितामह पूरे बल से पांडव सेना को मार रहे थे। सारी सेना घबरा उठी, अर्जुन भी शिथिल हो रहा था। पांडव सेना का कोई भी सैनिक उनकी बराबरी नहीं कर सकता था। अब महारथी शिखण्डी को आगे किया गया। उसके आगे आते ही पितामह ने हथियार छोड़ दिए। पर शिखण्डी के तीर तो फूल की तरह उनके शरीर पर बरस रहे थे। तब अर्जुन ने शिखण्डी के पीछे खड़े होकर भयंकर तीरों की बौछार शुरु कर दी। इस मार को पितामह सहन न कर सके और युद्धभूमि में गिर पड़े। शरीर तीरों से छलनी हो रहा था। तीरों की शय्या पर ही लेटे-लेटे उन्होंने कहा कि जब सूर्य दक्षिणायन से चलकर उत्तरायण में पहुँचेगा, तभी मैं शरीर छोड़ूँगा और हुआ भी ऐसा ही। महाभारत का युद्ध समाप्त हो गया, सूर्य उत्तरायण में आया, तब भीष्म पितामह ने शरीर छोड़ा।

तीरों की शय्या पर लेटे हुए उन्होंने युधिष्ठिर को बड़ा उत्तम उपदेश दिया, जो महाभारत में शांति पर्व के नाम से प्रसिद्ध है।

३. दयालु राजकुमार सिद्धार्थ

बहुत प्राचीन समय की बात है। भारत में कपिलवस्तु नाम की एक बड़ी सुन्दर नगरी थी। उस समय राजा शुद्धोदन वहाँ राज्य करते थे। ये बड़े धार्मिक और न्याय-प्रिय राजा थे। उनके एक पुत्र हुआ, जिसका नाम सिद्धार्थ रखा गया।

जब सिद्धार्थ बड़े हुए, तो एक बार वे मंत्री-पुत्र देवदत्त के साथ धनुष-बाण लिए घूम रहे थे। संध्या समय था। सूर्य अस्त हो रहा था। आकाश में लाली छा गई थी। बड़ा मनोहर दृश्य था। पक्षी आकाश में उड़े जा रहे थे। सहसा सिद्धार्थ की दृष्टि दो राज-हंसों पर पड़ी और देवदत्त से बोले-देखो भाई, ये कैसे सुन्दर पक्षी है।

देखते ही देखते देवदत्त ने कान तक खींचकर बाण चलाया और उनमें से एक पक्षी को घायल कर दिया। पक्षी भूमि पर गिरकर छटपटाने लगा। सिद्धार्थ ने आगे बढ़कर उसे अपनी गोद में ले लिया और पुचकारने लगा। देवदत्त ने अपना शिकार हाथ से जाते देख सिद्धार्थ से कहा कि इस पर मेरा अधिकार है, इसे मैंने मारा है। सिद्धार्थ ने राजहंस के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा कि बेशक तुमने इसे मारा है, परन्तु मैंने इसे बचाया है। इसलिए यह पक्षी मेरा है।

राजकुमार सिद्धार्थ ने पक्षी की सेवा की उसकी मरहम-पट्टी की और उसे चारा दिया। समय पाकर पक्षी स्वस्थ होने लगा। फिर एक बार देवदत्त ने सिद्धार्थ से कहा कि मेरा पक्षी मुझे दे दो, परन्तु सिद्धार्थ नहीं माना। लाचार हो देवदत्त ने महाराज के पास जाकर न्याय की पुकार की। महाराज ने दोनों को दरबार में बुलाया।

राजकुमार सिद्धार्थ राजहंस को गोद में लिए हुए राज-दरबार में पहुँचे। पक्षी डर के मारे कुमार के शरीर से चिपट रहा था। महाराज ने देवदत्त से पूछा कि अब तुम अपनी बात कहो। इस पर देवदत्त ने कहा- महाराज! इस पक्षी को मैंने अपने बाण से मारा है, इसलिए इस पर मेरा अधिकार है। आप चाहें तो, कुमार सिद्धार्थ से ही पूछ लें।

महाराज की आज्ञा पाकर राजकुमार सिद्धार्थ ने खड़े होकर माथा झुकाकर नम्रता से कहा-हे राजन्, यह तो ठीक है कि यह पक्षी देवदत्त के बाण से घायल हुआ है, पर मैंने इसे बचाया है। मारने वाले की अपेक्षा बचाने वाले का अधिक अधिकार होता है। इसलिए यह पक्षी मेरा है।

अब राजा बड़ी सोच में पड़े। देवदत्त का अधिकार जताना भी ठीक था और सिद्धार्थ का भी। राजा कोई निर्णय न कर सके। अंत में एक वृद्ध मन्त्री ने उठकर कहा कि हे महाराज! इस पक्षी को सभा के बीच में छोड़ दिया जाए। दोनों कुमार बारी-बारी से इसे अपने पास बुलाएँ। पक्षी जिसके पास चला जाए, उसीको दे दिया जाए। यह विचार सबको पसंद आया।

अब पक्षी को सभा के ठीक बीच में छोड़ दिया गया। एक कोने पर सिद्धार्थ खड़े हुए और दूसरे कोने पर देवदत्त। पहले देवदत्त की बारी थी, उसने पक्षी को बड़े प्रेम से बुलाया, परन्तु वह डर के मारे उससे और दूर हट गया। ज्यों-ज्यों वह बुलाए, पक्षी डर से सिकुड़ता जाए। अंत में देवदत्त हताश हो गया, अब कुमार सिद्धार्थ की बारी थी। ज्योंही उन्होंने प्यार भरी आँखों से पक्षी की ओर देखकर हाथ फैलाया और उसे बुलाया, त्यों ही वह धीरे-धीरे चलता हुआ अपने बचाने वाले की गोद में आकर बैठ गया। हंस सिद्धार्थ को दे दिया गया।

कुमार सिद्धार्थ उस पक्षी की दिन-रात सेवा करने लगे। कुछ दिनों बाद राजहंस पूर्ण स्वस्थ होकर उड़ गया।

जानते हो ये कुमार सिद्धार्थ कौन थे? यही बाद में राजपाट छोड़कर गौतम बुद्ध के नाम से प्रसिद्ध हुए, जिन्होंने अहिंसा का पाठ सारे संसार को पढ़ाया। आज भी चीन, जापान आदि कई देश बौद्ध मत को मानते हैं। हमारी सरकार ने भी कुछ साल पहले बड़े समारोह से गया के पवित्र तीर्थ में उनकी जयन्ती मनाई।

४. महावीर

आज से ढाई हजार वर्ष पहले इस भारत भूमि पर सिद्धार्थ नाम के एक बड़े धर्मात्मा राजा राज्य करते थे। ये इक्ष्वाकु कुल के थे। ये और इनकी महारानी का नाम त्रिशला था। इनकी प्रजा बड़ी सुखी थी। राज्य धन-धान्य से भरपूर था।

एक बार महारानी को बड़ा सुन्दर स्वप्न आया, जिसका अर्थ यह था कि उन्हें एक शूरवीर और महान् धार्मिक पुत्र प्राप्त होगा। भगवान् की लीला, उसी दिन से राज्य में दिन दूनी, रात चौगुनी उन्नति होने लगी। राजा और रानी सारा-सारा दिन सत्संग और दीन-दुखियों की सेवा में लगे रहते।

चैत्र शुक्ल त्रयोदशी को सोमवार के दिन प्रात: काल के समय इनके घर पुत्र हुआ। शिशु का रंग कुन्दन की तरह चमक रहा था। सभी अंग बड़े सुन्दर थे। अब तो राजा-रानी फूले न समाते थे। एक बार संजय और विजय नामक साधु शिशु को देखने आए। उसे देखते ही उनकी सब शंकाएं और अज्ञान मिट गया, उनका मन

जल की तरह निर्मल हो गया। राजकुमार के दो नाम रखे गए-वीर और वर्धमान।

एक बार राजकुमार अपने मित्रों के साथ पेड़ पर उछल-कूद रहे थे कि एक भयानक काला नाग पेड़ पर जा चढ़ा। राजकुमार के सब साथी डरकर भाग खड़े हुए, परन्तु राजकुमार बिलकुल न डरे और उसके फन पर पैर रखकर नीचे उतरकर उसको खूब जोर-जोर से हिलाने-डुलाने लगे और बहुत देर तक खेलते रहे। इसके बाद कुमार को सोने के घड़े में जल लेकर नहलाया गया और इनका नाम महावीर रख दिया गया।

जब ये पाँच वर्ष के हुए, तो कुल की रीति के अनुसार इन्हें गुरुकुल में पढ़ने के लिए भेजा गया। ये बहुत थोड़े समय में ही सब-कुछ सीख गए। आठ वर्ष की आयु से ही इनके मन में यह विचार आया कि सच्चा सुख केवल त्याग से ही मिल सकता है। इस संसार के सभी सुखों का अन्त दुःख में होता है। उन्होंने कठोर व्रतों का पालन शुरु कर दिया और गृहस्थ के कामों को भी करते रहे। जब तक ये महापुरुष घर में रहे, इन्होंने सारे कर्तव्य भली-भाँति पालन किए और उनसे कभी भी मुख नहीं मोड़ा। परन्तु वे सदा ही विचारते रहे कि किस प्रकार जन्म-मरण के चक्र से छूटा जा सकता है और परम आनंद मिल सकता है। इन्होंने सदा माता-पिता और गुरु की हर आज्ञा को माना और तन, मन, धन से उनकी सेवा करते रहे। वे विवाह न कर कठोर ब्रह्मचर्य-व्रत का पालन करते रहे।

भगवान् महावीर संस्कृत और दूसरी भाषाओं के महान् विद्वान् थे। एक दिन आप प्रभु के ध्यान में बैठे थे कि पूर्वजन्मों का चित्र आँखों के सामने खिंच गया और विचारने लगे कि अनेक जन्म बीत गए और इस जन्म के भी तीस वर्ष बीत गए हैं, परन्तु अभी मोह मेरे मन से दूर नहीं हुआ। आप फूट-फूटकर रोए। आपने एकाएक घर छोड़ने का निश्चय कर लिया और माता-पिता को समझा-बुझाकर उनकी आज्ञा प्राप्त कर घर को सदा के लिए त्याग दिया। आपने वन में पहुँचते ही कपड़े और गहने उतारकर फेंक दिए और अपने बालों को उखाड़ दिया। अब आपने कठोर तपस्या शुरु कर दी। एक बार पूरे छः मास तक समाधि में बैठे रहे। न कुछ खाया और न पिया। इसके बाद कुलपुर गए। वहाँ के राजा ने उनका बहुत आदर किया और प्रेम से भोजन कराया।

अब आप घूमने लगे पर सदा प्रभु के ध्यान में ही रहते। घनघोर भयानक जंगलों में आप रहे। एक बार आप कौशाम्बी नामक नगर में पधारे, वहाँ चन्दना नाम की एक धर्मात्मा और सुशीला देवी थीं। इनके जीवन पर आपके उपदेश

और सत्संग का बहुत प्रभाव हुआ। ये भी आयु-भर ब्रह्मचारिणी रहीं। इन्होंने छत्तीस हजार देवियों के हृदय में धर्म का बीज बोया और आयु-भर धर्म-प्रचार करती रहीं।

घर छोड़ने के बाद बारह वर्ष तक भगवान् महावीर ने कठोर तप किया और अन्त में ऋजुकुल नदी के किनारे पर जम्बक नामक गाँव में शाल वृक्ष के नीचे आपको सच्चा ज्ञान प्राप्त हुआ। आपके सब संशय मिट गए। अब तो आप संसार के उपकार के लिए निकल पड़े। प्रतापी मगध-नरेश श्रेणिक बिम्बिसार भगवान् के चरणों में बैठकर उपदेश लिया करते थे।

पण्डित इन्द्रभूति उस समय बहुत बड़े विद्वान् माने जाते थे। इसी कारण उन्हें विद्या का घमंड भी था। वे आपके दर्शनों को आये। आपके पवित्र दर्शन करते ही हार मान ली और साथियों सहित आपको गुरु मान लिया। जिस दिन भगवान् महावीर ने शरीर छोड़ा, उसी दिन इन्द्रभूति को सच्चा ज्ञान प्राप्त हुआ। इन्द्रभूति के समान और भी बड़े-बड़े विद्वानों ने आपको गुरु माना।

लाखों लोग भगवान् का उपदेश सुनते थकते ही नहीं थे। आपके भक्त आपके साथ ही साथ आया करते थे। सच्चा ज्ञान पाने के बाद भगवान् ने तीस वर्ष तक संसार को शान्ति का उपदेश दिया।

पावापुरी नामक स्थान पर दीवाली के दिन दिये जलने के समय साँझ की बेला में आपने देह त्यागकर सांसारिक बंधनों से मुक्ति पाई। आज भी हमारे देश में लाखों लोग इनके चलाये जैन धर्म को मानते हैं और अपना जन्म पवित्र करते हैं।

५. सच्चे व्यापारी नानक

आज से पाँच सौ वर्ष पहले, संवत् १५२६ की कार्तिकी पूर्णिमा के शुभ दिन पंजाब में लाहौर नगर के पास तलवंडी नामक स्थान पर एक खत्री परिवार में एक बालक का जन्म हुआ। इसका नाम नानक रखा गया। इसके पिता का नाम कल्याणचन्द था, परन्तु लोग इन्हें कालू नाम से ही पुकारते थे।

जब नानक सात वर्ष के हुए तो इन्हें पढ़ने के लिए पाठशाला भेजा गया। पण्डित जी ने इनकी पाटी पर गिनती लिखकर दी। नानक ने कहा-पण्डित जी! यह विद्या तो संसार के झगड़े में डालने वाली है, आप तो मुझे वह विद्या पढ़ाएँ, जिसे जानकर सच्चा सुख मिलता है। मुझे तो प्रभु नाम का उपदेश दें। यह सुनकर पण्डित जी हैरान रह गए, फिर भी नानक जी ने दो वर्ष तक पढ़ाई की। नानक प्रायः दूसरे बच्चों की तरह खेल-कूद में समय नहीं बिताते थे। परन्तु जब भी उन्हें

देखो, आसन लगाकर भगवान् के भजन में मस्त होते। वे दूसरे बच्चों को भगवान के भजन का उपदेश देते।

एक बार इनके पिता ने इन्हें बीस रुपये दिए और कहा कि लाहौर जाकर कोई सच्चा व्यापार करो, जिससे कुछ लाभ हो। इनके साथ अपने विश्वासी कर्मचारी बाला को भी भेजा। नानक बाला को साथ लेकर लाहौर की ओर चल पड़े। जब वे जूहड़काणे के निकट जंगल में पहुँचे तो देखा कुछ साधु तपस्या कर रहे हैं। नानक ने पास जाकर उनके चरण छुए। पता लगा कि वे सात दिन से भूखे हैं। नानक ने बाला से कहा–इससे बढ़कर और सच्चा व्यापार क्या होगा! आओ, इन साधुओं को भोजन कराएँ। ऐसा कहकर नानक उनके निकट जा बैठे और बीस रुपये भेंट कर दिए। उनमें बड़े महात्मा ने कहा–बेटा, रुपये हमारे किस काम के? तुम्हे ये रुपये व्यापार के लिए तुम्हारे पिता ने दिये हैं, तुम्हें उनकी आज्ञा के अनुसार ही काम करना चाहिए।

नानक ने कहा–महाराज! पिताजी ने मुझे सच्चा व्यापार करने के लिए भेजा है, इसीलिए मैं यह खरा व्यापार कर रहा हूँ। मैं और सब व्यापार झूठे समझता हूँ।

अब महात्मा जी ने उन्हें आशीर्वाद दिया और बोले–तू सच्चा प्रभु–भक्त है, इन रुपयों से खाने का सामान ले आ। नानक ने बाला को साथ लेकर पास के गाँव से आटा, दाल, चावल, घी, शक्कर आदि सब वस्तुएँ लाकर महात्मा जी को भेंट कर दीं। फिर महात्माओं के चरण छूकर वे घर को वापस लौट पड़े। घर पहुँचने पर जब उनके पिता को यह मालूम हुआ, तो उन्होंने नानक को बहुत पीटा। नानक की बहिन नानकी ने बीच में पड़कर बड़ी मुश्किल से उन्हें छुड़ाया।

गाँव के हाकिम राव बुलार नानक के गुणों को जानते थे। उन्होंने कालू को बुलाकर बीस रुपये दे दिए और कहा कि इस बालक को कभी कुछ मत कहना। यह एक महान् पुरुष है। गांव के हाकिम के समझाने से कालू ने नानक को उसके बहनोई के पास सुलतानपुर भिजवा दिया। ये बड़े सज्जन पुरुष थे, ये नानक जी को सदा भगवान् के भजन में आनन्द लूटते देखते। यहीं नानक जी का विवाह हुआ और दो पुत्र भी हुए। यहाँ पर नानक जी ने मोदीखाने का काम किया। कई वर्ष काम करने के बाद इनका मन संसार से उठ गया। वे घर से चले गए। परन्तु तीसरे दिन ही वे बहनोई के घर लौट आए। साधुओं के वेश में इन्होंने लोगों को अपनी मोदीखाने की दुकान लूटने की आज्ञा दे दी और आप गाँव के बाहर जाकर प्रभु–भजन करने लगे। लोगों ने दुकान को जी भरकर लूटा।

उधर समाचार गाँव के नवाब दौलत खाँ को मिला तो वे आग-बबूला हो उठे। उन्होंने नानक के बहनोई को बुलवाया और कहा कि सरकारी मोदीखाना को लुटाने का सारा दोष तुम और नानक दोनों पर है, मैं अभी हिसाब करता हूँ। जब हिसाब हुआ तो उल्टा नानक जी का सात सौ आठ रुपया नवाब की ओर निकला। सब हैरान रह गए। नानक के कहने पर यह रुपया गरीबों में बाँटा गया। अब तो नानक के दर्शनों को बहुत लोग आने लगे। प्रभु-भजन में बाधा देखकर नानक वहाँ से एमनाबाद में आकर लालू नामक बढ़ई के घर ठहरे।

एक दिन वहाँ के रईस भागू ने नानक जी को भोजन के लिए निमंत्रण दिया। इसी बीच लालू बढ़ई भी भोजन ले आया। नानक जी रईस का भोजन अस्वीकार कर लालू का भोजन करने लगे। अब भागू को बड़ा क्रोध आया। वह स्वयं उनकी सेवा में पहुँच इसका कारण पूछने लगा कि स्वादिष्ट और बढ़िया भोजन छोड़कर आपने नीच लालू का रूखा भोजन क्यों पसन्द किया? नानक जी ने कहा कि तुम भी अपना भोजन ले आओ। जब भोजन आ गया तो नानक जी ने एक हाथ में लालू की सूखी रोटी और दूसरे में भागू की बढ़िया रोटी लेकर जोर से दबाई। लोगों की हैरानी का कोई पार न रहा, जब लालू की रोटी से दूध की बूँदें और भागू की रोटी से खून की बूँदें टपकीं।

लोगों के पूछने पर उन्होंने बताया कि यह सूखी रोटी तो सच्चे खून-पसीने की कमाई की है और यह स्वादिष्ट भोजन गरीबों का खून चूस-चूसकर बनाया गया है। इसलिए सदा मेहनत और धर्म से ही धन कमाना चाहिए, वही फलता और फूलता है। भागू ने उनके चरण पकड़ लिए और शिष्य बन गया।

अब नानक देव जी मक्का-मदीना आदि सब स्थानों की यात्रा करने लगे। इनके हिन्दू और मुसलमान दोनों ही शिष्य बने। सत्तर वर्ष की आयु में उन्होंने शरीर छोड़ा। जीवन-भर वे धर्म और सच्चाई की राह बताते रहे और अमर हो गये।

६. आदर्श गुरुभक्त दयानन्द

लगभग सवा सौ वर्ष हुए, गुजरात प्रान्त के मोरबी राज्य के टंकारा नामक ग्राम में एक बालक का जन्म हुआ। इसका नाम मूलशंकर रखा गया। इसके पिता अम्बाशंकर जी एक बड़े भूमिहार थे। वे शिवजी के बड़े भक्त थे। जब मूलशंकर बड़ा हुआ, तो उन्होंने अपने कुल की रीति के अनुसार उसे शिवरात्रि का व्रत रखने को कहा। पिता ने पुत्र को समझाया कि सच्चे हृदय से शिवजी की पूजा करने से वे प्रसन्न हो जाते हैं और अपने भक्त को निहाल कर देते हैं। मूलशंकर ने

निश्चय किया कि मैं बिना अन्न-जल ग्रहण किये सारी रात जागकर शिव जी की पूजा करूँगा और उन्हें प्राप्त करूँगा।

शिवरात्रि के दिन सायंकाल ग्राम के शिव-मंदिर में एक-एक करके भक्तों की टोलियाँ पहुँच गईं। मूलशंकर और इनके पिता भी मंदिर में आ गए। आज दिन-भर मूलशंकर ने कुछ भी खाया-पिया नहीं था।

मंदिर में आरती के बाद शिवजी की पूजन शुरू हुआ। जब आधी रात बीत गई तो एक-एक करके सब लोग सो गये। मूलशंकर के पिता भी सो गये। केवल मूलशंकर बार-बार आँखों पर जल के छींटे देकर शिवजी का पूजन करते रहे। उन्होंने देखा कि चूहे शिवलिंग पर चढ़कर मिठाई खाने लगे। यह देखकर उन्हें हृदय में शंका हुई कि सारे संसार को चलाने वाले शिवजी अगर अपने ऊपर से एक चूहे को नहीं हटा सकते, तो वे मेरी क्या रक्षा करेंगे?

उन्होंने अपने पिता को जगाया और उन्हें अपनी शंका बताई। उन्होंने उत्तर दिया- बेटा, सच्चे शिव तो कैलाश पर्वत पर रहते हैं, कलियुग में उनके दर्शन नहीं होते, इसलिए मंदिर में मूर्ति बनाकर उनकी पूजा की जाती है। इस उत्तर से मूलशंकर को संतोष नहीं हुआ और मूर्ति पूजा से उनका विश्वास उठ गया। साथ ही साथ यह प्रण भी कर लिया कि मैं सच्चे शिव को ढूँढ़कर उनकी ही पूजा करूँगा। अब मूलशंकर को भूख सताने लगी। वे पिता की आज्ञा लेकर घर लौट आये, माता से लेकर कुछ खा लिया और सो गये।

कुछ दिनों बाद आपकी छोटी बहिन का देहान्त हुआ। सारा परिवार रोता रहा, पर मूलशंकर की आँखों में कोई आँसू नहीं था। वह कोने में खड़ा सोच रहा था कि मृत्यु क्या है, इससे कैसे बचा जाए। फिर कुछ दिन बीतने पर इनके चाचा की मृत्यु हुई। ये भगवान के बड़े भक्त थे और मूलशंकर को बहुत प्यार करते थे। अब तो मूलशंकर फूट-फूटकर रोए और उन्होंने दूसरा प्रण किया कि मैं मौत को अवश्य जीतूँगा। 'होनहार बिरवान के होत चिकने पात'-होनहार बालक सदा हर बात को विचारा करते हैं और जब एक बार कोई निश्चय कर लेते हैं तो सारी आयु-भर उसे पाने के लिए जुट जाते हैं। कठोर से कठोर विपत्ति भी उन्हें अपने मार्ग से नहीं हटा सकती। फिर अन्त में अपने लक्ष्य को पाकर वे अमर हो जाते हैं।

अब मूलशंकर उदास रहने लगे। उन्होंने अपने मित्रों से किसी योगी का पता पूछा जो सच्चे शिव को प्राप्त करने और मृत्यु को जीतने का उपाय बता सके। उधर माता-पिता को चिन्ता हुई और उन्होंने उसका विवाह करने की ठान ली। जब

मूलशंकर को पता लगा तो इन्होंने साफ-साफ कह दिया कि मैं विवाह नहीं करूँगा, योगाभ्यास से मृत्यु को जीतूँगा और सच्चे शिव को पाऊँगा। कुछ समय तो माता-पिता रुक गए पर फिर उन्होंने उनके विवाह की बात पक्की कर ही दी। अपनी धुन के पक्के मूलशंकर ने जब और कोई चारा न देखा तो अपने घर को सदा के लिए छोड़ दिया। इस समय इनकी आयु बाईस वर्ष की थी।

आपने घर छोड़ने के बाद संन्यास ले लिया। नाम हुआ दयानन्द। वर्षों जंगलों की खाक छानी। बड़े-बड़े महात्माओं की सेवा कर बहुत-कुछ सीखा, पर ज्ञानकी प्यास नहीं बुझी। अन्त में दण्डी स्वामी विरजानन्द के पास जाकर डेढ़ वर्ष तक ज्ञान प्राप्त करते रहे। ये महात्मा सूरदास थे और मथुरा नगरी में रहते थे। जब तक ऋषि दयानन्द मथुरा में रहे, दिन-भर में यमुना जल के चालीसों घड़े लाकर अपने गुरुदेव को स्नान कराते, उनकी सेवा करते।

इन दिनों दयानन्द जी का शरीर देखते ही बनता था, लम्बा कद, बाहुएँ बड़ी-बड़ी, माथा-चौड़ा और मोटी-मोटी आँखें। शरीर का गठन बहुत सुन्दर था। इस समय आपकी आयु सैंतीस वर्ष की थी। इन दिनों मथुरा में स्थान-स्थान पर उनके ब्रह्मचर्य व्रत और त्याग की प्रशंसा होती थी। पर महात्मा दयानन्द सदा नीची दृष्टि रखकर चलते थे। यदि कोई छोटी-सी बालिका भी सामने आ जाती तो माता कहकर सिर झुका देते थे।

एक बार ऋषि दयानन्द अपने गुरु की कुटिया में झाड़ू लगा रहे थे। सब गन्दगी एक कोने में बटोर रहे थे कि गुरुदेव भी उधर ही आ गए और उनका पाँव उसमें जा लगा। इस पर उन्होंने दयानन्द को बहुत पीटा। महर्षि दयानन्द जी उठकर गुरुजी के हाथ-पाँव दबाने लगे और कहा कि गुरुदेव मेरा शरीर तो पत्थर जैसा है और आपका शरीर कोमल है। आपको मुझे मारते समय कष्ट होता होगा, इसलिए मुझे मत मारा करें। कहते हैं, उस चोट का निशान सारी आयुभर आपकी दाईं बाहु पर बना रहा। जब भी उसे देखते, गुरु के उपकारों को याद करने लग जाते।

पढ़ाई समाप्त होने पर गुरु की आज्ञा से महर्षि दयानन्द देश में बढ़ती हुई अविद्या को मिटाने में जुट गये। इन दिनों लोगों ने आपको 48-48 घंटे लगातार समाधि में बैठे देखा। आपका चेहरा तेजोमय चक्र से घिरा रहता था। आपने छोटी आयु में विवाह, अनमेल विवाह, मूर्ति-पूजा आदि कई समाज की बुराइयों का कठोरता से खंडन किया। एक ईश्वर की पूजा, ब्रह्मचर्य व्रत और वेदों के पठन-पाठन का बहुत प्रचार किया।

एक बार घोर सर्दी पड़ रही थी। आप एक सभा में ब्रह्मचर्य पर उपदेश कर रहे थे। आप केवल लंगोट पहनते थे। उस समय सभी लोग गरम-गरम कपड़े पहने हुए भी सरदी से ठिठुर रहे थे। किसी ने कहा कि ब्रह्मचर्य का कोई नमूना दिखाइए। आपने इतने बल से अपने दोनों अँगूठों को जांघों पर दबाया कि शरीर से टप-टप पसीने की बूँदें गिरने लगीं। लोग दंग रह गए। 'धन्य-धन्य' की पुकार से आकाश गूँज उठा।

एक बार एक राजा ने भी महर्षि दयानन्द से ब्रह्मचर्य का कोई चमत्कार दिखाने के लिए प्रार्थना की। एक बार वही राजा अपनी छः घोड़ों की बग्घी में कहीं जाना चाहते थे कि बाल-ब्रह्मचारी दयानन्द ने एक हाथ से बग्घी के पहिये को पकड़ लिया। कोच-वान घोड़ों पर लगातार चाबुक मार रहा है, पर घोड़ें एक अंगुल भी आगे नहीं जा पाये। हैरान होकर राजा ने पीछे मुड़कर देखा कि महर्षि दयानन्द गाड़ी को थामे हैं। राजा ने उतरकर आपके चरण पकड़ लिये।

धर्म-प्रचार करने में और अपने बिछुड़े भाइयों को जो यवन और ईसाई बन गए थे। अपने में शुद्ध करके मिला लेने के कारण कई लोग आपके शत्रु हो गए। आप राजपूताना के राजाओं में धर्म का बीज बो रहे थे। आप चाहते थे कि सब राजा आपस में प्रेमसूत्र में बँधकर संगठित होकर देश से विदेशी शासन को उखाड़ फेंकें और देश स्वतंत्र हो।

जब आप जोधपुर पधारे तो आपको दूध में विष मिलाकर तथा शीशा पीसकर दिया गया, जिसने आपकी नस-नस को काट डाला। एक मास बाद दीपावली की सायंकाल को आपने नाई को बुलाकर बाल बनवाए, स्नान किया और साफ वस्त्र पहनकर आसन लगाकर बैठ गए। प्रभु को धन्यवाद किया और तीन बार कहा कि ऐ प्रभु! तूने अच्छी लीला की। फिर ब्रह्मरन्ध्र (सिर के ऊपरी भाग) से अपने प्राण निकाल दिए।

मृत्यु के समय आपके पास नास्तिक गुरुदत्त बैठे हुए थे। जो संस्कृत, अंग्रेजी के महान् विद्वान थे। इस दृश्य को देखते ही इन्हें प्रभु में विश्वास हो गया और ये आजन्म वैदिक धर्म का प्रचार ही करते रहे।

प्यारे बालको! इस प्रकार महर्षि दयानन्द ने सच्चे शिव को ढूँढ़ा और मृत्यु को जीतकर अपने जीवन का लक्ष्य पूरा किया। साथ ही भूले-भटके संसार को भी सच्ची राह बताई। जब तक जिये, दूसरों के भले के लिए ही जिये और अपना शरीर भी समाज की भेंट चढ़ा गये।

७. सत्य के पुजारी महात्मा गांधी

आज से सौ वर्ष पहले आश्विन् वदि 12, संवत् 1925 को पोरबन्दर (गुजरात प्रान्त) में एक सम्मानित परिवार में महात्मा गांधी जी का जन्म हुआ। इनका नाम मोहनदास करमचन्द गांधी रखा गया। गुजरात में नाम रखने की रीति ऐसी है कि आगे पुत्र का नाम, पीछे पिता का नाम और अन्त में जाति का नाम होता है। ये अपने परिवार में सबसे छोटे और सबसे अधिक स्वस्थ और सुन्दर थे।

इनके पिता पोरबन्दर से राजकोट में जा बसे। वहीं पर सात वर्ष की आयु में इन्हें पाठशाला में पढ़ने के लिए भेजा गया। जब हाईस्कूल के प्रथम वर्ष की परीक्षा का समय आया तो इंस्पेक्टर साहब परीक्षा लेने के लिए आये। स्कूल सजाया गया और अगले दिन सब बालक अच्छे-अच्छे कपड़े पहनकर स्कूल में आये।

गांधी जी की कक्षा के विद्यार्थियों को अंग्रेजी के पाँच शब्द लिखवाये गये। चार शब्द तो सबने ठीक लिखे, पर पाँचवाँ शब्द बालक गांधी ने गलत लिखा। अध्यापक ने जब उसे गलत लिखते देखा तो इंस्पेक्टर महोदय की नजर बचाकर पाँव की ठोकर से उसे सावधान किया और इशारा किया कि अगले बालक की स्लेट पर से नकल कर ले। पर बालक गांधी के हृदय में ये संस्कार जमे थे कि नकल न करें, इसलिए उसने नकल न की। इस भूल पर उसे इंस्पेक्टर महोदय ने डाँटा और बाद में अन्य बालकों ने भी हँसी उड़ाई।

इंस्पेक्टर महोदय के जाने के बाद अध्यापक ने बालक गांधी को बुलाया और उससे पूछा कि मेरे संकेत करने पर भी तुमने नकल नहीं की और मेरा अपमान करवाया। इस पर बालक गांधी ने नम्रता से सिर झुकाकर, हाथ जोड़कर कहा कि मास्टर जी! यह तो ठीक है कि आपने मुझे नकल करने के लिए संकेत किया था, पर भगवान् तो सब जगह मौजूद हैं, कोई स्थान उनसे खाली नहीं, इसलिए नकल कैसे करता? ऐसी सच्ची बात सुनकर अध्यापक को रोमांच हो आया। उसने बालक को पास बुलाया और आशीर्वाद दिया कि एक दिन संसार में तुम्हारा नाम खूब चमकेगा।

एक बार इनके पिता 'श्रवण कुमार' नामक नाटक की पुस्तक लाये। इसे इन्होंने बड़े चाव और प्रेम से पढ़ा। उन्हीं दिनों शीशे में तस्वीर दिखाने वाले भी आया करते थे। उनमें यह दृश्य देखा कि श्रवण कुमार माता-पिता की बहंगी (काँवड़) उठाए तीर्थ यात्रा कर रहा है। अब तो बालक गांधी ने श्रवण कुमार की तरह माता-पिता की सेवा करने की मन में ठान ली। उन्होंने माता-पिता की आज्ञा-पालन में ही शेष जीवन बिताया।

एक बार 'सत्य हरिश्चन्द्र' नाटक में सत्य के लिए कठोर विपत्तियाँ सहते देख इनको रुलाई आ गई और जीवन-भर इन्होंने सत्य बोलने का व्रत लिया।

बचपन में ही महात्मा जी अपने सभी कार्य अपने हाथों करते। कपड़े भी अपने हाथ से ही धोते थे। आपकी देखादेखी आपके साथी भी ऐसा ही करते थे। जब बैरिस्टर बनकर अफ्रीका गये तो प्रतिदिन एक कोढ़ी को घर ला, उसकी अपने हाथ से सेवा करते थे।

सन् 1942 में आपने कांग्रेस में 'भारत छोड़ो' प्रस्ताव स्वीकार कराया, जो आपके सत्य और अहिंसा का जीता-जागता प्रमाण है। अंग्रेज भारत छोड़ने पर मजबूर हुए और देश स्वतंत्र हुआ। इनके त्याग बलिदानों के लिये ही आज संपूर्ण राष्ट्र इन्हें राष्ट्रपिता, महात्मा गांधी के नाम से पूजता है।

८. राष्ट्र भक्त नेताजी

आज से पचहत्तर वर्ष पहले उड़ीसा प्रान्त के कटक नामक नगर में एक प्रतिष्ठित परिवार में नेताजी का जन्म हुआ। बालक का नाम सुभाषचन्द्र बोस रखा गया। आप सब आठ भाई और छ: बहिन थे। आप सबसे छोटे थे।

पाँच वर्ष की आयु में आपको एक अंग्रेजी स्कूल में पढ़ने के लिए भेजा गया। उस समय भारतवर्ष में अंग्रेजों का राज्य था। अंग्रेज बात-बात में भारतीयों का अपमान करते थे। इसी तरह इस स्कूल में भी बंगाली छात्रों का अपमान किया जाता। जब यह सब उस होनहार बालक ने देखा, तो उसे बिल्कुल अच्छा न लगा। उसको यह जानकर बड़ा दु:ख हुआ कि कोई भी भारतीय छात्र उनका विरोध करने का साहस नहीं करता और चुपचाप सब कुछ सहन किए जाता है। अब तो हमारे नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, जो उस समय बालक थे, बदला लेने पर उतारू हो गये।

एक बार सब विद्यार्थी खेल रहे थे कि उनमें से एक अंग्रेज विद्यार्थी बोला कि भारतीय बहुत नीच होते हैं। इस पर दूसरा अंग्रेज छात्र बोला-मैं इन्हें जहाँ देखता हूँ, ठोकर मार देता हूँ। यह सुनकर सभी भारतीय बालक तिलमिला उठे, पर वे एक-दूसरे की ओर देखने लगे। अब सुभाष बोस से न रहा गया और एकदम उन अंग्रेज लड़कों के सामने जाकर क्रोध से बोले- मैं भारतीय हूँ, बोलो, क्या कहते हो? बालक सुभाष का यह रूप देखकर अंग्रेज बालकों के होश उड़ गए और वे अपराधी की तरह कुछ नहीं बोले, तब हमारे नेताजी सुभाष बोस उनकी ओर बढ़े और बोले-भारतीय नीच होते हैं? ऐसा कहकर उन दोनों को ठोकर से भूमि पर गिरा दिया।

अब तो सारा स्कूल थर्रा उठा। भारतीय लड़कों की प्रसन्नता का पार न रहा। 'सुभाष बोस जिन्दाबाद और अंग्रेज मुर्दाबाद' के नारों से आकाश गूँज उठा। मुख्याध्यापक ने सुना तो घबरा गये, पर समय देखकर चुप रह गये।

अब आप सुनें, इनका सेवा-भाव। जब इनकी आयु बारह वर्ष की हुई, तो एक बार नगर में हैजे का रोग खूब फैल रहा था और लोग धड़ाधड़ मर रहे थे। इन्होंने अपने साथियों की एक टोली बनाई और नगर की निर्धन बस्ती में जाकर लोगों की सेवा करने लगे। इन बालकों ने सेवा में दिन-रात एक कर दिया। अपने पास से औषधि देते और कहानियाँ सुनाकर उन्हें प्रसन्न रखते।

संसार में सभी प्रकार के लोग होते हैं। इस बस्ती में कुछ लोगों ने इनका विरोध किया ओर कहा कि ये धनी लोगों के बालक हमारा अपमान करने आते हैं। पर इन बालकों ने किसी बात की ओर ध्यान न दिया और सेवा करते रहे। इस बस्ती का सबसे बड़ा गुंडा और इनका विरोधी हैदर खां था। यह कई बार जेल जा चुका था। प्रभु की लीला, इसका घर भी इस भयंकर रोग से न बच सका। इसने बहुत से हाथ-पाँव मारे कि कोई डाक्टर या वैद्य मिल जाए, पर कोई प्रबन्ध न हुआ! अन्त में निराश होकर माथे पर हाथ धरकर भाग्य को कोसने लगा। इतने में क्या देखता है कि उन्हीं सेवाव्रती बालकों का झुंड उसके टूटे-फूटे मकान में घुसकर रोगियों की सेवा में जुट गया। मकान को साफ किया गया, रोगियों को औषधि दी गई और उनकी उचित सेवा की गई।

इन बालकों ने कई दिन तक उस परिवार की सेवा की और अन्त में प्रभु की कृपा से घर के सब प्राणी निरोग हो गए। अब तो उस नामी गुंडे को भी रुलाई आ गई और उसने हाथ जोड़कर उन बालकों से क्षमा माँगी और बोला- मैं कितना पापी हूँ! मैंने आपका जी भरकर विरोध किया, पर आपने उल्टा मेरे परिवार को जीवन-दान दिया। उसका मुँह आँसुओं से भीग गया। यह देखकर उस दल के मुखिया बालक सुभाष ने कहा-तुम इतने दुःखी क्यों होते हो, तुम्हारा घर गन्दा होने से ही रोग घर में आ गया और इसी कारण यह कष्ट उठाना पड़ा।

हैदर खाँ बोला-नहीं, मेरा मन और घर दोनों गन्दे थे, आपकी सेवा ने दोनों का ही मैल साफ कर दिया। आपका यह उपकार मैं कभी नहीं भूल सकता। भगवान् आपका भला करे!

बड़े होने पर आपने आई.सी.एस. परीक्षा पास करने पर भी अंग्रेजों की नौकरी करना स्वीकार नहीं किया। आई.सी.एस उस परीक्षा का नाम है, जिसमें

पास होने पर डिप्टी कमिश्नर आदि बड़े-बड़े पद प्राप्त होते हैं। आप आयु-भर देश की स्वतन्त्रता के लिए लड़े। आपकी आयु का बहुत बड़ा भाग जेल में बीता और इसी कारण आप बीमार रहने लगे।

आपने कुछ समय बाद देश से बाहर जाकर आजाद हिन्द फौज बनाई और अंग्रेजों के विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। इस युद्ध में आप सफल न हुए, युद्ध में ही आप लापता हो गए और फिर कभी आपकी कोई खबर नहीं मिली। परन्तु बाद में भारतीय जल और थल सेनाओं ने अंग्रेजों के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। फिर कोई चारा न देखकर 15 अगस्त, 1947 को अंग्रेजों ने भारत को पूर्ण स्वतन्त्रता दे दी। यह है उस महान् पुरुष के त्याग और तपस्या का फल, जिसका नाम लेते ही भारत के बच्चे-बच्चे की आँखों में आँसू आ जाते हैं। 'नेताजी' को आज भी भारत का प्रत्येक नर-नारी श्रद्धा के फूल अर्पित करता है।

९. ईश्वरचन्द्र विद्यासागर

आज से डेढ़ सौ वर्ष पहले संवत् १८६७ में बंगाल प्रान्त में कलकत्ता के पास वीरसिंह नामक ग्राम में आपका जन्म हुआ। आपके पिता का नाम ठाकुरदास और माता का नाम भगवती देवी था। आपके पिता बहुत निर्धन थे। ईश्वरचन्द्र के जन्म के समय वे कलकत्ता में नौकरी करते थे और केवल आठ रुपये मासिक वेतन पाते थे।

जब आपको पढ़ने के लिए गाँव के विद्यालय में भेजा गया, तब आप पाँच वर्ष के थे। नौ वर्ष की आयु में आप अपने पिता के पास कलकत्ता में पढ़ने के लिए चले गये। भर-पेट भोजन न मिलने पर भी आप इतना परिश्रम करते थे कि हर कक्षा में सदा प्रथम रहा करते थे। इसी कारण से आपको बचपन से ही छात्रवृत्ति मिलनी शुरू हो गई। जो धन आपको छात्रवृत्ति से मिलता था, उससे आप दूसरे गरीब छात्रों की सदा सहायता करते रहे। उनके रोगी होने पर उन्हें औषधि भी अपने पास से देते थे। स्वयं तो घर के कते हुए सूत से बने हुए कपड़े पहनते थे, परन्तु दूसरे गरीब छात्रों को अपने से अच्छे कपड़े खरीद देते थे। बालकों की कौन कहे, बड़ों में भी इतना त्याग नहीं मिलता। दूसरों के लिए ईश्वरचन्द्र जी सदा अपने कष्टों को भूल जाया करते। एक ओर पेट भर भोजन न मिलना और दूसरी ओर अपने और अपने पिता के लिए भोजन बनाना और जिस पर सदा गरीब बालकों की सहायता करना और फिर अपनी कक्षा में सदा प्रथम आना।

इतना अधिक परिश्रम करने के कारण आप कई बार रोगी हो जाते थे, परन्तु अपनी पढ़ाई में कभी ढील न आने देते। आप कहा करते थे कि माता-पिता की

पूजा छोड़कर या उनके दु:खों और कष्टों पर ध्यान न देकर भगवान् की पूजा करने से कोई लाभ नहीं होता। जिन्होंने स्वयं दु:ख और कष्ट सहकर हमें पाला और पोसा है, वे ही हमारे परम देवता है। आप जब तक जिये, अपने माता-पिता की इच्छा के विरुद्ध कभी कोई काम नहीं किया। इक्कीस वर्ष की आयु में आपको 'विद्यासागर' की उपाधि मिली और संस्कृत के महान् पंडित बनकर निकले।

आपने सबसे पहले तीस रुपये मासिक वेतन पर फोर्ट विलियम कालेज में नौकरी की। जिस दिन से आपने नौकरी शुरू की, पिताजी को नौकरी छुड़वा दी और उन्हें गाँव भिजवा दिया।

आपके छोटे भाई का विवाह होना था, माता ने बुला भेजा। आपको छुट्टी नहीं मिली। आपने प्रिंसिपल महोदय से साफ-साफ कह दिया कि या तो छुट्टी दीजिए या त्याग-पत्र लीजिए। आपकी मातृ-भक्ति देखकर प्रिंसिपल महोदय ने प्रसन्न होकर छुट्टी दे दी। आप उसी समय एक नौकर को साथ लेकर चल दिये।

बरसात के कारण रास्ता खराब हो गया था। आप बहुत तेज चलते थे और थकते नहीं थे, पर नौकर नहीं चल सका, इसलिए उसे लौटा दिया। दूसरे दिन ही विवाह था। आप बड़ी तेज चाल से चले और दामोदर नदी के तट पर पहुँचे। देखा नाव दूर थी, आने में देर लगेगी। आप एकदम नदी में कूद पड़े और बड़ी कठिनाई से पार पहुँचे। बिना कुछ खाए-पिए आप सनसनाते हुए घर की ओर चल दिए। मार्ग में एक और नदी मिली, उसे भी तैरकर पार किया। चलते-चलते शाम हो गई, चोरों का बड़ा डर था। परन्तु आपको तो माता के चरण-कमलों में पहँचना था। आप अपनी धुन में चलते ही गये और आधी रात को घर पहुँचे। बरात जा चुकी थी। पर ज्यों ही पुत्र की आवाज सुनी, माँ प्रसन्नता से खिल उठी। माता की आज्ञा का पालन करके ही आपने अन्न-जल ग्रहण किया।

कुछ समय बाद आपका वेतन डेढ़ सौ रुपया मासिक हो गया। आप गरीब रोगियों को होम्योपैथिक औषधियाँ बाँटा करते थे। एक बार एक मेहतर रोता हुआ आपके पास आया और बोला मेहतरानी को हैजा हो गया है, आप कृपा करें। आप उसके घर गये। दिन भर वहीं रहकर इलाज किया और सायंकाल रोगी को ठीक करके ही घर आये। जिस तरह सूर्य, चाँद, वर्षा और वायु ऊँच-नीच का विचार किए बिना सबको एक-सा फल देते है, उसी तरह ईश्वर चन्द्र विद्यासागर भी सबके साथ एक-सा बर्ताव करते थे।

कुछ समय बाद आपका वेतन पाँच सौ रुपया मासिक हो गया। परन्तु नौकरी

में आत्म-सम्मान को बहुत ठेस लगती थी, इसलिए नौकरी छोड़कर देश-सेवा में लग गये। आप कहते थे-दूसरे के पैर चाटते-चाटते यह जाति भीरु बन गई है। जब लोग नौकरी करना पसन्द नहीं करेंगे, तभी देश का कल्याण होगा। अब आप पुस्तकें लिखने लगे और अपना प्रेस खोलकर पुस्तकें छपाकर बेचने लगे।

एक बार आप रेल में सवार होकर एक स्थान पर भाषण देने जा रहे थे। एक छोटे-से स्टेशन पर आपको उतरना था। ज्यों ही गाड़ी उस स्टेशन पर पहुँची, आपने देखा कि नवयुवक 'कुली-कुली' पुकार रहा है। वहाँ कोई कुली था ही नहीं। आप नवयुवक के पास गए और उसका सामान अपने सिर पर उठा लिया और उसके घर पहुँचा दिया। वह आपको कुछ पैसे देने लगा। आपने कहा- मुझे भी यहीं आना था, तुम्हारा सामान उठा लिया तो क्या हुआ!

शाम के समय ईश्वरचन्द्र जी का भाषण हुआ, जिसे सुनने नवयुवक भी गया। उसने आपको झट पहचान लिया और पाँव में गिरकर फूट-फूटकर रोने लगा। आपने उसे प्रेम से गले लगाया और समझाया कि सदा अपना काम अपने हाथ से किया करो।

एक बार प्रातःकाल आप घूमने जा रहे थे। आपने देखा कि एक आदमी रोता हुआ जा रहा है। आप उसके पास गये और प्रेम से उसके दुःख का कारण पूछा। इनको सादी वेश-भूषा में देखकर वह बोला कि मैं बड़े-बड़े धनवानों के पास गया, पर किसी ने मेरी सहायता न की, आप क्या कर सकेंगे? ईश्वरचन्द्र जी के बहुत विनय करने पर वह बोला-भाई! मेरे बाप-दादों की सम्पत्ति केवल एक घर ही है, वह आज नीलाम होगा, अब हम लोग कहाँ रहेंगे? आपने उसका पता पूछ लिया।

अगले दिन आप कचहरी में गए और उसके नाम तेईस सौ रुपया जमा करा आए। उधर वह आदमी दिन-भर कचहरी वालों की राह देखता रहा। जब कोई न आया तो घबराकर वह कचहरी में गया। पता लगा कि कोई सज्जन तेईस सौ रुपया जमा कर गये हैं। वह सोचने लगा कि हो न हो, यह काम उन्हीं सज्जन का है, जो मुझे प्रातःकाल मिले थे। वह आपको ढूँढ़ने लगा।

एक दिन प्रातःकाल वायु-सेवन को जाते समय उसने आपको पहचान ही लिया और दोनों हाथ जोड़कर बोला-आपने मुझे बचा लिय है, मेरा बड़ा उपकार किया है। इस पर आपने उत्तर दिया -तुम्हें उपकारी की भलाई का बदला चुकाना चाहिए, इसलिए मैं तुमसे यह चाहता हूँ कि इस बात को किसी से भी मत कहना। वह आपका त्याग देखकर हैरान रह गया।

बड़े-बड़े लॉट और गवर्नर आपके विचारें का बड़ा आदर करते थे। बड़े-बड़े अंग्रेज पदाधिकारियों को आप सदा अपनी वेश-भूषा में ही मिलते। आप सदा चादर और खड़ाऊँ पहनते। आपने बंगाल में संस्कृत भाषा का बहुत प्रचार किया, सैकड़ों पाठशालाएँ खुलवाईं और उन्हें सरकारी सहायता दिलाई। आप सारी आयुभर विधवा-विवाह और कन्याओं में शिक्षा-प्रचार के लिए लड़ते रहे।

ये हैं, उस महापुरुष के जीवन की कुछ घटनाएँ जो एक निर्धन परिवार में जन्में और जब तक जिये दूसरों के लिए जिये। आप सदा कठिनाई में रहकर भी दुखियों की सहायता करते रहे।

१०. परमयोगिनी मुक्ताबाई

जो लोंहेको सोना कर दे, वह पारस है कच्चा।
जो लोहेको पारस कर दे, वह पारस है सच्चा॥

महाराष्ट्र में समर्थ रामदास स्वामी, श्री एकनाथजी, नामदेवजी ऐसे ही संत हुए। एक परिवार का परिवार वहाँ संतों की सर्वश्रेष्ठ गणना में है और वह परिवार है श्रीनिवृत्तिनाथ जी का। निवृत्तिनाथ, ज्ञानेश्वर, सोपानदेव और इनकी छोटी बहिन मुक्ताबाई- सब के सब जन्म से सिद्ध योगी, परमज्ञानी, परमविरक्त एवं सच्चे भगवद्भक्त थे। जन्म से ही सब महापुरुष। आजन्म ब्रह्मचारी रहकर जीवों के उद्धार के लिये ही दिव्यजगत् से इस मूर्ति चतुष्टय का धरा पर अविर्भाव हुआ।

'नाम और रूप की पृथक-पृथक कल्पना मिथ्या है। सब नाम विट्ठल के ही नाम हैं। सब रूप उसी पण्ढरपुर में कमर पर हाथ रखकर ईंट पर खड़े रहने वाले खिलाड़ी ने रख छोड़े हैं। उन पाण्डुरंग के अतिरिक्त और कुछ भी नहीं है।' बड़े भाई निवृत्तिराथ ही सबके गुरु थे। उन्होंने ही छोटे भाईयों और बहिन को यह उपदेश दिया था।

'विठोबा बड़े अच्छे हैं।' बारह वर्ष की बालिका मुक्ता बाई कभी-कभी बड़ी प्रसन्न होती। किसी सुन्दर पुष्प को लेकर वह तन्मय हो जाती। 'इतना मृदुल, इतना सुरभित, इतना सुन्दर रूप बनाया है, उन्होंने।' अपने बड़े भाई के उपदेश को हृदय से उसने ग्रहण कर लिया था।

'बड़े नटखट हैं पाण्डुरंग।' कभी वह झल्ला उठती, जब हाथों में काँटा चुभ जाता। 'काँटा, कंकड़ , पत्थर-जानें इन रूपों के धारण में उन्हें क्या आनन्द आता है। अपने हाथों के दर्द पर उसका ध्यान कम ही जाता था।'

'छिः, छिः, विठोबा बड़े गंदे हैं।' एक दिन उसने अपने बड़े भाई को

दिखाया। 'दादा! देखो न, इस गंदी नाली में कीड़े बने बिलबिला रहे हैं! राम! राम!' उसके दादा ने उसे डाँट दिया। यह डाँटना व्यर्थ था। उस शुद्ध हृदय में मनन चल रहा था। पशु-पक्षी, स्थावर-जङ्गम-सबमें एक व्यापक सर्वेश को देखने की साधना थी यह।

'दादा! आज दीपावली है। ज्ञान और सोपान दादा भिक्षा में सभी कुछ ले आये हैं। क्या बनाऊँ, भिक्षा में आटा, दाल, बेसन, घी, शाक देखकर बालिका अत्यन्त प्रसन्न हो गयी थी। अपने बड़े भाई की वह कुछ सेवा कर सके, इससे बड़ा आनंद उसने दूसरा कभी समझा ही नहीं था।'

'मेरा मन चील्हा खाने का होता है।' निवृत्तिनाथ ने साधारण भाव से कह दिया।

'नमकीन भी बनाऊँगी और मीठे भी।' बड़ी प्रसन्नता से उछलती-कूदती वह चली गयी। परन्तु घर में तवा तो है ही नहीं। बर्तन तो विसोबा चाटी ने कल रात्रि में सब चोरी करा दिये। बिना तवे के चील्हे किस प्रकार बनेंगे। जल्दी से मिट्टी का तवा लाने वह कुम्हारों के घर की ओर चल पड़ी। मार्ग में ही विसोबा से भेंट हो गयी। ईर्ष्यालु ब्राह्मण के पूछने पर मुक्ताबाई ने ठीक-ठीक बता दिया।

माँगेंगे भीख और जीभ इतनी चलती है। विसोबा साथ लग गया। उसने कुम्हारों को मना कर दिया 'जो इस संयासी की लड़की को तवा देगा, उसे मैं जाति से बाहर करा दूँगा।'

विवश होकर मुक्ताबाई को लौटना पड़ा। उसका मुख उदास हो रहा था। घर पहुँचते ही ज्ञानेश्वर ने उसकी उदासी का कारण पूछा। बालिका ने सारा हाल सुना दिया।

'पगली, रोती क्यों है! तुझे चील्हे बनाने हैं या तवे का अचार डालना है?' बहिन को समझाकर ज्ञानेश्वर नंगी पीठ करके बैठ गये। उन योगिराज ने प्राणों का संयम करके शरीर में अग्नि की भावना की पीठ तप्त तवे की भाँति लाल हो गयी। 'ले; जितने चील्हे सेंकने हो, इस पर सेंक ले।'

मुक्ताबाई स्वयं परमयोगिनी थीं। भाइयों की शक्ति उनसे अविदित नहीं थी। उन्होंने बहुत से मीठे और नमकीन चील्हे बना लिये। 'दादा! अपने तवे को अब शीतल कर लो!' सब बनाकर उन्होंने भाई से कहा। ज्ञानेश्वर ने अग्निधारण का उपसंहार किया।

'मुक्ति ने निर्मित किये और ज्ञान की अग्नि में सेंके गये! चील्हों के स्वाद का क्या पूछना।' निवृत्तिनाथ, भोजन करते हुए भोजन की प्रशंसा कर रहे थे। इतने में एक बड़ा-सा काला कुत्ता आया और अवशेष चील्हे मुख में भरकर भागने

लगा। तीनों भाई साथ ही बैठे थे। उनका भोजन प्रायः समाप्त हो चुका था। निवृत्तिनाथ ने कहा– 'मुक्ता! जल्दी से कुत्ते को मार, सब चील्हे ले जायेगा तो तू ही भूखी रहेगी!'

'मारूँ किसे? विट्ठल ही तो कुत्ता भी बन गये हैं!' मुक्ताबाई ने बड़ी निश्चिन्तता से कहा। उन्होंने कुत्ते की ओर देखा तक नहीं।

तीनों भाई हँस पड़े। ज्ञानेश्वर ने पूछा–'कुत्ता तो विट्ठल बन गये हैं और विसोबाचाटी?' 'वे भी विट्ठल ही हैं!' मुक्ता का स्वर ज्यों का त्यों था।

विसोबा चाटी मुक्ता के साथ ही कुम्हार के घर से पीछा करता आया था। वह देखना चाहता था कि तवा न मिलने पर ये सब क्या करते हैं? ज्ञानेश्वर की पीठ पर चील्हे बनते देख उसे बड़ी जलन हुई। जाकर कुत्ते को वही पकड़ लाया था। मुक्ता के शब्दों ने उसके हृदय बाण की भाँति आघात किया। वह जहाँ छिपा था वहाँ से बाहर निकल कर मुक्ताबाई से बोला, "मैं महा–अधम हूँ। मैंने आप लोगों को कष्ट देने में कुछ भी उठा नहीं रखा है। आप दयामय हैं, साक्षात् विट्ठल के स्वरूप हैं। मुझ पामर को क्षमा करें। मेरा उद्धार करें, मुझे अपने चरणों में स्थान दें।"

कई दिनों तक विसोबा ने बड़ा आग्रह किया। उसके पश्चात्ताप एवं हठ को देखकर निवृत्तिनाथ ने मुक्ताबाई को उसे दीक्षा देने का आदेश दिया। मुक्ताबाई ने उसे दीक्षा दी। मुक्ताबाई की कृपा से विसोबा चाटी जैसा ईर्ष्यालु ब्राह्मण प्रसिद्ध महात्मा विसोबा खेचर हो गया। उसने योग के द्वारा समाधि अवस्था प्राप्त की। महाराष्ट्र के प्रसिद्ध महात्मा नामदेव जी इन्हीं विसोबा खेचर के शिष्य हुए हैं।

उच्चशिक्षा, चतुरता या शरीर सौष्ठव भर से कोई व्यक्ति न तो आत्म संतोष पा सकता है और न लोक सम्मान। इन सबसे महत्वपूर्ण है परिष्कृत व्यक्तित्व। प्रतिभाशील और उन्नतिशील बनने का अवसर इसी आधार पर मिलता है।

–पं० श्री राम शर्मा आचार्य

द्वितीय अध्याय

बाल प्रबोधन

सुविचार-सद्वाक्य (भाग- ४)

१. भगवान आदर्शों-श्रेष्ठताओं के समुच्चय का नाम है। सिद्धान्तों के प्रति मनुष्य का जो त्याग और बलिदान है, वस्तुत: वही भगवान की भक्ति है।
२. सत्य का मतलब सच बोलना भर नहीं, वरन् विवेक, कर्तव्य, सदाचरण,परमार्थ जैसी सद्भावनाओं से भरा हुआ जीवन जीना है।
३. साहस ही एक मात्र ऐसा साथी है, जिसको साथ लेकर मनुष्य एकाकी भी दुर्गम दिखने वाले पथ पर चल पड़ने एवं लक्ष्य तक जा पहुँचने में समर्थ हो सकता है।
४. अपनी बुराइयों को स्वीकार करना साहस का काम है, पर उससे बड़ी हिम्मत यह है कि उन्हें छोड़ने का निश्चय किया जाय।
५. अच्छाईयों का एक-एक तिनका चुन-चुनकर जीवन भवन का निर्माण होता है। पर बुराई का एक हल्का झोंका ही उसे मिटा डालने के लिए पर्याप्त होता है।
६. अपना मूल्य समझो और विश्वास करो कि तुम संसार के सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति हो।
७. सद्ज्ञान और सत्कर्म यह दो ईश्वर प्रदत्त पंख हैं, जिनके सहारे स्वर्ग तक उड़ सकते हैं।
८. प्रसन्न रहने के लिए दो ही उपाय हैं, आवश्यकताएँ कम करें और परिस्थितियों से तालमेल बिठायें।
९. शालीनता बिना मोल मिलती है, पर उससे सब कुछ खरीदा जा सकता है।
१०. मन का संकल्प और शरीर का पराक्रम यदि किसी काम में पूरी तरह लगा दिया जाए, तो सफलता मिलकर रहेगी।
११. जीवन का अर्थ है, **'समय'** जो जीवन से प्यार करते हों, वे आलस्य में समय न गँवायें।
१२. यदि दुनिया तुम्हारे कार्यों की प्रशंसा करती है, तो इसमें कुछ भी बुरा नहीं। खतरा तब है, जब तुम प्रशंसा पाने के लिए किसी काम को करते हो।
१३. वही जीवित है, जिसका मस्तिष्क ठंडा, रक्त गरम, हृदय कोमल और पुरुषार्थ प्रखर हो।

१४. आलस्य से बढ़कर अधिक समीपवर्ती शत्रु दूसरा नहीं।
१५. मनुष्य परिस्थितियों का दास नहीं, वह उनका निर्माता, नियंत्रणकर्ता और स्वामी है।
१६. पेण्डुलम हिलता भर है, पहुँचता कहीं नहीं। लक्ष्य विहीन व्यक्ति कुछ करता तो है, पर पाता कुछ नहीं।
१७. स्वार्थ, अहंकार और लापरवाही की मात्रा बढ़ जाना ही किसी व्यक्ति के पतन का कारण होता है।
१८. बुद्धिमान वह है, जो किसी की गलतियों से हानि देखकर अपनी गलतियाँ सुधार लेता है।
१९. सच्ची लगन तथा निर्मल उद्देश्य से किया हुआ प्रयत्न कभी निष्फल नहीं जाता।
२०. जीवन में बाधाओं और असफलताओं को पार करते हुए लक्ष्य की ओर साहसपूर्वक बढ़ते जाना ही मनुष्य की महानता है।
२१. आशावादी हर कठिनाई में अवसर देखता है, पर निराशावादी प्रत्येक अवसर में कठिनाइयाँ ही खोजता है।
२२. ईश्वर उपासना से मनुष्य संसार और उसकी परिस्थितियों का अधिक सूक्ष्मता, दूरदर्शिता एवं विवेक के साथ निरीक्षण करता है।
२३. हम जिसे सही समझते हैं, निर्भय होकर अपनायें और जिसे गलत समझते हैं उसके आगे किसी भी कीमत पर न झुकें।
२४. केवल ज्ञान ही एक ऐसा अक्षय तत्व है, जो कहीं भी, किसी अवस्था और किसी काल में भी मनुष्य का साथ नहीं छोड़ता।
२५. मन सरसों की पोटली जैसा है। एक बार बिखर गई तो समेटना असंभव हो जाता है।
२६. फरसे से कटा हुआ वन भी अंकुरित हो जाता है, किन्तु कटु वचन कहकर वाणी से किया घाव कभी नहीं भरता है।
२७. बढ़ने का प्रयत्न करते रहना ही जीवन का लक्षण है और लक्ष्य भी। जो एक स्थान पर जम गया, ठहर गया, वह जड़ एवं निर्जीव है।
२८. खोया हुआ पैसा फिर पाया जा सकता है, लेकिन खोया हुआ समय फिर कभी लौटकर नहीं आता।
२९. जीवन एक पाठशाला है जिसमें अनुभवों के आधार पर हम शिक्षा प्राप्त करते हैं।
३०. बड़प्पन सुविधा संवर्धन का नहीं, सद्गुण संवर्धन का नाम है।
३१. सच्ची लगन तथा निर्मल उद्देश्य से किया हुआ प्रयत्न कभी निष्फल नहीं जाता।
३२. जो आलस्य और कुकर्म से जितना बचता है, वह ईश्वर का उतना ही बड़ा भक्त है।

३३. यदि मनुष्य कुछ सीखना चाहे तो उसकी प्रत्येक भूल कुछ न कुछ सिखा देती है।

३४. भूत लौटने वाला नहीं, भविष्य का कोई निश्चय नहीं, संभालने और बनाने योग्य तो वर्तमान है।

३५. अगर तुम चाहते हो कि लोग तुम्हारे साथ सच्चाई का बर्ताव करें, तो तुम स्वयं सच्चे बनो और दूसरे लोगों के साथ सच्चा बर्ताव करो।

३६. विद्या की आकांक्षा यदि सच्ची हो, गहरी हो तो उसके रहते कोई व्यक्ति कदापि मूर्ख, अशिक्षित नहीं रह सकता।

३७. कमल पुष्प सामान्य तालाब में उगने पर भी अपनी पहचान अलग बनाते और देखने वाले के मन पर अपनी प्रफुल्लता की प्रतिक्रिया उत्पन्न करते हैं।

३८. जीवन एक परीक्षा है, उसे उत्कष्टता की कसौटी पर ही कसा जाता है। यदि खरा साबित न हुआ जा सके, तो समझना चाहिए कि प्रगति का द्वार अवरुद्ध है।

३९. विचार मनुष्य की सबसे बड़ी शक्ति है, अपने चिन्तन को मात्र रचनात्मक एवं उच्चस्तरीय विचारों में ही संलग्न रखें।

४०. अनजान होना उतनी लज्जा की बात नहीं, जितनी सीखने के लिए तैयार न होना।

४१. तुलसी मीठे वचन ते, सुख उपजत चहु ओर, वशीकरण यह मंत्र है तज दे वचन कठोर।

४२. तुलसी जग में यूं रहो, ज्यों रसना मुख माँहि।
खाति घी और तेल नित, फिर भी चिकनी नांहि॥

४३. आलस कबहुँ न कीजिये, आलस अरि सम जानि।
आलस ते विद्या घटे, बल, बुद्धि की हानि॥

४४. लक्ष्य न ओझल होने पाये, कदम मिला कर चल।
मंजिल तेरे पग चूमेगी, आज नहीं तो कल॥

४५. या रहीम उत्तम प्रकृति का, का करि सकत कुसंग।
चन्दन विष व्यापत नाहीं, लिपटे रहत भुजंग॥

४६. कबीरा जब आये हम जगत में, जग हँसा हम रोये।
ऐसी करनी कर चलो, हम हँसें, जग रोये॥

४७. अपने दुःख में रोने वाले, मुस्कराना सीख ले।
दूसरों के दुःख दर्द में, आँसू बहाना सीख ले॥

४८. जो खिलाने में मजा, वो खाने में नहीं।
जिन्दगी में किसी के काम आना सीख ले॥

Who am I?

Do you know? who am I?
I am, I am not a Hindu, not a Muslim.
neither no body either, My name is life.
Treasure of noble thoughts,
I am only human, Love is my food,
Good manners are my cloth,
Common sense is my shelter.
God is my parents, Nature is my friend.
Truth is my brother and Confidence is myself.

Small Minds – Talk of People.
Average Minds – Talk of Events.
Great Minds – Talk of Ideas.
Greatest Minds – Act in Silence.

HABIT

Remove "H" remains "abit" (a bit)
Remove "A" there is a "bit"
Remove "B" still remains "it"
So be conscious to gain a "HABIT"

Ten Sutras

The most selfish 1 letter ... "I" ... Avoid It.
Most Satisfactory 2 letters ... "WE" ... Use It.
Most Poisonous 3 letters ... "EGO" ...Kill It.
Most used 4 letters ... "LOVE" ... Value It.
Most Pleasing 5 letters ... "SMILE" ... Keep It.
Fastest Spreading 6 letters .. "RUMOUR" .. Ignore It.
Hard Working 7 letters ... "SUCCESS" ... Achieve It.
Most Enviable 8 letters ... "JEALOUSY" ... Distance It.
Most Essential 9 letters ... "PRINCIPLE" ... Have It.
Most Divine 10 Letters .. "FRIENDSHIP" .. Maintain It.

तृतीय अध्याय

प्रेरणाप्रद गीत

औरों के हित जो जीता है

औरों के हित जो मरता है, औरों के हित जो जीता है।
उसका हर आँसू रामायण, प्रत्येक कर्म ही गीता है॥

जो तृषित किसी को देख, सहज ही होता है आकुल-व्याकुल।
जिसकी साँसों में पर-पीड़ा, भरती है अपना ताप अतुल॥
वह है शंकर जो औरों की, वेदना निरन्तर पीता है।

जो सहज समर्पित जनहित में, होता है स्वार्थ त्याग करके।
जिसके पग चलते रहते हैं, दुःख दर्द मिटाने घर-घर के॥
वह है दधीचि जिसका जीवन, जगहित तप करके बीता है।

जिसका चरित्र गंगा जल सा, है स्वच्छ विमल पावन निर्मल।
जिसके उर में सद्भावों की, धारा बहती कल-कल, छल-छल॥
वह है लक्ष्मण जिसने, पर नारी को समझा माँ सीता है॥

जिसका जीवन संघर्ष बनी, औरों की गहन समस्या है।
तम में प्रकाश फैलाना ही, जिसकी आराध्य तपस्या है॥
जो प्यास बुझाता जन-जन की, वह पनघट कभी न रीता है।

जिसने जग के मंगल को ही, अपना जीवन-व्रत मान लिया।
परिव्याप्त विश्व के कण-कण में, भगवान तत्व पहचान लिया॥
उस आत्मा का सौभाग्य अटल, वह ही प्रभु की परिणीता है।

मनुज देवता बने

मनुज देवता बने, बने यह धरती स्वर्ग समान। यही संकल्प हमारा॥
विचार क्रांति अभियान, इसी को कहते युग निर्माण। यही संकल्प हमारा॥
द्वेष, दम्भ, छल मिटे यहाँ पर, ना कोई भ्रष्टाचारी हो।
सभी सुखी हों सबका हित हो, जन-जन पर उपकारी हो।
मिल-जुलकर सब रहे प्रेम से, दें सबको सम्मान॥
भेदभाव हो दूर, सिख हिन्दु मुस्लिम ईसाई का।
परमपिता के पुत्र सभी का, नाता भाई-भाई का।
सब ही एक समान सभी, जगदीश्वर की संतान॥
सदाचार अपनायें सब, जन-प्रभु के साझेदार बनें।
अनाचार से नाता तोड़ें, नैतिक बनें उदार बनें।
सादा जीवन बने सभी का, फैले फिर सद्ज्ञान॥

हमें व्यक्तित्व गढ़ना है

व्यक्तित्व को हमारे, गढ़ना हमें पड़ेगा।
सोपान साधना के, चढ़ना हमें पड़ेगा।
है फूल वृक्ष पर जो, नभ से नहीं टपकते।
वरदान से किसी के फल भी नहीं लटकते॥
बस वृक्ष की जड़ें ही रस खींचती धरा से।
व्यक्तित्व की जड़ों तक बढ़ना हमें पड़ेगा॥ सोपान
अन्दर छिपा हुआ जो, जीवन्त देवता है।
वही शक्ति का खजाना, इसका जिसे पता है॥
वह सिद्धियां संजोता है, आत्म साधना से॥
मिलता अकूत बल है, जिसकी उपासना से॥
साधक समान, पीछे पड़ना हमें पड़ेगा॥
व्यक्तितत्व कर परिष्कृत, चुम्बक उसे बनायें।
फिर दिव्य शक्तियों के, अनुदान खींच लायें।
सोया हुआ उदय का, देवता हम जगायें।
अपनी वसुन्धरा को, फिर स्वर्ग सा सजायें।
व्यक्तित्व का नगीना, जड़ना हमें पड़ेगा॥

युग की यही पुकार

युग की यही पुकार, बसन्ती चोला रंग डालो।
त्याग–तितीक्षा का रंग है यह, सुनो जगत वालों॥ बसन्ती चोला रंग डालो॥
इस चोले को पहन भगत सिंह, झूला फाँसी पर।
इस चोले का रंग खिला था, रानी झाँसी पर॥
त्याग और बलिदान न भूलो, ऊँचे पद वालो ॥ बसन्ती चोला ०
वासन्ती चोले को, भामाशाह ने अपनाया।
नरसी का चोला तो सबसे, अद्‌भुत रंग लाया॥
इस चोले से बढ़े द्रव्य की, शोभा धन वालो।बसन्ती चोला ०
इसे पहन कर हरिश्चन्द्र ने, सत्य नहीं छोड़ा।
चली अग्नि–पथ पर तारा ने, पहना यह चोला॥
मानवीय गरिमा न भुलाओ, भटके मन वालों॥ बसन्ती चोला ०
भूल गये हम अपना पौरुष, गये अनय से हार।
हुए संकुचित हृदय हमारे, बन बैठे अनुदार॥
लेकिन, अब तो दिशा बदल कर, बढ़ो लगन वालों। बसन्ती चोला ०

इन्सान बदलना है

खेत खलिहान बदलना है, हमें इन्सान बदलना है।
बदलने यह सारा संसार, हमें काँटों पर चलना है॥
सूरज कहता है जागो, युग–युग की तंद्रा त्यागो।
नूतन आलोक जगाओ, जग का अज्ञान मिटाओ।
गाओ नये सृजन के गीत, नया निर्माण करना है।
बदलने यह सारा संसार, हमें काँटों पर चलना है॥
उल्लास भरो जन–जन में, विश्वास भरो कण–कण में।
श्रम को ही जीवन मानो, पौरूष का स्वर पहचानो।
मुस्कानों से कैसी प्रीत, हमें शिखरों पर गलना है।
बदलने यह सारा संसार, हमें काँटों पर चलना है॥
आलस्य अविद्या छोड़ो, साहस से युग–पथ मोड़ो।
मृतकों में प्राण भरो रे, युग का निर्माण करो रे।
मत डरो ताप से शीत से, हमें आँधी में पलना है।
बदलने यह सारा संसार, हमें काँटों पर चलना है।।

उठो सुनो प्राची से उगते

उठो सुनो प्राची से उगते, सूरज की आवाज।
अपना देश बनेगा, सारी दुनियाँ का सरताज॥
देश की जिसने सबसे पहले, जीवन ज्योति जलायी।
और ज्ञान की किरणें सारी, दुनियाँ में फैलायीं॥
लोभ मोह के भ्रम से सारे, जग को मुक्त कराया।
भ्रातृ भावना का प्रकाश, सारे जग में फैलाया॥
अगणित बार बचाई जिसने, मानवता की लाज। अपना देश ......
इतना प्रेम की पशु-पक्षी तक, प्राणों से भी प्यारे।
इतनी दया कि जीव मात्र सब, परिजन सखा हमारे॥
श्रद्धा अपरम्पार की पत्थर, में भी प्रीति जगाई।
और पराक्रम ऐसा जिसकी, रिपु भी करे बड़ाई॥
उसी प्रेरणा से रच दें, हम फिर से नया समाज। अपना देश ......
मानवता के लिए हड्डियाँ, तक जिसने दे डाली।
माताओं की हुई अनेकों, बार गोदियाँ खाली।
पर न पाप के आगे उनने, अपना शीश झुकाया।
संस्कृति का सम्मान बढ़ाने, हँस-हँस शीश कटाया॥
रहे शिवाजी अर्जुन जैसा, निज चरित्र पर नाज। अपना देश ......
दिया न्याय का साथ भले ही, हारे अथवा जीते।
गिद्ध गिलहरी तक न रहे थे, परमारथ से पीछे।
इसी भूमि में वेद पुराणों, ने भी शोभा पाई।
जन्म अनेकों बार यहीं, लेते आये रघुराई॥
स्वागत करने को नवयुग का, नया सजायें साज। अपना देश ......
सोये स्वाभिमान को आओ, सब मिल पुनः जगायें।
नव जागृति के आदर्शों को, दुनियाँ में पहुँचायें।
ज्ञान यज्ञ की यह मशाल, हर लेगी युग तम सारा।
हम बदलेंगे युग बदलेगा, आज लगायें नारा॥
सुनो अरे! युग का आवाहन, कर लो प्रभु का काज। अपना देश ......

भारत वर्ष हमारा प्यारा

भारत वर्ष हमारा प्यारा, अखिल विश्व से न्यारा।
सब साधन से रहे समुन्नत, भगवन् देश हमारा॥

ब्रह्मतेज युत साधक हों सब, सदा लोक हितकारी।
क्षात्रधर्म रक्षक हो सबका, बने न्याय व्रतधारी।
प्रकृति हमारी गौ बनकर दे, मधुर सरस पय धारा॥ भारत..........।

वृषभ तुल्य बलवान् सभी हों, श्रम फिर गौरव पाये।
अश्वों में संचार साधनों में, विद्युत गति आये।
घटें दूरियाँ सभी, सभी को, देते रहें सहारा॥ भारत..........।

देवी जैसी बनें नारियाँ, शक्तिवती गुण आगर।
नर-रत्नों की हों खदान घर, विकसित हों नर-नागर।
जिनकी गुणगाथा से गूँजित, दिग-दिगन्त हो सारा॥ भारत..........।

यज्ञ निरत भारत के सुत हों, शूर सुकृत अवतारी।
सभ्य, सुसंस्कृत कर्मशील हों, गुणी, सरल सुविचारी।
वही बनेंगे फिर नवयुग के, पावन सुदृढ़ सहारा॥ भारत..........।

प्रकृति बने माँ, ऋतुएँ दें, अनुदान समय पर सुन्दर।
खनिज, अन्न, फल, औषधियाँ, सब मिलें प्रचुर हो सुखकर।
योग हमारा, क्षेम हमारा, स्वत: सिद्ध हो सारा॥ भारत..........।

रंग न उभरे यदि पीड़ा का चित्रकार के हाथ से।
प्रकट न हो श्रद्धा-सुचिता की देवी उसके माथ से।
प्रतिभा गई निरर्थक समझो कला रही उसकी क्वारी।
चित्रकार वह निपट बन गया पैसों का ही व्यापारी॥

युग-युग से हम खोज रहे हैं

युग-युग से हम खोज रहे हैं, सुरपुर के भगवान को।
किन्तु न खोजा अब तक हमने, धरती के इंसान को॥

चर्चा ब्रह्म ज्ञान की करते, किन्तु पाप से तनिक न डरते।
राम-नाम जपते हैं दुःख में, साथी हैं रावण के सुख में।
प्रतिमाएँ रचकर देवों की, पूजा है पाषण को।
किन्तु न पूजा अब तक हमने, धरती के इंसान को॥

शबरी-केवट के गुण गाये, खूब रीझकर अश्रु बहाये।
पर जब हरि को भोग चढ़ाया, तब सब को दुत्कार भगाया।
तिलक लगाकर अपने उर में, पाला है शैतान को।
किन्तु न पाला अब तक हमने, धरती के इंसान को॥

खोजे मंदिर-मस्जिद-गिरजे, अनगिनते परमेश्वर सिरजे।
किन्तु कभी ईमान न खोजा, कभी खेत-खलिहान न खोजा।
दुनियाँ के मेले में देखा, नित्य नये सामान को।
किन्तु न देखा अब तक हमने, धरती के इंसान को॥

खोजा हमने जिसे भजन में, छिपा रहा वह तो क्रन्दन में।
हमने निशि-दिन धर्म बखाना, लेकिन कर्म नहीं पहचाना।
पैसा पाया, प्रतिभा पायी, पाया है विज्ञान को।
किन्तु न पाया, अब तक हमने, धरती के इंसान को।
युग-युग से हम खोज रहे हैं............................॥

यह मत कहो कि जग में कर सकता क्या अकेला।
लाखों में वार करता है सूरमा अकेला॥
आकाश में करोड़ों तारे जो टिमटिमाते।
अंधियारा जग का हरता है चन्द्रमा अकेला।

हमारा है यह दृढ़ संकल्प नया संसार बसाएंगे।

हमारा है यह दृढ़ संकल्प, नया संसार बसाएंगे।
नया इन्सान बनायेंगे॥ नया संसार बसाएंगे॥

क्षीर सागर में सोया जो, उसे झकझोर जगायेंगे।
उसे प्रिय है केवल इन्साफ, जगत को यह समझायेंगे।
कर्मफल देना जिसका काम, नया भगवान बनायेंगे॥

विषमता नहीं टिकेगी कहीं, एकता समता लायेंगे।
न होगा नारी का अपमान, उसे गुणखान बनायेंगे।
निकम्मे प्रचलन बदलेंगे, धरा को स्वर्ग बनायेंगे॥

न आलस बरतेगा कोई, उठेंगे और उठायेंगे।
पसीने की रोटी पर्याप्त, मुफ्त का माल न खायेंगे।
करे जो आदर्शों से प्रीति, नया ईमान बनायेंगे।

चलेंगे नहीं छद्म-पाखण्ड, सच्चाई सब अपनायेंगे।
भ्रान्तियों की न गलेगी दाल, ज्ञान के दीप जलायेंगे।
बढ़ेंगे अन्धकार को चीर, नया अभियान रचायेंगे॥

उनींदे नहीं रहेंगे हम, जगेंगे और जगायेंगे।
रहेंगे हिलमिलकर सब एक, हँसेंगे और हँसायेंगे।
करे जो दुर्गा को साकार, नया सहकार जगायेंगे॥

लंकापुरी जलाकर, रावण का मद मिटाकर।
हनुमान राम दल को, वापिस चला अकेला॥
निज दूर करके तम को, देता प्रकाश हमको।
वह सूर्य देव देखो, चलता सदा अकेला॥

जब तक मिले न लक्ष्य

जब तक मिले न लक्ष्य बटोही - आगे बढ़ते जाओ।
खुला हुआ है द्वार प्रगति का - निर्भय कदम बढ़ाओ॥

भय से रुकना नहीं, आंधियाँ चाहें कितनी आयें।
रूके नहीं पग पथ पर, चाहे टूट पड़ें विपदायें।
संकल्पों में शक्ति न हो, सामर्थहीन हो वाणी।
नहीं जमाने को बदले जो, वह क्या खाक जवानी।
सिद्धि स्वयं दौड़ी आयेगी - अपनी भुजा उठाओ।
खुला हुआ है द्वार प्रगति का, निर्भय कदम बढ़ाओ॥

हो निज पर विश्वास दृष्टि से-लक्ष्य नहीं ओझल हो।
मोड़ें जग की राह, चाह में इतनी शक्ति प्रबल हो।
कांटो भरा देख पथ तुमने, हिम्मत अगर न हारी।
चलते रहे विराम-रहित तो, होगी विजय तुम्हारी
नभ में उड़ो सुदूर गगन में, तोड़ सितारे लाओ।
खुला हुआ है द्वार प्रगति का, निर्भय कदम बढ़ाओ॥

खोना मत उत्साह, न नाता मुस्कानों से टूटे।
डूब रही हो नाव भंवर में, फिर भी धैर्य न छूटे।
जलते हुए अंगारे हों, या बर्फीली चट्टानें।
बढ़ते ही जाना रुकना मत, अपना सीना ताने।
कमर बांधकर चले अगर तो, फिर मत पीठ दिखाओ।
खुला हुआ है द्वार प्रगति का, निर्भय कदम बढ़ाओ॥

जिसमें पनपे नैतिकता, वह भवन नया निर्माण करेंगे।
साहस, बल, पुरुषार्थ जुटा, तन की ईंटों से नींव भरेंगे।
रच डालेंगे चिर नूतन इतिहास, क्रिया का सम्बल लेकर।
एक नया संघर्ष सृजन का, होगा अब प्राणों में प्रतिपल।

सच्चा मानव बन जायें।

पाषाण पूजने क्यों कर जाना पड़े हमें।
नर के स्वरूप में यदि नारायण मिल जायें॥

तुम बातें करते बड़े-बड़े निर्माणों की,
तुम बातें करते बड़े-बड़े सोपानों की।
तुम बातें करते बड़े-बड़े बलिदानों की,
तुम बातें करते बड़े-बड़े प्रतिदानों की,
क्रय करने पड़ें, हमें क्यों नीवों के पत्थर।
यदि निष्ठा सबकी, कर्मयोग में हो जाये॥

युग माँग रहा चेतना नई विश्वास नया।
युग माँग रहा भावना नई उल्लास नया।
युग माँग रहा नव जीवन का आभास नया।
युग माँग रहा है क्रिया नयी इतिहास नया।
हम अगर तोड़ दें सड़ी गली रुढ़ियाँ सखे।
तो आगे बढ़ने का प्रशस्त पथ हो जाये॥

हम चाहें यदि पर्वत को धूल बना डालें।
हम चाहें यदि पत्थर को फूल बना डालें।
हम चाहें यदि इंगित को शूल बना डालें।
हम चाहें यदि भँवरों को कूल बना डालें।
हम देवों का भी स्वर्ग उतारें धरती पर,
मानव यदि फिर से सच्चा मानव बन जाये॥

बस एक बार उठ पड़ो सामने आ जाओ।
बस एक बार उठ पड़ो गगन पर छा जाओ।
बस एक बार उठ पड़ो केसरी बन जाओ।
बस एक बार उठ पड़ो काल से लड़ जाओ।
मिट जाए कालिमा कायरता जन जीवन से,
हम ऐसी ज्योति चेतना बनकर छा जायें॥

कण कण में आनन्द भरा है

कण कण में आनन्द भरा है लूटें और लुटायें।
आओ दुनियाँ स्वर्ग बनायें॥

वर्षा मीठा नीर पिलाती, धरती मैया अन्न खिलाती
मैया जो कुछ देती हमको, बाँट-बाँट कर खायें। आओ....
परम मित्र ये वृक्ष हमारे, जीवन के अनमोल सहारे।
फूल खिलाते, फल भी देते, देख-देख मुस्कायें। आओ....
आसमान सुन्दर महफिल है, तारों की झिलमिल-झिलमिल है।
बरस रहा आनन्द स्वर्ग से, आनन्दी बन जायें। आओ....
जग तो है आनन्द मय, मन ही करता दुःख, द्वन्द, भय।
मन को अगर जीत लें हम तो, स्वर्ग यहीं ले आयें। आओ....
सबसे मीठी बोली बोलें, कपट छोड़ अपना दिल खोलें।
प्रेम बढ़ायें विनय दिखायें, वत्सलता विकसायें। आओ.....
झूठे सब मद मोह छोड़कर, मानवता से प्रेम जोड़कर।
जग को एक कुटुम्ब समझकर, हिलमिल हँसे हँसायें। आओ....

धनी हृदय

हम धनी न चाहें हों धन के, पर हृदय धनी होवे।
हम हँसें न चाहे सुख पाकर, पर, पर दुःख में रोवें।

हम कृषक बनें तो हृदय खेत में, प्रेम बीज बोवें।
हम सदा जागते रहें देश हित, कभी नहीं सोवें।
हम धनी, निर्धनी, सुखी, दुःखी, जैसे हों वैसे हों।
पर काम आ सकें कुछ स्वदेश के प्रभु हम ऐसे हों।
हम योगी हों तो सब बिछुड़ों का, योग मिला देवें।
हम वक्ता हों तो वाणी से, अमृत बरसा देवें।
हम हों ऐसे गुणवान रेत में, पुष्प खिला देवें।
हम बली बहादुर हों ऐसे, ब्रह्माण्ड हिला देवें।

हमको अपने भारत की मिट्टी

हमको अपने भारत की मिट्टी से अनुपम प्यार है।
अपना तन मन जीवन सब, इस मिट्टी का उपहार है॥

इस मिट्टी में जन्म लिया था, दशरथ नन्दन राम ने।
इस धरती पर गीता गाई, यदुकुल भूषण श्याम ने।
इस धरती के आगे मस्तक झुकता बारम्बार है॥

इस माटी की जौहर गाथा, गाई राजस्थान ने।
इसे बनाया पावन, गाँधी के महान बलिदान ने।
मीरा के गीतों की इसमें छिपी हुई झंकार है॥

इस मिट्टी की शान बढ़ायी, तुलसी, सूर, कबीर ने।
अर्जुन, भीष्म, अशोक, प्रतापी, भगत सिंह से वीर ने।
इस धरती के कण-कण में, शुभ कर्मों का संस्कार है॥

कण-कण मन्दिर इस माटी, का कण-कण में भगवान है।
इस मिट्टी का तिलक करो, ये अपना हिन्दुस्तान है।
इस माटी का हर सपूत, भारत का पहरेदार है॥

चन्दन सी इस देश की माटी तपोभूमि हर ग्राम हो

चन्दन सी इस देश की माटी तपोभूमि हर ग्राम हो।
हर नारी देवी की प्रतिमा, बच्चा-बच्चा राम हो।

जिसके सैनिक समर भूमि में, गाया करते थे गीता।
जहाँ खेत में हल के नीचे, खेला करती थी सीता।
जीवन का आदर्श जहां पर, परमेश्वर का काम हो॥

यहाँ कर्म से भाग्य बदल देती, श्रम निष्ठा कल्याणी।
त्याग और तप की गाथाएँ, गाती थी कवि की वाणी।
ज्ञान जहाँ का गंगा जल सा, निर्मल हो अविराम हो॥

रही सदा मानवता वादी, इसकी संस्कृति की धारा।
मिलकर रहना सीखें फिर से, मस्जिद गिरिजा गुरुद्वारा।
मानवीय संस्कृति का फिर सारे जग में गुण गान हो॥

हर शरीर मन्दिर सा पावन, हर मानव उपकारी हो।
क्षुद्र असुरता को ठुकरा दे, प्रभु का आज्ञाकारी हो।
जहाँ सबेरा शंख बजाता, लोरी गाती शाम हो॥

ओ सपूतो भारत की तकदीर बना दो।

ओ सपूतो भारत की तकदीर बना दो।
हम ऋषियों की संतान हैं, दुनिया को दिखा दो॥

छोड़ विदेशी चकाचौंध को, अपना गौरव देखो॥
बन्धन जो रोकें हैं गति को, उनको तोड़ो फेंकों।
जन-जन में फिर देवों सा, ईमान जगा दो।
हम ऋषियों की संतान हैं, दुनिया को दिखा दो॥

छोड़ याचना देना सीखो, देवभूमि के वासी,
खिले फूल सी जिओ जिन्दगी, कर दो दूर उदासी,
देव भूमि की दिव्य प्रेरणा, फिर भू पर फैला दो।
हम ऋषियों की सन्तान हैं, दुनिया को दिखा दो॥

युग ऋषि ने आह्वान किया है, आदर्शों की राह पर,
आज लगा दो अंकुश पैना, क्षुद्र स्वार्थ की चाह पर।
त्याग तपस्या की सुगन्धि से, फिर भू को महका दो।
हम ऋषियों की सन्तान है, दुनिया को दिखा दो॥

नये सृजन की नई उमंगे, लेकर आगे आओ,
खुला मोर्चा निर्माणों का, मिलकर कदम बढ़ाओ।
रामराज्य के सपनों को, सच करके दिखा दो।
हम ऋषियों की सन्तान हैं, दुनिया को दिखा दो॥

हृदय हृदय में दीप जलें जो, अन्तर का अज्ञान मिटा दें।
नयन-नयन में निर्माणों के, सुन्दर मनहर स्वप्न सजा दें।
सबको दें विश्वास लक्ष्य का, और सतत चलने का साहस।
ज्योति भरें ऐसी जीवन में, कभी न आये गहन अमावस ।
आओ हर घर - आँगन में, आज खुशी के फूल खिलायें।।
चलो नया संसार बसायें, चलो नया संसार बसायें।।

आज दाँव पर लगा देश का,

आज दाँव पर लगा देश का, स्वाभिमान सेनानी।
और पड़ा सोया तू कैसे, जाग वीर बलिदानी॥ सोया जाग .....

भारत माँ ने था तुझको, पौरुष का पाठ पढ़ाया।
बलिपथ पर तूने आगे ही, आगे कदम बढ़ाया॥
लेकिन आज कौन सी तुझपर, हाय पड़ गई छाया।
सबकुछ लुटा जा रहा, लेकिन तुझको होश न आया॥
रे दृग खोल और पढ़ पिछली गौरवपूर्ण कहानी।
और पड़ा सोया तू कैसे, जाग वीर बलिदानी॥

विदेशियों के छद्म जाल में फँसा देश यह सारा।
असम और पंजाब कट रहा है कश्मीर हमारा॥
भाई को भाई से अपने लड़वाते कटवाते।
हाय हन्त हम किन्तु न उनकी चाल समझ हैं पाते॥
अपने ही सब रिश्ते - नाते टूट रहे जिस्मानी।
और पड़ा सोया तू कैसे जाग वीर बलिदानी॥

अपराधों का असुर चतुर्दिक, झंडा गाड़ रहा है।
बहन बेटियों की इज्जत से, हो खिलवाड़ रहा है॥
हाहाकार मचा धरती में,भारी मारा-मारी।
ऋषियों की संतानों! तुम पर क्यों चढ़ रही खुमारी॥
जाग राष्ट्र के पौरुष जागे सोयी हुई जवानी॥
और पड़ा सोया तू कैसे जाग वीर बलिदानी॥

सूरज रुके चन्द्रमा रोये, रीते सागर का जल।
आज हवाओं में करनी है फिर से ऐसी हलचल॥
इज्जत लगी दाँव पर अपनी जागो उसे बचाओ।
नई विचार क्रांति का आओ, फिर से बिगुल बजाओ॥
उदासीन अर्जुन फिर से पढ़ गीता वाली वाणी।
और पड़ा सोया तू कैसे, जाग वीर बलिदानी।

किसी के काम

किसी के काम जो आये उसे इन्सान कहते हैं।
पराया दर्द अपनाये उसे इन्सान कहते हैं॥

कभी धनवान है कितना कभी इम्सान निर्धन है।
कभी सुख है कभी दुःख है इसी का नाम जीवन है।
जो मुश्किल में न घबराये उसे इन्सान कहते हैं।
किसी ने काम जो ....
यह दुनियाँ एक उलझन है कहीं धोखा कहीं ठोकर
कोई हँस-हँस के जीता है कोई जीता है रो रो कर॥
जो गिरकर फिर संभल जाये उसे इन्सान कहते हैं।
किसी ने काम जो..........
अगर गलती रुलाती है तो राहें भी दिखाती है
मनुज गलती का पुतला है वो अक्सर हो ही जाती है
जो करले ठीक गलती को उसे इन्सान कहते हैं॥
किसी ने काम जो ....
यों भरने को तो दुनियाँ में पशु भी पेट भरते हैं।
लिए इनसान का दिल वो जो नर परमार्थ करते हैं।
पथिक जो बाँट कर खाये उसे इन्सान कहते हैं।
किसी ने काम जो ....

सफलता के सात सूत्र-साधन

जिसके जीवन में यह सात सूत्र हैं वह जीवन में कभी असफल नहीं हो सकता।

१. परिश्रम एवं पुरुयषार्थ
२.आत्मविश्वास एवं आत्मनिर्भरता
३. जिज्ञासा एवं निष्ठा
४. त्याग एवं बलिदान
५. स्नेह एवं सहानुभूति
६. साहस एवं निर्भयता
७. प्रसन्नता एवं मानसिक संतुलन

– 'सफलता के सात सूत्र-साधन' पुस्तक से

चतुर्थ अध्याय

जीवन विद्या

शिक्षा और विद्या में मौलिक अन्तर है। शिक्षा उसे कहते हैं जो जीवन के बाह्य प्रयोजनों को पूर्ण करने में सुयोग्य मार्गदर्शन करती है। साहित्य, शिल्प, कला, विज्ञान, उद्योग, स्वास्थ्य, समाज आदि विषय शिक्षा की परिधि में आते हैं। विद्या का क्षेत्र इससे आगे का है- आत्मबोध, आत्मनिर्माण, कर्त्तव्य निष्ठा, सदाचरण, समाज-निष्ठा आदि वे सभी विषय विद्या कहे जाते हैं, जो व्यक्ति के चिन्तन, दृष्टिकोण एवं सम्मान में आदर्शवादिता और उत्कृष्टता का समावेश करते हैं। **विद्या** दया, करुणा, ममता, उदारता, परमार्थ-परायणता, सेवा-सहकारिता, शिष्टता, शालीनता, चरित्र-निष्ठा, शौर्य-साहस, न्याय-प्रियता, सुव्यवस्था, समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, बहादुरी जैसे गुणों का विकास करती है।

शिक्षा और विद्या दोनों के समन्वय से ही व्यक्ति जीवन जीने की कला सीखता है। अतः यह परम आवश्यक है कि बालकों में बपचन से ही शिक्षा के साथ-साथ विद्या का भी सवंर्धन किया जाए, ताकि वे बड़े होकर एक सफल व्यक्ति, महामानव बन सकें। इसके लिए सबसे पहली आवश्यकता है सुव्यवस्थित जीवन-विद्या अध्याय में बालकों के लिए एक व्यवस्थित दिनचर्या एवं अभ्यास क्रम दिया गया है, जिसे जीवन में अपनाने हेतु बालकों को प्रयत्न करना है। इससे बालकों के जीवन में सुव्यवस्था, नैतिकता, आस्तिकता, कर्त्तव्य परायणता जैसे गुणों का विकास होगा। आचार्य एवं अभिभावक उन्हें किस प्रकार सहयोग करें, इस हेतु मार्गदर्शन देने का भी प्रयास किया गया है।

१. जागरण

आचार्य क्या करें ?

-सूर्योदय के पूर्व जागने के लाभ बतायें।

-संसार के समस्त जीव जन्तु सूर्योदय के पूर्व जाग जाते हैं।

-प्रातः प्राणवायु स्वास्थ्यवर्धक एवं प्राणवर्धक होती है।

-प्रातः जगने वाला व्यक्ति स्वस्थ समृद्ध एवं बुद्धिमान बनता है।

-प्रातः सूर्योदय से पूर्व जागने से शरीर में ऐसे हारमोन्स निकलते हैं, जो व्यक्ति को

सदाचारी एवं कर्त्तव्यनिष्ठ बनाने में मदद करते हैं।

-हमारे ऋषि, महामानव, अवतार सूर्योदय से पहले जागते थे। (स्व-विवेक एवं स्वाध्याय से उदाहरण प्रस्तुत करें)

-प्रातः सूर्योदय पूर्व जागरण हेतु छात्रों से संकल्प करायें।

-कर (हाथ) दर्शन का महत्व छात्रों को समझायें।

-हाथ मनुष्य के कर्म के प्रतीक हैं।

-अपना भला-बुरा इन्हीं हाथों से करते हैं, अतः हमारे हाथ पवित्र और परिश्रमी बनें।

-निम्नलिखित मंत्र याद कराएँ।

कराग्रे वस्ते लक्ष्मीः कर मध्ये सरस्वती।
कर मूले गोविन्दः प्रभाति कर दर्शनम्॥

भावार्थ-हाथों के अग्रभाग पर लक्ष्मी, मध्य में सरस्वती और मूल में गोविन्द का निवास है।

-व्यवस्थित और अव्यवस्थित जीवन के अलग-अलग चार्ट छात्रों को दिखाकर व्यवस्थित जीवन के प्रति उन्हें प्रेरित करें।

-आत्मबोध की साधना का स्वरूप सरल शब्दों में समझायें। हर दिन नया जन्म और हर रात नयी मौत है। (मनुष्य की आत्मा परमात्मा का अंश है, मनुष्य भगवान का राजकुमार है, महान है तथा अपने भाग्य का निर्माता आप है।)

-दिनभर की दिनचर्या का स्वरूप छात्रों को स्पष्ट करें अच्छे काम करने और बुरे काम से बचने की संकल्पशक्ति का विकास करायें।

-धरती माता को नमन् के मंत्र का अभ्यास कराएँ।

सत्यं वृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः, पृथिवीं धारयन्ति।
सा नो भूतस्य भव्यस्य, पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु॥
नमस्तस्यै, नमस्तस्यै, नमस्तस्यै नमो नमः।

अथर्ववेद १२/१/१

भावार्थ- सत्य निष्ठा, विस्तृत यथार्थ बोध, दक्षता, क्षात्रतेज, तपश्चर्या, ब्रह्मज्ञान और त्याग-बलिदान, ये भाव मातृभूमि का पालन-पोषण और संरक्षण करते हैं। (इन्हीं गुणों से धरती माता प्रसन्न होती है।) भूतकालीन और भविष्य में होने वाले सभी जीवों का पालन करने वाली मातृभूमि हमें विस्तृत स्थान, उदार हृदय प्रदान करे। माँ पृथ्वी हम आपको बारम्बार प्रणाम करते हैं।

महत्व समझायें-

पृथ्वी हमारी माता है, जो हमें अन्न, जल एवं वस्त्र प्रदान करती है हमें जीवन भर धारण करती है तथा हमारा पालन-पोषण करती है, भारत भूमि देवभूमि है, जिस पर अनेक अवतारों ऋषियों एवं महापुरुषों ने जन्म लिया है।

बालक क्या करें?

- प्रातः सूर्योदय के पूर्व संकल्प पूर्वक जागें।
- यह न सोचें कि हमें कोई जगायेगा तब ही उठेगें। स्वयं ही उठ जायें। यदि घड़ी हो तो स्वयं घड़ी अलार्म भर कर अपने पलंग के पास स्टूल आदि पर रखें, जैसे ही अलार्म बजे, तुरंत जाग जायें, उठते ही आलस्य त्यागकर बिस्तर पर बैठ जायें, कमरे में लगे सूर्योदय व गायत्री माता के चित्र का दर्शन करें।
- दोनों हथेलियाँ आपस में रगड़ कर चेहरे पर, आँखों, व कानों पर फिरायें। इससे निद्रा दूर होती है तथा चेतनता आती है।
- दोनों हथेलियों को सामने करके दर्शन करें तथा मंत्र बोलें-

कराग्रे वस्ते लक्ष्मी कर मध्ये सरस्वती।
कर मूले तु गोविन्दः प्रभाते कर दर्शनम्॥

- शान्त बैठकर आंखें बंद कर लें तथा प्रतिदिन नया जन्म मानकर आत्म चिंतन करें, एवं दिन भर अच्छे काम करने का संकल्प करें। दिनभर में क्या-क्या करना है, उसकी मन ही मन योजना बनाएँ। **(इसे आत्मबोध साधना कहते हैं)**
- पृथ्वी माता को प्रणाम करें-

सत्यं वृहदृतमुग्रं दीक्षा तपो ब्रह्म यज्ञः, पृथिवीं धारयन्ति।
सा नो भूतस्य भव्यस्य, पत्न्युरुं लोकं पृथिवी नः कृणोतु॥ नमस्तस्यै...

मंत्र बोलें अथवा गायत्री मंत्र बोलकर बिस्तर त्याग दें।

- रात को सोते समय प्रातः जल्दी उठने का संकल्प करके सोएँ।

माता पिता क्या करें?

-अलार्म घड़ी एवं तांबे के लोटे में जल की व्यवस्था बना दें।
-कमरे में उगते सूर्य का, गायत्री मंत्र का चित्र इस तरह टांगें कि उठते ही उस पर बच्चे की दृष्टि पड़े।
-माता-पिता स्वयं भी सूर्योदय के पूर्व जगें।
-बच्चा जब चरण स्पर्श करे, तो स्नेहपूर्वक उसके सिर पर हाथ फेरकर उसे आशीर्वाद दें।

-जो बच्चों को सिखाते हैं, उस पर बड़ों को भी अमल करना है, तभी वह बच्चे के मन मस्तिष्क पर स्थाई रूप से अंकित होगा, बच्चों के दैनिक क्रियाकलापों में प्रेरणा-प्रोत्साहन दें।

२. सुव्यवस्था

आचार्य क्या करे?

- बच्चों को अपने वस्त्र, जूते, शयन कक्ष एवं परिसर की स्वच्छता एवं व्यवस्था का महत्व बताएँ।
- श्रम के प्रति सम्मान के भाव जगाएँ, श्रमेव जयते।

तुलनात्मक चित्र:-

- एक लड़का कुर्सी पर बैठकर पढ़ रहा है, सामने मेज पर किताबें व्यवस्थित रखी दिखायी दे रही हैं। कमरे में हर वस्तु यथा स्थान रखी है। वस्त्र हैंगर पर टंगे हैं, एक ओर जूते चप्पल लाइन से रखे हैं, कमरे में बिस्तर पर साफ चादर ठीक से बिछी है, सूर्योदय का चित्र टंगा है।
- उपरोक्त के विपरीत अव्यवस्था का चित्र बनाएँ। दोनों का तुलनात्मक दृश्य प्रस्तुत करें।
- बच्चों से निर्णय करायें और जीवन के हर क्षेत्र में व्यवस्थित रहने का संस्कार विकसित करें।

बालक क्या करें ?

- बिस्तर से उठते ही अपने बिस्तर को ठीक करें, तकिया एवं ओढ़नी को व्यवस्थित कर निर्धारित स्थान प्रर रख दें।

माता पिता क्या करें?

- बच्चों को अपने बिस्तर की स्वच्छता आदि छोटे-छोटे कार्य स्वयं करने के लिए प्रेरित करें। प्यार से प्रेरणा दें।

३. ऊषापान

बालक क्या करें?

- बिस्तर से उठकर रात्रि से तांबे के लोटे में रखा जल जितना पी सकें-पियें?

माता पिता क्या करें ? आचार्य क्या करें?

उषापान का लाभ एवं तरीका बतायें। जैसे-

-पेट साफ हो जाता है, कब्ज का नाश होता है,

-शरीर-स्वस्थ्य रहता है, दिनभर ताजगी बनी रहती है।

-पेट से ही अनेक बीमारियाँ पैदा होती हैं अतः ऐसी बीमारियों से रक्षा हो जाती है।
-शरीर की गर्मी शान्त हो जाती है, मन-मस्तिष्क शान्त रहता है।
-जल चिकित्सा विज्ञान का सामान्य ज्ञान दें।

४. माता-पिता को प्रणाम

बालक क्या करें?

- प्रातः जागरण के उपरान्त माता पिता रूपी साक्षात् देवों का चरण स्पर्श कर आशीर्वाद प्राप्त करें।

आचार्य क्या करें?

-माता-पिता को प्रणाम/ चरण स्पर्श का महत्व बतायें।
- मातृ देवो भव, पितृ देवो भव, गुरु देवो भव का भाव समझायें। बड़ों को सम्मान देने का संस्कार विकसित करें।

अभिवादन शीलस्य नित्य वृद्धोप सेविनः
चत्वारि तस्य वर्धन्ते आयु आयुःविद्या यशोबलम्

भावार्थ-जो नित्य प्रणाम करने के स्वभाव वाला और बड़ों की सेवा करने वाला है, उसकी आयु, विद्या, यश, और बल, ये चारों बढ़ते हैं।

उदाहरणः-मार्कण्डेय ऋषि के बचपन का उदाहरण।
- मार्कण्डेय अल्पायु थे। वे नित्य प्रति बड़ों का चरण स्पर्श करते थे। एक दिन एक ऋषि उनके घर पधारे। अपनी आदत के अनुसार बालक मार्कण्डेय ने चरण स्पर्श किया, तो ऋषि ने उन्हें आयुष्मान भवः का आशीर्वाद दे दिया। फलस्वरूप उनके भाग्य का अल्पायु योग समाप्त हो गया और वे पूर्ण आयु को प्राप्त हुए।
- श्री हनुमान द्वारा सुरसा एवं सीता माँ को प्रणाम करने पर उन्हें यश, बल एवं बुद्धि का आशीर्वाद मिला।
-प्रातः व्यक्ति एकदम शान्त होता है तथा प्राण ऊर्जा से संपन्न होता है अतः प्रातःकाल शान्त मन से दिया गया आशीर्वाद फलित होता है।

प्रातःकाल उठि के रघुनाथा नावहि मातु पिता गुरु माथा।

चौपाई का अर्थ बताएँ और चौपाई याद कराएँ।

माता पित्रोस्तुयः पादौ नित्यं प्रक्षालयेत सुतः
तस्य भागीरथी स्मान महन्यहनि जायते।

भावार्थ-जो पुत्र प्रतिदिन माता पिता के चरण छूता है, उसका नित्य प्रति गंगा स्नान हो जाता है।

नास्ति मातुः परं तीर्थं, पुत्राणां च पितुस्तथा।
नारायण समवेताहि, चैव परत्र च॥

भावार्थ- पुत्रों के लिए माता तथा पिता से बढ़कर दूसरा कोई भी तीर्थ नहीं है। माता पिता दोनों इस लोक में और परलोक में भी निःसंदेह नारायण के समान है।

चारि पदारथ कर तल ताके, प्रिय पितु-मातु प्रान सम जाके।
सुनु जननी सोई सुत बड़भागी, जो पितु मातु वचन अनुरागी॥

५. शुचिता

आचार्य क्या करें ?

- आचार्य बतायें कि-शौच के पश्चात् हाथ ठीक से कीटाणुनाशक साबुन या राख से धोना चाहिए। इससे बीमारियाँ नहीं फैलती हैं।
- शौच के पश्चात शौचालय में पर्याप्त पानी डालकर साफ कर दें।
- शौचालय में अनावश्यक चेष्टाएँ न करें जैसे-बात करना, पेपर पढ़ना आदि।
- दंत मंजन/ब्रश करने का सही तरीका बताएँ। दातुन-ब्रश हल्के हाथों से करें। सामने और पीछे दोनों ओर से दाँतों को साफ करें। मसूड़ों की मालिश अंगुली से करें, मंजन करते समय यहाँ-वहाँ न घूमें, दातों की सफाई न होने से उनमें अन्न कण फँसे रह जाते हैं, जिनमें सड़न होती है, दाँतों में कालापन पैदा होता है। दाँत सड़ते हैं, उनमें छेद (केविटी) हो जाते हैं तथा दर्द देते हैं, अतः कुछ भी खाने के बाद अच्छे से कुल्ला करना चाहिए।

-टूथ पेस्ट की तुलना में मंजन/दातुन ज्यादा गुणकारी है। नीम, बबूल एवं करंज के पेड़ों की नरम डंडियों की दातुन बनाकर बताएँ। उसे चबाकर एक सिरे पर ब्रश बना लें, उससे हल्के-हल्के एक-एक दाँत घिसें, ऊपर एवं आगे पीछे साफ करें। जीभी से जीभ साफ करें। तीन उंगलियों से जीभ को रगड़कर कुल्ला करें, अंगूठे से तालू साफ करें।

-आँखों पर ठण्डे पानी का छींटा लगाने की प्रक्रिया बताएँ। गले का कफ एवं नाक साफ करें।

-मजबूत दाँत और स्वस्थ मसूड़े स्वास्थ्य के आधार हैं, चित्र के माध्यम से समझाएँ।

-गन्दे दाँतों की गन्दगी एवं कीटाणु पेट में पहुँचकर बीमारी पैदा करते हैं। मंजन न करने से मुँह से दुर्गन्ध आती है तथा पायरिया जैसे रोग हो जाते हैं और समय से पूर्व ही दाँत उखड़वाने पड़ते हैं।

बालक क्या करें ?

-प्रातः उषापान के बाद शौच को जाएँ।

-शौचालय में शान्त बैठें, शौच के बाद शौचालय में पानी डालें।

-कीटाणुनाशक साबुन, राख या शुद्ध मिट्टी से हाथ धोएँ।

-दन्त मंजन, आयुर्वेदिक मंजन, बबूल या करंज की दातुन अथवा ब्रश से दाँत साफ करें।

-अपने वस्त्रों, जूतों की सफाई, शयन कक्ष की सफाई स्वयं करें। सप्ताह में एक दिन शौचालय एवं स्नानगृह की सफाई करें।

-मालिश एवं व्यायाम तथा दस मिनट प्रज्ञायोग करें।

-**स्नान**-ताजे या गुनगुने जल से शरीर रगड़कर स्नान करें। बाल धोने के लिए शिकाकाई रीठा एवं आँवले का पाउण्डर, मुलतानी मिट्टी आदि का उपयोग करें।

-स्वच्छ एवं धुले हुये वस्त्र पहनें। बालों में तेल लगाएँ एवं कंघी करें। बाल छोटे रखें।

विशेषः-उपरोक्त दिनचर्या को अपनाने हेतु अपने भाई-बहिनों को सहयोग करें। ऐसा न हो कि स्वयं के कारण परिवार के अन्य व्यक्तियों को असुविधा हो।

माता पिता क्या करें?

-शौच के उपरान्त बच्चे को ठीक से हाथ धोना सिखाएँ।

-आयुर्वेदिक मंजन, दातुन, ब्रश बच्चे की आयु के अनुरूप उपलब्ध कराएँ, ब्रश करना सिखाएँ।

-कुछ भी खाने के उपरान्त कुल्ला कर दाँत साफ करने की आदत डालें।

-प्रत्येक क्रिया हेतु सुविधा व व्यवस्था बनाएँ।

-बाल धोने हेतु आयुर्वेदिक पाउडर तैयार करके रखें।

-स्वयं भी स्वदेशी बनें एवं उसमें गौरव अनुभव करें, तथा बच्चों को प्रोत्साहित करें।

-योगासन का अभ्यास स्वयं भी करें और बच्चों से भी करवाएँ। बच्चा देखकर सीखता है।

-बालक के अन्य भाई-बहिन भी उचित दिनचर्या का अभ्यास करें जिससे बालक को प्रेरणा मिल सके।

- माँ बालक के कपड़ों का ध्यान रखे। धुले एवं स्वच्छ कपड़े ठीक से पहनाएँ।

-घर में स्वच्छता का वातावरण रखें। स्वयं भी व्यवस्थित रहने की आदत डालें।

अ. स्नान

-ताजे पानी से स्नान करें, इससे शरीर में रक्त संचार होता है।

-शरीर को रगड़ कर स्नान करने से मैल, पसीना छूट जाता है, आवश्यकतानुसार ही साबुन का प्रयोग करें।

-बालों को शिकाकाई, आँवला एवं रीठा पावडर से धोएँ। साबुन, शैम्पू से बाल जल्दी सफेद होते एवं झड़ते हैं।

-पानी का अपव्यय न करें। ज़ल ही जीवन है, इसका महत्व समझाएँ।

-नहाने के बाद स्वच्छ एवं नरम सूती तौलिया से रगड़ कर शरीर साफ करें।

चित्र-

-बालक मंजन कर रहा है।

-नल से पानी बाल्टी में भर रहा है, दूसरी ओर बालक रगड़ कर स्नान कर रहा है, तौलिया खूँटी पर टँगी है।

ब. मालिश व्यायाम

तेल मालिश के लाभ-

-त्वचा स्वस्थ एवं कान्तिवान बनती है।

-शरीर में रक्त संचार ठीक होता है।

-शरीर स्वस्थ और लचीला बनता है।

-योग व्यायाम-पुस्तिका अनुसार कक्षा में अभ्यास कराएँ एवं इसके प्रति रुचि जागृत करने हेतु उनके लाभ बताएँ।

-चित्र पोस्टर बनाकर कक्षा में लगाएँ। प्रज्ञायोग के चित्र पोस्टर बनायें।

-अभ्यास कराते समय आवश्यक निर्देश दें।

-आसन धीरे-धीरे करें , अनावश्यक जोर जबरदस्ती से आसन न करें। सही स्थिति में आसन करें। प्रत्येक आसन के बाद गहरी श्वास लेकर विश्राम करें।

-प्राणायाम साथ-साथ करें।

प्राणायाम का सामान्य नियम-

जब आगे की ओर झुकें तो साँस छोड़ते हुए और जब पीछे की ओर झुकें तो साँस भरी रहे।

-आचार्य स्वयं योग का नियमित अभ्यास करें, जिससे बालकों को आसनों संबंधी अनुभव का लाभ मिल सके।

६. उपासना

आचार्य क्या करें ?

- उपासना के मंत्र पवित्रीकरण, आचमन, शिखावंदन, तीन प्राणायाम, न्यास एवं पृथ्वी पूजन के मंत्रों का सही-सही लयबद्ध अभ्यास कराएँ तथा प्रक्रिया एवं उसकी भावना समझायें। इनके साथ उन दैवीय सूत्रों को जीवन में अपनाने हेतु प्रेरित करें।

- पद्मासन/सुखासन में बैठना सिखाएँ। ध्यान मुद्रा सिखाएँ , गायत्री मंत्र एवं अन्य मन्त्रों का अभ्यास कराएँ।

- जप के साथ उगते हुए सूर्य (सविता) का ध्यान करना सिखायें, भाव करें सविता का स्वर्णिम प्रकाश हमारे शरीर में प्रवेश कर रहा है, हम प्रकाशवान् बन रहे हैं, हमारे शरीर में शक्ति, हृदय में भक्ति-संवेदना तथा मस्तिष्क में सद्ज्ञान बुद्धि का विकास हो रहा है। सूर्यार्घ्यदान का मंत्र सिखाएँ। भावना बताएँ कि साधना की ऊर्जा को भगवान् को अर्पण कर रहे हैं। जिससे हमारा और विश्व का कल्याण हो रहा है।

पोस्टर- ध्यान चित्र, ध्यान योग के लाभ का चित्र।

- गायत्री मंत्र एवं उसकी साधना पर प्रकाश डालें।

- श्रीराम, श्रीकृष्ण एवं ऋषियों की उपास्य गायत्री।

विशेष:- विभिन्न धर्म सम्प्रदाय के बच्चे हैं तो केवल सूर्य का ध्यान एवं उसकी शक्ति को आत्मसात् करने की भावना करने को कहें।

बालक क्या करें ?

स्वच्छ आसन पर बैठें। सामने गायत्री मंत्र सहित उगते सूर्य का या अपने इष्ट देव का चित्र रखें। पवित्रीकरण, आचमन, शिखा-वन्दन, प्राणायाम एवं न्यास करें। इष्ट देव को प्रणाम करें। तत्पश्चात् पालथी मारकर (सुखासन में) बैठें, कमर सीधी रखें आँखें बन्द कर मंत्र जप प्रारंभ करें साथ ही उसका अर्थ चिंतन और उगते सूर्य का ध्यान करें। जप-ध्यान पूर्ण होने पर प्रणाम करें। सूर्य नारायण को जल चढ़ाएँ तथा गमले में लगी तुलसी के पांच पत्ते तोड़ कर खाएँ।

- पूजा गृह में देवों को प्रणाम करें व पांच मिनट शान्त बैठकर २४ बार गायत्री मंत्र जप अथवा एक या तीन माला तक जाप नियमित एवं निर्धारित समय पर करें। इससे बुद्धि तीव्र होती है।

माता पिता क्या करें?

- घर में पूजा का स्थान निश्चित हो
- पूजा सामग्री, लोटे में जल, आसन आदि उपलब्ध हो।
- स्वयं भी नित्य उपासना और गायत्री मंत्र / इष्ट मंत्र का जप एवं **ध्यान करें**।
- पूजा की तैयारी माता-पिता करके रखें।
- परिवार का प्रत्येक सदस्य उपासना करे, ऐसा नियम बनाएँ पूजा में बच्चों को साथ बिठाने का प्रयास करें।
- षट्कर्म बच्चे को अपने साथ कराएँ।
- गायत्री मंत्र का भावार्थ सहित चित्र पूजा में रखें।
- घर में तुलसी का पौधा गमले में लगा कर पवित्र स्थान पर रखें।
- तुलसी के चमत्कारी गुण तथा दैनिक उपासना की पुस्तक घर पर रखें।

U. नाश्ता

आचार्य क्या करें ?

- अंकुरित अन्न के लाभ एवं पौष्टिकता के विषय में बताएँ। यह सुपाच्य एवं प्रोटीन, विटामिन, कार्बोहाइड्रेट का भण्डार है। शरीर को निरोग बनाता है, जीवनी शक्ति का विकास करता है, रोग निरोधक शक्ति बढ़ाता है।
- गौ दुग्ध के लाभ बताएँ। गाय का गुनगुना मीठा दूध पीना चाहिए। यह अमृत तुल्य है, पूर्ण भोजन है एवं सुपाच्य है, मेधावर्धक है। जीवनी शक्ति का विकास करता है, शरीर में स्फूर्ति पैदा करता है। भैंस का दूध गरिष्ठ होता है और देर से पचता है।
- गौ माता के विषय में बतायें।

अंकुरित अन्न

नाश्ता हेतु अंकुरित अन्न विधि- मूँग, चना, गेहूँ, सोयाबीन, मैथी, तिल, मूँगफली आदि अपनी रुचि एवं आवश्यकता के अनुसार लेकर साफ करें व धोकर पानी में डाल दें। दूसरे दिन प्रातः उन्हें निकाल कर कपड़े की पोटली में बाँधकर लटका दें तथा दूसरे दिन के लिए दूसरा अन्न भिगो दें। बँधे हुए अन्न से तीसरे दिन अंकुर निकल आते हैं। उसे पानी से धोकर इच्छानुसार नमक, काली मिर्च डालकर खूब चबाकर खायें। इस तरह प्रतिदिन का क्रम बना रहे।

बालक क्या करें?

अंकुरित अन्न, मौसम के फल एवं गाय का दूध नाश्ते में लें।

नाश्ते का समय निश्चित हो।

माता पिता क्या करें?

अन्न को अंकुरित करने का कार्य माँ स्वयं करें।

बच्चे को सुपाच्य एवं सादा भोजन कराएँ।

संभव हो, तो बालक को पीने हेतु गाय का दूध ही दें।

नाश्ते में ब्रेड या रेडीमेड वस्तुएँ प्रयोग न करें। इससे बच्चे की पाचन शक्ति एवं स्वास्थ्य पर विपरीत असर पड़ता है।

अंकुरित अन्न के घटक

विधि १. मूँग, २. चना, ३. मोठ, ४. गेहूँ, ५. मूँगफली/सोयाबीन ६. बरबटी का बीज, ७. अजवाइन, ८. मसूर, ९ मैथी।

८. अध्ययन

आचार्य क्या करें ?

- अध्ययन में अभिरुचि जगाने हेतु विद्या के लाभ बतायें। महापुरुषों-डॉ. राजेन्द्र प्रसाद, लाल बहादुर शास्त्री, ईश्वर चन्द्र विद्यासागर, आदि का उदाहरण प्रस्तुत करें।

- बालक में अध्ययन हेतु अभिरुचि, लगन एवं परिश्रम की भावना का विकास करें। पुस्तकों का महत्त्व बताएँ। ''ये जीवन्त प्रतिमाएँ हैं जिनके सान्निध्य से तुरंत प्रकाश और उल्लास मिलता है।'' पुस्तक पर अनावश्यक कुछ भी न लिखें। पुस्तकें एवं कापियाँ फटी न रहें, बस्ता साफ रखना चाहिए आदि बातों में बच्चों की रुचि जागृत करें।

- एकाग्रता के विकास हेतु ध्यान का अभ्यास कराएँ। इष्ट तथा श्वास प्रश्वास पर ध्यान रखकर मन को एकाग्र करने का क्रम बतायें।

- एकाग्र होकर पढ़ने के लाभ संबंधी चार्ट लगाएँ। इससे शीघ्र याद होता है। स्थायी तौर पर याद होता है।

- एकाग्रता से किया गया कार्य जल्दी पूर्ण होता है।

- एकाग्रता से किया गया कार्य आकर्षक एवं प्रभावी होता है।

- एकाग्रता तनाव से मुक्ति दिलाती है आदि।

बालक क्या करें?

- विद्यालय संबंधी पाठ्य सामग्री का अध्ययन या गृहकार्य नियमित करें।

- अपनी लेखन, पठन सामग्री को जहाँ तहाँ न बिखेरें। उसे व्यवस्थित रखें, जिससे विद्यालय जाने के पश्चात् माँ का अनावश्यक काम न बढ़े।

पढ़ने का ढंग/ अध्ययन का संस्कार

- स्वाध्याय/अध्ययन का अर्थ होता है समझकर पढ़ना।

- पढ़ते-पढ़ते कोई तथ्य समझ में न आ रहा हो, तो तुरंत रुक जाएँ। पुनः पढ़ें तथा उसके अर्थ का चिंतन करें।

- शब्दों एवं वाक्यों के संदर्भ खोजें। संक्षिप्त नोट्स बनाएँ। याद रखने के लिए या स्मृति के विकास के लिए विषय वस्तुओं के प्रमुख बिन्दुओं को रेखांकित करें, फिर उनका क्रम निर्धारित करें और नोट कर लें। परस्पर संबंध जोड़कर याद करें।

- एकाग्रता से पढ़ा गया विषय स्मृति में स्थायी होता है।

माता पिता क्या करें?

-घर में बच्चे का पढ़ने, खेलने, सोने, मनोरंजन आदि का समय सुनिश्चित करें तथा कड़ाई से उसका पालन करें। बालक की पढ़ाई में सहयोग करें। घर में अच्छा प्रेरणादायी साहित्य रखें।

- टी.वी. पर भी अच्छे, प्रेरणादाई एवं ज्ञान संवर्धक जैसे कार्यक्रमों के ही प्रति अभिरुचि विकसित करें। ध्यान रखें बालक व्यर्थ के कार्यक्रमों में समय बर्बाद न करें।

९. आदर एवं आज्ञा पालन

आचार्य क्या करें ?

<u>प्रेरक प्रसंग सुनाएँ:-</u> बड़ों के प्रति आदर एवं छोटों के प्रति स्नेह का संस्कार विकसित करने हेतु मर्यादा पुरुत्तोत्तम श्रीराम की कथा।

-पिता की आज्ञा हेतु वन जाना और राज्य त्यागना स्वीकार किया।

-लक्ष्मण का राम के प्रति त्याग।

-राम का अपने छोटे भाइयों के प्रति प्यार।

-श्रीराम का माता और पिता के प्रति सम्मान का भाव।

-पाण्डवों का अपने बड़ों के प्रति आदर भाव। उनकी आज्ञा का पालन

-पाण्डवों का परस्पर स्नेह आदर।

-आज्ञा पालन और अवज्ञा के चित्र द्वारा तुलनात्मक प्रस्तुतिकरण एवं बालकों से निर्णय।

-गुरु भक्ति, मातृभक्ति के उदाहरण।

आचार्य स्वयं प्रामाणिक एवं उत्कृष्ट जीवन के धनी बनें, जिससे बच्चे उसका अनुसरण कर सकें।

चौपाई- नित्य क्रिया कर गुरु पह आये, चरण सरोज सुभग सिर नाये।
अनुज सखा संग भोजन करहीं, मातु पिता आज्ञा अनुसरहीं।

बालक क्या करें?

-सामान्यतया माता पिता एवं गुरुजनों तथा बड़ों का बालक सदैव आदर करें।
-उनके प्रति पूज्य भाव रखें।
-उनकी आज्ञा पालन में अपना हित समझें।
-कोई हठ न करें, तर्क के लिए तर्क का कुतर्क न करें।
-कोई व्यंग न करें।
-आवेश में न आयें, अपनी बात शान्त भाव से कहें।
-सदैव शालीनतापूर्ण व्यवहार करें।
-पाठशाला जाने के पूर्व माता-पिता के चरण स्पर्श करें तथा पाठशाला पहुँच कर आचार्य को प्रणाम करें।
-बड़ों के प्रति आस्थायुक्त आदर तथा छोटों को आत्मीयता भरा स्नेह करें।
-जो दूसरों को आदर करता है, प्यार करता है, वह दूसरों से आदर और प्यार पाता है।
-बड़ों द्वारा पुकारने पर तुरंत जवाब दें और 'जी' लगाकर ही संबोधित करें।
-बड़ों के साथ चलना पड़े, तो उनके बायीं ओर थोड़ा पीछे चलें।
-कक्षा में या घर में बड़ों के आने पर नम्रतापूर्वक उनका अभिवादन करें।
-छोटों के आने पर उनका कुशल-क्षेम पूछें और सहायता करें।
-माता-पिता और गुरु की आज्ञा को परम कर्तव्य मानकर अविलम्ब पालन करें।

माता पिता क्या करें?

-माता पिता बच्चों के सामने सदैव अपना आदर्श प्रस्तुत करें तभी बच्चे उनसे अच्छी बातें सीख सकेंगे, उनका अनुसरण कर सकेंगे।
-बच्चों के साथ सम्मानजनक व्यवहार करें जिससे उनके भीतर स्वयं के प्रति सम्मान का भाव पैदा हो सके, जिससे वे स्वयं अपना मूल्य समझ सकें।
-बच्चों के साथ समय-समय पर सम्मानजनक व्यवहार की चर्चा करें। उन्हें महापुरुषों के संस्मरण सुनायें।
-लाड़ में बच्चों के नाम बिगाड़ कर न बोलें।
-बच्चों को परस्पर आदर, प्रेम की प्रेरणा दें।
-बच्चों की सुविधा एवं भावना का ध्यान रखें।
-उनके दृष्टिकोण का परिमार्जन प्यार से करें।

-स्वयं भी बड़ों की आज्ञा का पालन और आदर करें।
-किसी के छद्‌म सम्मान का वातावरण न बनावें।
-बच्चों के सामने किसी के प्रति द्वेष दुर्भावना प्रगट न करें।
-किसी की चुगली-बुराई न करें।
-दूसरों के द्वारा किये गए श्रेष्ठ कार्यों की सराहना करें।
-दूसरों के महत्व को स्वीकार करें।

१०. भोजन आहार

आचार्य क्या करें ?

-आचार्य- 'क्या खायें-क्यों खायें एवं कैसे खायें' जैसी पुस्तकों से विभिन्न बिन्दुओं पर चर्चा करें।

चित्रः पेटू बालक एवं स्वस्थ बालक

- अधिक खाने से होने वाली हानियों का चार्ट।
- शाकाहार के लाभ का चार्ट।
- अंकुरित अन्न के लाभ का चार्ट।
- माँसाहार से हानियों का चार्ट।
- गाय के दूध के लाभ का चार्ट।
- बाजार के एवं खुले तैयार भोजन तथा खाद्य सामग्री और घर की शुद्ध सामग्री में अंतर समझायें।
- बालकों को दुर्व्यसनों से दूर रहने की प्रेरणा दें।
- दुर्व्यसनों- पान, गुटका, तम्बाकू आदि से होने वाली हानियों के पोस्टर एवं सूची बनाएँ।

बालक क्या करें?

-भोजन से पूर्व साबुन से हाथ धोएँ, ताकि भोजन के साथ गंदगी/कीटाणु पेट में न जाये।
- भोजन शुरु करने से पूर्व तीन बार गायत्री महामंत्र बोलें और हाथ जोड़कर अन्नदेवता को नमस्कार करें।
-भोजन शान्त चित्त होकर करें। भोजन के समय गुस्सा करने से उसका शरीर पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। अतः भोजन में कोई कमी महसूस हो तो नाक-भोंह न सिकोड़ें, भोजन को प्रसाद मानकर ग्रहण करें।
-शाकाहार निरोग और लम्बे जीवन का आधार है।

-भोजन सादा और सुपाच्य हो।

-तेल में तला,ज्यादा भुना, अधिक मिर्च मसाले वाला भोजन करने से शक्ति घटती है और आँतें खराब होती हैं।

-भूख से थोड़ा कम भोजन करें, ताकि पेट में पानी और हवा के लिए जगह शेष रहे। ठूँस-ठूँस कर भोजन न करें।

-भोजन करते समय जल न पियें, एक घंटे बाद स्वच्छ जल पिया जाए। उसके बाद शाम तक ४ से ६ गिलास पानी पियें।

-भोजन को खूब चबा-चबाकर करें। जल्दी-जल्दी बिना चबाए भोजन निगलने से आँतों को अनावश्यक श्रम करना पड़ता है। आँतों में दाँत नहीं होते।

-भोजन निश्चित समय पर करें, बार-बार न खायें, कम से कम चार घंटे के अंतर पर ही दुबारा कुछ खाएँ।

-भोजन के बाद ठीक से कुल्ला करें। दाँत साफ करें।

-जूठन न छोड़ें।

-तामसी भोजन (माँसाहार) न करें, माँस खाने से उसमें मिले हुए बीमारियों के कीटाणु शरीर में प्रवेश कर जाते हैं।

-पान, गुटका, तम्बाकू आदि नशीली चीजें स्वास्थ्य को चौपट कर देती हैं और कैन्सर जैसे भयानक रोग पैदा करती हैं अत: इनसे बचना ही श्रेष्ठ है। बाजार की खुली चीजों पर मक्खियाँ भिनकती हैं , ऊपर कीटाणु छोड़ देती हैं, इसलिए बाजार की मिठाई आदि खुली बिकने वाली चीजें न खाएँ। मौसम के फल एवं सब्जी का सलाद शक्तिदायक एवं स्वास्थ्यवर्धक होता है, इसलिए भोजन के साथ इनका प्रयोग करना लाभदायक है।

माता पिता क्या करें?

- घर में बच्चों को सादा एवं ताजा भोजन खिलाएँ।
- ब्रेड, टोस्ट, केक की जगह अंकुरित अन्न या ताजा नाश्ता दें।
- स्कूल के टिफिन में तली-भूँजी एवं बाजार की बनी खाद्य सामग्री न रखें।
- मसालेदार भोजन, तेज मिर्च, अचार आदि की आदत न डालें।
- भोजन का समय निश्चित हो।
- देर रात भोजन न दें, आवश्यक हो तब ही दूध, दलिया और हलका भोजन दें।
- भोजन बहुत प्रकार का न हो क्योंकि अलग-अलग पदार्थों को पचाने में अतिरिक्त शक्ति लगती है।

- परिवार का हर आदमी लाड़ से बच्चों को अपने साथ भोजन न कराये। समय से स्वतंत्र रूप से भोजन की आदत डालें।

- भोजन में जबरदस्ती न करें। स्वेच्छा से रुचिपूर्वक भोजन करायें।

- बच्चों को सुसंस्कारी बनाने हेतु जहाँ भोजन का सादा एवं शुद्ध होना आवश्यक है, वहीं इसके उपार्जन का नीति युक्त होना भी आवश्यक है। बच्चों को अनीतिपूर्वक कमाया अन्न न खिलायें।

- भोजन बनाते समय पहली रोटी गौ या पक्षियों हेतु निकाल दें या प्रतिदिन भोजन बनाने से पहले गेहूँ/आटा/चावल में से एक मुट्ठी अन्न दान करें।

- रसोई या पूजा घर में एक घट रखें, जिसमें दान का अन्न इकट्ठा होता रहे। माह के अंत में शक्तिपीठ में या उचित और योग्य स्थान में दान करें।

- भोजन बनने पर घर में पाँच कौर गुड़, घी, मिलाकर अग्नि में आहुति अर्पित करें। (बलिवैश्य यज्ञ) इससे भोजन प्रसाद बन जाता है। इसे खाने वाला सुसंस्कारी बनता है।

- पीने के पानी में तुलसीदल डाल कर रखें। इससे पानी शुद्ध हो जाता है।

- रसोई घर साफ रखें। बच्चों को बासी भोजन न दें। रात्रि में जूठे बर्तन न रखें, क्योंकि बर्तनों में छोड़ी गई जूठन से हानिकारक जीवाणु पैदा होकर वातावरण को विषाक्त बनाते हैं।

- रासायनिक खाद/कीटाणु नाशक तथा गंदगी को दूर करने के लिए यह आवश्यक है कि हरी सब्जियों तथा फलों को अच्छी तरह धोकर ही उपयोग में लाएँ।

- बच्चे के साथ ही परिवार के अन्य सदस्यों को भी संतुलित भोजन करायें। मिर्च मसालों और स्वाद के चक्कर में उसकी पौष्टिकता एवं सुपाच्यता की उपेक्षा न करें।

- बच्चों को सदैव प्रातःकाल दिन में पूर्व की ओर मुँह करके और सांयकाल रात्रि में पश्चिम की ओर मुँह करके बिठाएँ।

११. पाठशाला जाने से पूर्व

बालक क्या करें?

- शाला जाने के लिए समय से पूर्व तैयार हों। तैयार होने में माता-पिता पर निर्भर न रहें।

- ड्रेस साफ-सुथरी रखें, जूते पर पालिश स्वयं करें, अपनी आवश्यकता की वस्तुएँ साथ लेकर जाएँ।

- विद्यालय नियमित जाएँ, विषम परिस्थितियों को छोड़कर कभी अनुपस्थित न रहें। बीच में कक्षा छोड़कर इधर-उधर न जाएँ।
- अपनी वेशभूषा जूता, बेल्ट आदि स्वयं ठीक से पहनें।
- बस्ता व्यवस्थित करें, अपनी पुस्तक पेन आदि बस्ते में ठीक से रखें।
- निश्चित समय पर पाठशाला जाने एवं नियमित रहने पर गर्व करें और दूसरे साथियों को भी नियमितता की प्रेरणा दें।
- समय पर न पहुँचना और अनियमित रहना पिछड़ेपन एवं फूहड़पन की निशानी है, इससे बचें।
- संसार के सारे महामानवों के जीवन में समय की नियमितता का महत्त्वपूर्ण गुण रहा है, आप भी नियमित रहें। शाला में अन्य सामाजिक, धार्मिक अथवा राष्ट्रीय कार्यक्रमों में भी समय पर पहुँचे।
- पाठशाला पहुँचने पर गुरुजनों को हाथ जोड़कर प्रणाम या नमस्कार कहकर सादर उनका अभिवादन करें।

आचार्य क्या करें?/ माता पिता क्या करें?

- घर की नियमित एवं व्यवस्थित दिनचर्या बालकों को नियमित एवं व्यवस्थित रहने की प्रेरणा देती है, अत: घर के सभी क्रियाकलापों को नियमित और व्यवस्थित रखें।
- बच्चों को आत्मनिर्भर एवं समय संयमी बनने हेतु प्रेरित करें। उनका सहयोग तो करें,परन्तु परावलम्बी न बनायें।
- घर में ऐसा वातावरण बनायें, जिससे बालक स्वयं प्रेरित होने लगें।
- बच्चों के उपयोग की वस्तुएँ पुस्तक आदि रखने की जगह निश्चित कर दें और वहीं रखने हेतु प्रेरणा दें।
- समय का महत्त्व समझाएँ।
- स्वयं समय से पूर्व विद्यालय पहुँचें, अपने आचरण से बच्चों में संस्कार डालें।
- बच्चों को नियमित जीवन के लाभ समझायें। नियमित रहने से कार्य समय पर होता है।

१. समय का सदुपयोग प्रगति का मूलमंत्र है।
२. जो समय को नष्ट करता है, समय उसे नष्ट करता है।
३. समय ही जीवन है।
४. सूर्य निश्चित समय पर उदय और अस्त होता है।

५. समय चूक जाने पर पछताना पड़ता है।

६. आप किसी कार्यक्रम के अतिथि हैं, और यदि उस कार्यक्रम में १०० व्यक्ति भाग ले रहे हैं और आप यदि एक घंटा विलम्ब से पहुँचे, तो आपने १०० व्यक्तियों का एक घंटा अर्थात् १०० घंटे अर्थात् ८ घंटे कार्य दिवस के हिसाब से साढ़े १२ दिन नष्ट कर दिये।

- विवेकानन्द और स्वामी रामतीर्थ ने अल्प जीवन काल में महत्त्वपूर्ण उपलब्धियाँ प्राप्त कीं और उनका नाम अमर हो गया।
- संसार की समस्त महान् उपलब्धियों के पीछे महामानवों एवं वैज्ञानिकों के समय का सदुपयोग ही मुख्य कारण रहा है।
- बच्चों से समय के सदुपयोग एवं उससे संबंधित सद्वाक्यों की सूची बनवायें।
- समय की महत्ता पर प्रकाश डालें।
- शाला जाने की तैयारी बच्चा स्वयं करें। इस हेतु प्रेरणा दें एवं बीच-बीच में पूछताछ करें।
- **आत्म निर्भरता का संस्कार**- अपना काम आप करें, गणवेश (ड्रेस)एवं अपना बस्ता स्वयं सँभालने की प्रेरणा दें।

१२. संस्कारशाला / पाठशाला पहुँचने पर

आचार्य क्या करें ?

- संस्कारशाला में बच्चों को प्रणाम एवं नमस्कार का क्रम सिखायें।

गुरु परंपरा के उदाहरण बताएँ एवं गुरु का महत्त्व समझाएँ। (चित्र के माध्यम से)

- स्वामी रामकृष्ण परमहंस एवं विवेकानन्द का जीवन
- समर्थ रामदास एवं शिवाजी
- स्वामी निरजानंद एवं दयानंद
- स्वामी रामानंद एवं कबीर
- आचार्य द्रोण एवं एकलव्य
- महर्षि धौम्य एवं आरुणि आदि के जीवन का उदाहरण अर्थपूर्वक समझाएँ।

गुरुब्रह्मा, गुरुर्विष्णु..........

अखण्ड मण्डलाकारम्..........

इन मंत्रों को याद कराएँ।

बंदऊ गुरु पद कंज, कृपा सिंधु नर रूप हरि।

महा मोह तम पुंज, जासु वचन रविकरनिकर॥

बालक क्या करें?

- अपने अध्यापक तथा साथियों को शाला में प्रवेश करते ही अभिवादन करना चाहिए। घर वापस आते समय भी नमस्कार आदि करें।
- कक्षा में अध्यापक के आने पर खड़े होकर उनका सम्मान करना चाहिए।
- अपनी पढ़ाई पर विशेष ध्यान देना चाहिए। गप्पबाजी में समय नष्ट न करें।
- कक्षा में सबसे मित्रता का व्यवहार करें, प्रेम से बात करें, सबसे मैत्री भाव रखें।
- किसी प्रकार की मदद मिलने पर धन्यवाद देना न भूलें।
- एक दूसरे की सहायता करें, विशेष तौर पर कमजोर बालकों की सहायता अवश्य करें।
- अपने आसपास का वातावरण साफ-सुथरा रखें। विद्यालय साफ-सुथरा रखें। कुसंगति से बचकर रहें। अनुशासन का पालन करें।

१३. प्रार्थना

आचार्य क्या करें ?

- प्रार्थना का महत्व समझाएँ-सरल शब्दों में जानकारी दें।
- पंक्ति में शांत खड़े रहने की आदत का विकास करें।
- प्रार्थना के पश्चात् नैतिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक मूल्यों को ध्यान में रखकर व्यक्तिगत मूल्यों पर प्रकाश डालें। कब किन मूल्यों पर प्रकाश डाला जायेगा, इसकी योजना पहले से तैयार कर ली जाय।
- विद्यालय बंद होने पर भी प्रार्थना हो।
- छात्रों को भी उद्‌बोधन का अवसर दिया जाए।

बालक क्या करें?

- प्रार्थना के समय पंक्तिबद्ध खड़े हों।
- सहपाठियों से धक्का, मुक्की न करें।
- आपस में इशारे न करें।
- शांत भाव से निर्देशानुसार खड़े हों एवं प्रार्थना करें।
- प्रार्थना के अर्थ का चिंतन करें एवं समझ में न आने पर आचार्य जी से पूछें।
- प्रार्थना स्थल से पंक्तिबद्ध होकर ही कक्षा में जाएँ।

माता-पिता क्या करें?

- बालक से दैनिक व्यवहारों और उनकी दिनचर्या पर चर्चा करें।
- आवश्यकता अनुसार उन्हें सुधार के लिए परामर्श दें।

१४. मित्रता, संगति

आचार्य क्या करें ?

- कुसंग से हानि एवं सत्संग से लाभ का चार्ट समझाएँ। छात्रों से पृथक-पृथक लाभ-हानि के चार्ट बनवाएँ।

- बचपन जीवन की आधार शिला है, इसे कुसंग से बचाकर आत्म-निर्माण में लगाने हेतु प्रेरणा दें। जो न मित्र दुःख-दर्द, दुखारी, जिन्हें विलोकत पातक भारी।

बालक क्या करें ?

- हमेशा अच्छे, संस्कारवान, पढ़ने वाले बच्चों से ही मित्रता करें।
- ऊधमी और उद्दण्ड बच्चों के साथ न रहें।
- दूसरे बच्चों के कहने पर नहीं, बल्कि अपने विवेक से निर्णय लें।

सच्चे मित्र की पहचान-

१. जो बुराइयों को बताकर दूर करता है।
२. जो ईमानदार होकर हमें ईमानदार बनाता है।
३. जो आपत्तियों के समय सहायता करता है।
४. जो गलत रास्ते पर जाने से रोकता है।
५. जो गुरु, माता, पिता, सहयोगी, साथी एवं समाज के प्रति हमारे कर्त्तव्यों के पालन में सहयोग करता है।
६. जो हमारे अच्छे गुणों का विकास करता है। जो स्वयं सद्गुणी है।
७. जो दूसरों की निन्दा नहीं करता ।
८. जो नशा नहीं करता।

माता -पिता क्या करें?

- बच्चे एकाकी नहीं रह सकते। वे विद्यालय में, खेल के मैदान में, घूमने-फिरने में जो प्रायः साथ होते हैं, उन्हें ही मित्र बना लेते हैं। प्रारंभिक अवस्था में वे विवेकपूर्ण निर्णय नहीं ले पाते। ऐसी स्थिति में यह आवश्यक है कि माता-पिता मित्रवत व्यवहार भी करें। घूमने-फिरने अपने साथ ले जाएँ। उन्हें खुली बातचीत करने का अवसर दें। अच्छे मित्रों के संस्मरण सुनाएँ। कुछ आदर्श मित्रों के उदाहरण प्रस्तुत करें। प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से यह देखें कि बालक किसके साथ उठता-बैठता है? किसके साथ शाला जाना पसंद करता है? कहाँ रुचि लेता है? आदि ।

- बालक के मित्रों के साथ शालीनता का व्यवहार करें। कभी तुनक मिजाजी न दिखाएँ। व्यवहार में स्नेह, सहानुभूति और सहनशीलता का परिचय दें।

१५. त्याग, प्रेम,सेवा-सहयोग और समता का विकास

आचार्य क्या करें?

१.उपरोक्त विषयों से संबंधित कथा / प्रसंग तथा उनकी दृश्य सामग्री से प्रत्येक विषय को स्पष्ट करें और बच्चों को सरल शब्दों में समझाएँ।

- माह में एक बार सेवा कार्य कराएँ।
- बालकों को सेवा-सहायता, परस्पर प्रेम, त्याग, परोपकार के अवसर उपलब्ध कराएँ। विभिन्न क्रिया-कलापों के माध्यम से उन्हें अभ्यस्त भी बनाएँ ।
- पुस्तक-बैंक के लिए बालकों के मण्डल बनाएँ।
- मध्यान्ह में भोजन मिल-बाँटकर खाने के लाभ का सुख उदाहरण सहित समझायें।
- बालकों में संवेदन शीलता का विकस करें। इस हेतु महापुरुषों के जीवन से जुड़े मार्मिक/ प्रेरक प्रसंग सुनाएँ।

बालक क्या करें ?

सहभोज - हाथ धोकर ही भोजन करें।

- स्वयं अकेले ही न खायें, परस्पर बाँटकर भोजन करें।
- एक साथ बैठकर गायत्री मंत्र बोलकर भोजन प्रारंभ करें।

पुस्तक बैंक - अपने कक्षा सहपाठियों से पुरानी पुस्तकें लेकर एक जगह एकत्रित कर लें। उनकी जिल्द ठीक कर उन विद्यार्थियों को दें, जो पुस्तकें नहीं खरीद पा रहे।

- अपने जेब खर्च से पैसे बचाते रहें। उनसे अपने गरीब साथियों की मदद करें।

सहयोग-सहानुभूति - अपने तथा अपने भाई एवं बहनों के कपड़े जो छोटे हो गए हैं, अभाव ग्रस्त बच्चों को प्रदान करें।

- आपत्ति काल, दुर्भिक्ष, अकाल, बाढ़ आदि में पीड़ितों की सहायता करें ।
- सप्ताह में किसी एक दु:खी, बीमार, गरीब, अपाहिज आदि की सेवा करें ।

प्रेम एवं समता - ऊँच-नीच, जाति-पाँति, गरीब-अमीर में तथा बालक-बालिका में भेद न करें।

- अपने भाई, बहिनों, सहपाठियों एवं मित्रों से हमेशा प्रेम पूर्वक मिलें और सम्मानजनक व्यवहार करें। ईर्ष्या न करें, उनमें बुराई न खोजें, उनकी निन्दा-चुगली न करें।
- अपन से बड़ों का सम्मान करें तथा छोटों से हमेशा प्रेम करें।

- संसार में जो हम खोज लेते हैं वही हमारे पास रहता है। दूसरों की बुराई खोजने से वह बुराई हमारे पास रहती है और धीरे-धीरे हम भी उन बुराइयों के शिकार हो जाते हैं।

- अपने दोष और दूसरों के गुण देखने से ही प्रगति होती है।

उदाहरण:- राजसूय यज्ञ में नेवला का प्रसंग-

बच्चों में परस्पर तथा दीन दुखियों के प्रति संवेदना जगाने हेतु प्रसंग सुनायें।

उदाहरण:- ईश्वर चंद्र विद्यासागर

'जाति पाँति, ऊँच-नीच का भाव सामाजिक कलंक है' समझाएँ।

उदाहरण:-स्वामी दयानंद, गाँधी जी, पं.श्रीराम शर्मा आचार्य।

'ईर्ष्या मनुष्य को उसी तरह खा जाती है जैसे कपड़ों को कीड़ा'

'बुराई देखने वाला कौआ-वृत्ति एवं गुण देखने वाला हंस-वृत्ति का होता है' समझाएँ।

माता पिता क्या करें?

-बालकों से जो अपेक्षा है, माता पिता भी उसे अपने जीवन-व्यवहार में उतारें। अपने सामाजिक व्यवहारों मे श्रेष्ठता और दूसरों के प्रति सद्भावना का आदर्श प्रस्तुत करें।

-घर में धर्म घट की स्थापना करें एवं माता भोजन बनाने के पूर्व बच्चे द्वारा उसकी मुट्ठी से दो मुट्ठी अन्न या आटा प्रतिदिन दान कराएँ अथवा अन्न घट में डलवाएँ।

-बच्चे में बचत की आदत डालें तथा उससे दूसरों की सहायता कराएँ।

-सप्ताह में एक दिन स्वयं भी बच्चे के साथ सेवा कार्य में जाएँ।

-बहन-भाई में परस्पर त्याग, सहयोग एवं प्रेम का वातावरण बनाएँ। ईर्ष्या, चुगली करने पर बच्चे को समझाएँ उसकी हानियाँ बताएँ।

-घर में चुगली-ईर्ष्या का वातावरण न बनाएँ।

-आवश्यकतानुसार पड़ोसियों की मदद करें।

-नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक मूल्यों के विकास के लिए पारिवारिक संगोष्ठी करते रहें।

-घर में समय-समय पर यज्ञायोजन, धार्मिक अनुष्ठान करते रहें।

-सप्ताह में एक दिन या अपनी इच्छानुसार कभी भी सायंकालीन दीपयज्ञ अपने और पड़ोसियों के साथ स्वयं ही अपने घर में या पास पड़ोस के किसी घर में स्वयं ही कर लें। यह कर्मकाण्ड बहुत सरल है। किसी भी गायत्री परिजन से समझ लें।

१६. स्वच्छता

आचार्य क्या करें?

- विद्यालय में कूड़ादान रखवाएँ या किसी जगह पर गढ्ढा बनाएँ। कूड़ा संभाल कर डालना सिखाएँ?
- जहाँ-तहाँ थूकने और पेशाब न करने की बात बताएँ।
- बच्चों से श्रमदान के क्रम में स्वच्छता का कार्य करायें।
- व्यवस्थित एवं स्वच्छ विद्यार्थी, व्यवस्थित कक्षा एवं विद्यालय तथा अव्यवस्थित छात्र, कक्षा के चित्रों से तुलनात्मक समझ का विकास करें।

बालक क्या करें?

-विद्यालय एवं कक्षा को स्वच्छ रखें। कागज के टुकड़े पॉलीथिन जहाँ-तहाँ न फेकें, बल्कि कूड़ादान में ही डालें।

-अपने गुरुजनों के निर्देश में अपनी कक्षा की पुताई-सफाई, सजावट करें।

-केले आदि फलों के छिलके गाय, बकरी को खिलायें।

-विद्यालय की दीवार पर कुछ न लिखें।

-अपने बस्ते एवं पुस्तकों को स्वच्छ रखें।

-विद्यालय परिसर में जहाँ-तहाँ कमरे के भीतर-दीवार पर, बरामदे आदि में न थूकें।

-मूत्रालय में ही पेशाब करें और पानी डालें।

माता पिता क्या करें?

- घर में वस्त्र एवं वस्तुओं की स्वच्छता एवं पवित्रता का पूरा ध्यान रखें। इस कार्य में समय-समय पर बालकों से सहयोग लेते रहें।

१७. श्रम निष्ठा - कर्म ही पूजा है

बालक क्या करें?

-घर में अपने अध्ययन एवं अन्य कार्यों के साथ-साथ कुछ समय प्रतिदिन घर के काम काज एवं व्यवस्था हेतु लगाएँ।

जैसे-घर का सामान जमाना, शौचालय, स्नानगृह साफ करना, पौधों की गुड़ाई आदि करना।

-अपने घर के आसपास सफाई हेतु श्रमदान करना आदि।

-विद्यालय में सामूहिक श्रमदान कर सफाई का कार्य करें।

-अविकसित एवं गंदी बस्ती में स्वच्छता हेतु अपने सहपाठियों की टोली बनाकर कार्य करें।

-सामूहिक वृक्षारोपण कार्यक्रम करें। हर घर में तुलसी के पौधे लगाएँ। मंदिर, पूजाघर की सफाई हेतु श्रमदान करें।

-उपरोक्त में कोई एक कार्य माह में एक दिन अवश्य करें। श्रमिक को उपेक्षा भाव से न देखें

माता पिता क्या करें?

-श्रमदान के लिए बच्चों को प्रोत्साहित करें।

-सुविधा अनुसार उनके साथ स्वयं भी श्रमदान करें।

-बच्चे की दिनचर्या में श्रम हेतु समय निर्धारित करें।

-अपने कार्य स्वयं करने की आदत का विकास करें।

-बच्चों के कार्य नौकरों से न कराएँ।

-"श्रम करना सम्मान का प्रतीक है, ईश्वर की पूजा के समान पवित्र है।" यह भाव विकसित करें।

-बच्चे को घर के आँगन में लगे पौधों में पानी डालने, गुड़ाई करने का कार्य सौंपें तथा पौधों हेतु गमले तैयार करने और पौधे लगाने का कार्य सौंपें।

-माता-पिता अपने कार्य स्वयं करें।

-अपनी वस्तुओं को यथास्थान रखना, अपना बिस्तर झाड़ना, कपड़े साफ करना, अपना कमरा जमाना आदि कार्य उसे स्वयं करना सिखाएँ।

आचार्य क्या करें ?

-श्रम के प्रति सम्मान जगाएँ, श्रम देवता का महत्व समझाएँ।

-बालकों को श्रमदान के प्रति प्रेरित करें। स्वावलम्बन का भाव जगाएँ।

-बाल संस्कारशाला के बच्चों का एक दिन आधा घंटा का श्रमदान का कार्यक्रम रखें।

-प्रारंभ में सरल कार्य कराएँ।

-कार्यक्रम पूर्व में ही निर्धारित कर लें, एक सप्ताह पूर्व इसकी घोषणा कर दें।

-श्रम से शरीर स्वस्थ, मन प्रसन्न एवं संतुष्ट और आत्मा आनंदित रहती है।

-समझाएँ कि परिश्रम ही सफलता की कुंजी है।

-परिश्रम ईश्वर उपासना के समान ही महत्वपूर्ण है।

- शाला परिसर में बागवानी में श्रमदान कराएँ।

-स्वयंसेवी संस्थाएँ, कारखाने आदि का भ्रमण कराएँ और कार्य की प्रतिष्ठा बताएँ।

-श्रम से ही साधन, सुविधा एवं प्रगति संभव हुई है।

-कर्म ही पूजा है। कोई कार्य छोटा-बड़ा नहीं है-इस विषय पर गांधी जी, ईश्वरचंद्र विद्यासागर आदि महापुरुषों के जीवन प्रसंगों से बालकों को अवगत कराएँ।

-बच्चों को श्रमशील बनाने तथा आलस्य एवं प्रमाद से मुक्त रखने का प्रयास करें।

-काम करना प्रतिष्ठा का विषय बने, ऐसा वातावरण बनाएँ।

१८. मनोरंजन एवं प्रतिभा परिष्कार

प्रतियोगिता आयोजन

बालक क्या करें?

चित्रकला-

- महापुरुषों, अवतारों, ऋषियों, महान नारियों, शहीदों एवं संतों के चित्र बनाएँ। रंग भरें या चित्र संग्रह करें। उनकी विशेषता के संदर्भ में दो एक वाक्य कलात्मक लिखाई/ सुलेख में लिखने को कहें।

काव्यानंद-

- शौर्य, साहस, राष्ट्रभक्ति, प्रकृति संबंधी प्रेरणादायी प्रसंग एवं जीवन मूल्यों पर कविता पाठ में भाग लें। इस प्रकार की कविताओं /प्रसंगों का संग्रह करें।
- दूसरों की सुखद अनुभूतियों से आनंदित हों। वर्ष भर मनाये जाने वाले पर्व त्यौहारों एवं उत्सवों के आयोजनों में सम्मिलित हों। दूसरों की उपलब्धियों की प्रशंसा करें।

सृजन में मनोरंजन (CREATIVITY)

-गायन, भाषण, निबंध पाठ, प्रतियोगिताओं में भाग लें।

-विनोद तो करें परंतु दूसरों की निन्दा एवं व्यंग न करें। इससे आपसी मन-मुटाव और झगड़े पैदा होते हैं।

-ध्यान, योग-व्यायाम, सड़क नियम, कर्तव्यों के पालन आदि संबंधी कार्यशालाओं में भाग लें।

-नाटिका, नृत्यनाटिका आदि के आयोजन में भाग लें।

-प्रेरणाप्रद प्रसंग एवं संस्मरण सुनाने की प्रतियोगिताओं में भाग लें।

माता पिता क्या करें?

- उपरोक्त कार्यों में भाग लेने के लिए बालकों को प्रोत्साहित करें एवं उनकी तैयारी में सहयोग करें।

आचार्य क्या करें?

- उपरोक्त अनुसार व्यवस्था बनाएँ एवं आयोजन कराएँ (यह आयोजन नियमित कक्षा के अतिरिक्त होंगे)। विभिन्न धर्मों के मूल सिद्धान्तों पर परिचर्चा करें। अलग अलग बच्चों को अलग-अलग धर्मों पर तैयारी कराएँ तथा उन धर्मों के महापुरुषों की वेशभूषा में आकर प्रस्तुति करायें।

- प्रज्ञागीतों पर नृत्य नाटिकाएँ तैयार करवायें-(अभिनय गायन एवं दृश्य)

उदाहरण: -मेरा रंग दे बसंती चोला.... -जाग वीर बलिदानी.....

-चंदन है इस देश की माटी....... -वन्दे मातरम्.......

<u>विभिन्न घटनाओं पर छात्रों की प्रतिक्रियाएँ ज्ञात करें।</u>

- एक घटना आचार्य सुनाए और उस पर बालकों की प्रतिक्रियाएँ जाने एवं उनके दृष्टिकोण का परिमार्जन करें।

- समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी एवं बहादुरी से संबंधित घटनाएँ प्रस्तुत करें।

- प्रश्न खोजना एवं उनके उत्तर लिखने का अभ्यास कराएँ। ऐसा होता तो क्या करते? इस प्रकार की परिस्थितियाँ निर्मित कर छात्रों की कल्पना शक्ति एवं सृजनात्मकता का विकास करें।

- चित्रों पर प्रतिक्रियाएँ। प्रश्न-उत्तर ज्ञात करें।

- तर्क, तुलना, समीक्षा आदि की योग्यता विकसित करें।

- महत्वपूर्ण स्थलों जैसे- ऐतिहासिक, धार्मिक आदि स्थलों का महत्व समझाएँ।

- सड़क पर चलने के नियमों, चौराहा पार करने के नियमों, सावधानियों एवं यातायात के विभिन्न चिन्हों को समझाएँ

- स्व अनुशासन एवं स्वयं सेवक के गुणों का विकास करें

- आत्म विश्वास, निडरता, सामूहिकता, जिम्मेदारी और बहादुरी का बच्चों में विकास करें।

१९. खेलकूद

आचार्य क्या करें ?

-खेल के नियम समझाएँ एवं खेलना सिखएँ।

-प्रज्ञायोग का अभ्यास कराएँ।

-खेल का महत्व समझाएँ। कभी-कभी संध्याकाल बच्चों के साथ स्वयं खेलें एवं खेल-खेल में उनका मार्गदर्शन करें।

-खेल की भावना का विकास करें।

-खेल हेतु बाल मंडल बना दें। मैत्री भाव जाग्रत करें।

-हार-जीत को महत्व न दें। परस्पर सहयोग का विकास करें।

बालक क्या करें?

-संध्याकाल खेलकूद में भाग लें। खेलकूद एवं व्यायाम से शरीर सुन्दर, मजबूत एवं निरोग बनता है।

-दण्ड बैठक, कबड्डी, दौड़ना, कूदना, उछलना, फुटबाल, हाकी, खो-खो, योग, तेज पैदल चलना सबसे अच्छी कसरत है।

-स्वस्थ रहने के लिए नियमित खेलकूद आवश्यक है। जो खेलते नहीं हैं, उनका शारीरिक विकास नहीं होता, शरीर दुर्बल या अधिक मोटा हो जाता है तथा नाना प्रकार के रोग हो जाते हैं।

- भोजन के तुरंत बाद खेलकूद नहीं करना चाहिए।
- संध्याकाल एक घंटा खेलकूद पर्याप्त है।
- खेल के मैदान पर खिलाड़ी भावना का परिचय दें।
- हार-जीत को ही खेल का उद्देश्य न बनाएँ। खेल-खेल में न खिसियाएँ और न ही परस्पर लड़ाई-झगड़ा करें। निर्णायक का निर्णय मानें।
- खेल के मैदान पर आज्ञा पालन एवं पूर्ण अनुशासन का पालन करें।
- खेल के मैदान में खेल का सामान स्वयं लायें और ले जाएँ।

माता पिता क्या करें?

- बच्चों को निश्चित समय पर खेलने अवश्य भेजें।
- आलस्य प्रमाद छुड़ाएँ।
- खेल की समय अवधि निश्चित करें।
- खेल में हार-जीत को खेल के भाव से देखना सिखाएँ।
- बालकों के आपसी विवाद में न पड़ें बल्कि उन्हें स्वयं सुलझाने दें।
- खेल के समय बालक कहाँ जाते हैं? क्या करतें हैं? किसकी संगति में रहते हैं? आदि गतिविधियों पर दृष्टि रखें।

२०. सायंकालीन प्रार्थना एवं स्वाध्याय

बालक क्या करें?

-संध्या वंदन शान्त एवं स्वच्छ स्थान पर या पूजा स्थल में बैठकर करें।

-दीप एवं अगरबत्ती जला लें। अधिक सुगंधवाली अगरबत्ती का प्रयोग न करें,

यह हानिकारक है। हल्की सुगंध वाली, शुद्ध हवन सामग्री या गुग्गुल आदि से निर्मित अगरबत्ती का उपयोग करें।

-शांत मन से व एकाग्रता पूर्वक संध्यावंदन करें।

पवित्रीकरण, आचमन के उपरान्त

-तीन बार प्राणायाम करें,

-गायत्री चालीसा का पाठ करें,

-पाँच बार गायत्री मंत्र बोलें,

-आरती में शामिल हों,

स्वाध्याय हेतु

संध्याकाल में निम्नलिखित पुस्तकों से स्वयध्याय करें।

- राम कथा
- रामायण की प्रगतिशील प्रेरणा (वाङ्मय क्रमांक ३२)
- संस्कृति संजीवनी श्रीमद् भागवत् एवं गीता (वांङ्मय क्रमांक ३१)
- प्रज्ञा पुराण
- प्रेरणाप्रद दृष्टान्त (वांङ्मय क्रमांक ५७)
- अन्य प्रेरणादायी साहित्य
- सप्ताह में एक दिन संकीर्तन, प्रज्ञागीत, भजन गाएँ।
- पढ़ने का क्रम निश्चित कर नियमितता का पालन करें।
- एक व्यक्ति पढ़े शेष मौन बैठकर सुनें।
- घर में बारी-बारी से पढ़ने का क्रम रखें।
- पढ़े हुए पर चर्चा करें।

स्वाध्याय का लाभः-

- स्वाध्याय से हमारे भ्रम एवं संदेह समाप्त होते हैं। विवेक जागता है।
- ज्ञान का विकास होता है।
- मानव मूल्यों की समझ विकसित होती है, आदर्शवादी, नैतिक जीवन जीने की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन मिलता है।
- हमारी संस्कृति के वैज्ञानिक और सांस्कृतिक तथ्यों की जानकारी प्राप्त होती है।
- अपने गौरवशाली इतिहास का ज्ञान प्राप्त होता है।
- शुद्ध पढ़ने एवं भाषण का अभ्यास होता है।
- आत्म-विश्वास एवं ईश्वर-विश्वास जागता है।

- अपने कर्तव्यों का बोध होता है।
- समझने और चिंतन करने की शक्ति का विकास होता है।

आचार्य क्या करें?

-विद्यालय में कुछ समय स्वाध्याय के लिए निश्चित कर दें।
-किसे क्या पढ़ना है? यह सुनिश्चित कर दें।
-पढ़े हुए विषयों पर छात्रों में योग्यता के विकास की दृष्टि से चर्चा करें।
-पढ़े गए विषय पर भाव संक्षेपण एवं सार संक्षेप लिखवायें?
-पढ़े हुए में से तथ्य परक सामग्री बिन्दुवार खोजने को कहें।
-कुछ प्रमुख तथ्यों की तुलना एवं विवेचना कराएँ।
-छात्रों की स्मृति एवं समझ का विकास करें।

माता पिता क्या करें?

-परिवार के सभी सदस्य मिलकर जप, ध्यान, आरती आदि करें।
-स्वाध्याय के लिए व्यवस्था बनायें, प्रेरणा दें, किसे क्या पढ़ना है- पहले से निश्चित करें।
-पढ़े हुए पर विचार-विमर्श करें।
-सिद्धान्तों को जीवन में उतारने के लिए प्रेरित करें।
-बच्चों को सायंकालीन स्वाध्याय की प्रेरणा दें एवं उसे अनिवार्य बनाएँ।
-घर-घर में फैल रही अपसंस्कृति (पाश्चात्य भोगवादी स्वार्थी संस्कृति) के दूरगामी दुष्परिणामों से अपनी भावी पीढ़ी को बचाने एवं कुसंस्कारों से दूर रखने का यह एक सफल एवं सशक्त माध्यम है।
-बच्चों में दैवीय गुणों का विकास कर उनके चिंतन-चरित्र को ऊँचा उठाने का यह सफलतम और अनुभूत तरीका है। आवश्यक सत् साहित्य बच्चों को अवश्य उपलब्ध कराएँ।
-घर में अश्लील, भ्रमित करने वाला एवं स्तरहीन साहित्य न मंगवायें और न पढ़ें।
-अखण्ड ज्योति, युगनिर्माण योजना, कल्याण आदि श्रेष्ठ पत्रिकाओं के सदस्य बनें।
-स्वाध्याय के गूढ़ एवं कठिन तथ्यों को स्पष्ट करें, जहाँ आवश्यक हो विषय की सरल व्याख्या कर दें।
-दूरदर्शन की अश्लीलता एवं हिंसा के विष से अपने बच्चों की रक्षा करें।
-ज्ञानप्रद एवं अच्छे कार्यक्रम देखने की ही अनुमति दें एवं स्वयं भी ऐसे ही कार्यक्रम देखें।

-बच्चों की जिद पर माँ उसे कभी भी विष नहीं देती, परंतु हम अनजाने में टी. वी. द्वारा उन्हे निरंतर मानसिक विष दे रहे हैं। इससे उन्हें बचाएँ।

-शुद्ध उच्चारण एवं पठन का अभ्यास कराएँ

-विषय के मूल तथ्य को सरल शब्दों में बताएँ।

२१. सायं कालीन भोजन

प्रातः अनुसार

२२. अध्ययन का संस्कार

बालक क्या करें?

-मन लगाकर पढ़ने से विषय वस्तु जल्दी याद होती है, अतः रुचिपूर्वक पढ़ें।

-अधूरे मन से पढ़ने पर याद नहीं होता अतः पढ़ते समय बातचीत न करें।

-एक समय में एक ही काम करें। पूर्ण मनोयोग से करने पर कठिन से कठिन कार्य भी सरल हो जाता है, अतः मन लगाकर पढ़ें।

-एकाग्रता में बहुत शक्ति है जैसे सूर्य-किरणों को आतिशी शीशे (लैंस) से एक स्थान पर इकठ्ठा करने पर आग लग जाती है।

-भाप के एकाग्र दबाव से इंजिन चलता है, इसलिये पढ़ने में एकाग्रता बनाये रखें। पढ़ाई-लिखाई का गृहकार्य रोज पूरा करना चाहिए।

-प्रश्नों के उत्तर स्वयं खोजें, दूसरों की नकल न करें।

-कठिनाई को माता-पिता या शिक्षक से पूछें और हल करें।

-लेटे-लेटे पढ़ने से नेत्र कमजोर होते हैं। इसलिए लेट कर न पढ़ें।

-बहुत झुक कर न पढ़ें, पुस्तक और आँखों के बीच एक फुट का अन्तर रखें।

-बहुत तेज प्रकाश में तथा बहुत कम प्रकाश में पढ़ने से भी नेत्र कमजोर होते हैं। अतः सामान्य प्रकाश में पढ़ें।

-मस्तक हिला-हिलाकर न पढ़ें, चिल्ला-चिल्ला कर, तिनका तोड़ते, भूमि कुरेदते, नाखुन चबाते हुए पढ़ना बुरी आदत है।

-पुस्तकें पैरों में न गिरें, वे माँ सरस्वती की प्रतीक हैं। उनका सम्मान करें, फाड़ें नहीं।

-लिखाई साफ-साफ, सुडौल और सीधी लाइनों में लिखें।

-बहुत काट-पीट असावधानी का प्रतीक है, इससे बचें।

-उतावले में भूल करना असावधानी,आलस्य व प्रमाद का प्रतीक है।

-अशुद्ध लिखना मूर्खता का प्रतीक है। शुद्ध साफ-साफ सीधा व सुन्दर लिखना

सीखें। सुनकर, सोचकर, समझकर, साफ-साफ, शुद्ध एवं सुन्दर अक्षर लिखें। मात्राओं और व्याकरण का ध्यान रखें।

आचार्य क्या करें ?

-सही तरीके से पढ़ने लिखने की क्रिया दर्शाता हुआ चित्र प्रदर्शित करें।

-अध्ययन में ध्यान और एकाग्रता पर आपस में चर्चा कराएँ।

-एकाग्रता का प्रयोग करके दिखायें, जैसे- लैंस का प्रयोग।

-विषय में रुचि जागृत करने हेतु अलग से वषयों का महत्व बतायें।

-गणित, विज्ञान, भूगोल, इतिहास, नैतिक शास्त्र, समाज-विज्ञान के रोचक तथ्य प्रस्तुत करें। उनमें बच्चों को शामिल करें।

-लेखन एवं अध्ययन की सही पद्धति का प्रदर्शन किसी एक बच्चे को बैठाकर दृश्य प्रस्तुत कर बताएं।

-शुद्ध एवं सुलेख प्रतियोगिता आयोजित करें।

-योग्य छात्रों की वार्ता-अन्य छात्रों से कराएं।

- श्रेष्ठ विद्यार्थी के लक्षण बताएं।

१. **काग दृष्टि** -कौए के समान तीव्र दृष्टि।

२. **बकोध्यानम** -बगुले के समान एकाग्रता

३. **श्वान निद्रा** -कुत्ते के समान सजग निद्रा, तुरंग जाग पड़ना ।

४. **गृहत्यागी** -घर का मोह न रखना।

माता पिता क्या करें?

१. बालकों के पढ़ने का स्थान निश्चित हो।

२. रोशनी की समुचित व्यवस्था हो। बिस्तर पर पढ़ने-लिखने की आदत न डालें।

३. लिखने-पढ़ने पर ध्यान रखें और मार्ग-दर्शन करें।

४. स्नेहपूर्वक सुधार करवायें।

२३. डायरी लेखन

डायरी लेखन का महत्व

आत्म समीक्षा का विषय अत्यंत कठिन भी है, पर अति आवश्यक भी है। व्यक्ति दूसरों की समीक्षा तो करता रहता है, पर स्वयं के गुण-दोषों को नहीं देख पाता। हमसे कहाँ आलस्य-प्रमाद हो रहा है ? कहाँ चूक हो रही है ? यह ठीक से मालूम नहीं चल पाता। जो भूलें बार-बार होती हैं, उन्हें सुधारने में व अपने गुणों-अवगुणों को समझने में डायरी लेखन अत्यन्त सहायक एवं उपयोगी है। यहाँ कुछ महत्त्वपूर्ण

सूत्र दिये गए हैं। इनके निरंतर अभ्यास से व्यक्ति श्रेष्ठ व सफल बन सकता है। बालकों को इस डायरी को नियमित भरने को कहें। इसके लिये डायरी अथवा इसकी फोटोकॉपी कराकर बच्चों को दी जा सकती है।

बालक एवं बालिकाओं के लिये आध्यात्मिक डायरी

बालक/बालिका का नाम.................................माह...................

क्र.	**दैनिक आचरण**	1	2	3	4	5	6	7	8	9
१.	प्रातः सूर्योदय के पूर्व उठा ?									
२.	धरती माता को प्रणाम किया।									
३.	भगवान को प्रणाम किया।									
४.	माता पिता को प्रणाम किया।									
५.	गायत्री मंत्र/चालीसा पाठ ध्यान किया।									
६.	व्यायाम/खेलकूद में भाग लिया।									
७.	भोजन पूर्व तीन बार गायत्री मंत्र का उच्चारण किया।									
८.	भोजन समय पर किया।									
९.	थाली में जूठन छोड़ी।									
१०.	अपना पाठ याद किया।									
११.	शयन के पूर्व प्रार्थना की ।									
१२.	बड़ों की आज्ञा का पालन किया।									
१३.	सत्य का पालन किया।									
१४.	झुंझला कर बोला।									
१५.	कोई गलती की।									
१६.	निंदा/चुगली की।									
१७.	भाई/बहिन से लड़ाई की।									
१८.	पैसों की बचत की।									
१९.	10 मिनट मौन रखा।									
२०.	अपनी सभी वस्तुओं को व्यवस्थित रखा।									
२१.	भलाई का कार्य किया।									
२२.	माँ के कार्य में सहायक बने।									

बालक क्या करें?

१. शयन के पूर्व अपनी दैनिक डायरी अवश्य लिखें ।

२. निम्नांकित डायरी को नियमित भरें। इसमें सच ही लिखें, झूठ न लिखें।

३. हाँ के लिए (ॐ) और नहीं के लिए (X) लिखें।

10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29	30

आचार्य क्या करें? / अभिभावक क्या करें?

- डायरी लेखन का महत्त्व समझायें।
- कभी-कभी इस सम्बंध में पूछ-ताछ भी करें।
- बालक डायरी दिखाने का इच्छुक हो तो अवश्य देखें।
- गुणों के लिये प्रोत्साहन दें। अवगुणों को दूर करने में उनके सहायक बनें।
- डायरी लेखन हेतु डायरी उपलब्ध करायें।

२४. शयन

बालक क्या करें?

१. अपना बिस्तर बिछा कर, इसके बाद शान्त भाव से बिस्तर पर बैठकर दिन भर में किये गए अच्छे-बुरे कार्यों का विचार करें।

२. कोई गलत काम तो नहीं हुआ, इस पर चिंतन करें। यदि हुआ हो तो उसे पुनः न करने का संकल्प करें-इसे तत्वबोध साधना कहते हैं।

३. सबके लिए शुभ कामना करें।

४. शत्रु को भी क्षमा करें।

५. शान्त भाव से भगवान्/गायत्री माता की गोद में सो रहे हैं एसी भावना करें।

६. सदा पूर्व की ओर सिर करके सोना चाहिए।

२५. शैक्षणिक भ्रमण

आचार्य क्या करें ?

-धार्मिक, राष्ट्रीय अथवा प्राकृतिक महत्व के स्थलों पर बच्चों को ले जाएँ। अपना भोजन पानी साथ ले जाएँ मिल-बाँटकर खाएं।

बालक क्या करें?

- शैक्षणिक परिभ्रमण में अपनी डायरी (कापी) और पेन साथ रखें।
- महत्वपूर्ण तथ्य नोट करें।
- परिभ्रमण में अपने आचार्य के निर्देशों का यथावत पालन करें।
- सहपाठियों के साथ सहयोग और सामंजस्य बनाकर चलें।
- समूह से अलग न हों।
- अनुशासन का पूर्ण रूप से पालन करें।
- परिभ्रमण में की जाने वाली संगोष्ठी में सक्रियता से भाग लें।

- शालीनतापूर्वक अपनी समस्याओं का समाधान करें।
- व्यक्तिगत रुचियों की अपेक्षा सामूहिक रुचियों को मान्यता दें।

माता पिता क्या करें?

- भ्रमण के लिए बालकों की तैयारी में मदद करें।
- अनुशासन पालन के लिए उन्हें प्रेरित करें।
- परिभ्रमण पर बालकों से विस्तार से चर्चा करें।
- उन्हें ऐसे कार्यों में भागीदारी करने से रोकें नहीं।

गाँठ में बाँध रखने योग्य अनमोल रत्न

(१) भोजन के सम्बन्ध में निम्न बातों का ध्यान रखो:-

- भूख से कम खाओ, पेट को आधा भोजन से भरो, आधे को हवा और पानी के लिये खाली रहने दो।
- हर ग्रास को खूब चबा-चबा कर खाओ।
- सारे दिन बकरी की तरह मुँह मत चलाते रहो। दो बार नियत समय पर भोजन करो, प्रातः काल किसी पतली, हल्की चीज का नाश्ता कर सकते हो।
- भोजन को रुचि और प्रसन्नता पूर्वक खाओ।
- बासी रखी हुई, तली चीजें, मिठाई, खटाई तथा मसालेदार, उत्तेजक चीजों से बचो। सादा, हल्का तथा रसीला भोजन करो।
- भोजन में स्वाद का नहीं केवल स्वास्थ्य का ध्यान रखो।

(२) शरीर से नित्य उचित परिश्रम करो, न तो इतने आराम तलब बनो कि सुस्ती और शिथिलता आ जाए और न इतनी मेहनत करो कि शक्तियों का अत्यधिक खर्च हो जाने से क्षीणता आ जाए।

(३) इन्द्रिय भोगों में इतने लिप्त न होओ कि मन काबू से बाहर हो जाए और बल-वीर्य का अधिक भाग उन्हीं में नष्ट होने लगे।

(४) हर महीने एक-दो उपवास रखो, उस दिन निराहार रहकर खूब पानी पीना चाहिए। यदि निराहार न रहा जा सके तो थोड़ा दूध या फल ले सकते हैं।

(५) सफाई का पूरा ध्यान रखो। नाखून, बाल, दाँत, नाक, कान साफ रखो। नित्य शरीर को खूब रगड़-रगड़ कर स्नान करो। कपड़े धुले हुए साफ रखो।

(६) मलमूत्र त्यागने में आलस न करो।

(७) रात को जल्दी सोओ, प्रातःकाल जल्दी उठो। पूरी और गहरी नींद लेने का प्रयत्न करो।

(८) सदा प्रसन्न रहने की आदत डालो। हर घड़ी मुस्कराते रहने का स्वभाव बनाओ।

(९) सबसे नम्रता और मधुरता के साथ बात करो। निष्ठुर, रूखी और कड़वी बात कभी मुँह से मत निकालो।

(१०) गाली या अपशब्द या उपहास द्वारा किसी को चिढ़ाने की भूल कभी मत करो। अपना मतभेद या विरोध स्पष्ट एवं खरे शब्दों में प्रकट करते हुए भी नम्रता और सज्जनता को हाथ से मत जाने दो।

(११) समय को अमूल्य समझो, अपने एक-एक मिनट का सदुपयोग करने की फिक्र में रहो, समय एक अप्रत्यक्ष सम्पत्ति है, इसका खर्च करते हुए पूरी-पूरी सावधानी रखो।

(१२) ऐसी चीज जिनके बिना आसानी से काम चल सकता है, सस्ती मिल रही हो तब भी मत खरीदो।

(१३) फैशन परस्ती से बचो। अपना रहन-सहन सीधा-सादा रखो। सफाई और सादगी सब से बढ़िया फैशन है।

(१४) आमदनी से खर्च, कम रखो। जहाँ तक बन पड़े कर्ज मत लो, यदि लेना पड़े तो उसे जल्द से जल्द चुकाने का प्रयत्न करो।

(१५) कृतज्ञ बनो। दूसरे के द्वारा अपने ऊपर जो उपकार हुए हैं उनको धन्यवाद सहित प्रकट करते रहो और उनका बदला चुकाने की फिक्र में रहो।

(१६) सच्चे मित्रों की संख्या बढ़ाओ। ऊँचे और अच्छे लोगों के सम्पर्क में रहो। अच्छे वातावरण में प्रवेश करो।

(१७) जैसे बनना चाहते हो, वैसे ही लोगों के समीप, वैसी ही परिस्थितियों के दायरे में अपने को ले जाओ।

(१८) अपना ज्ञान बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयत्न शील रहो। "क्यों?" और "कैसे?" की कसौटी पर हर एक बात को परखो। दूसरों से पूछने में झिझक मत करो। मनन, चिन्तन और विश्लेषण करने की आदत डालो। 'अधिक जानने' की साधना में अपने को प्रवृत्त रखो।

(१९) दुर्व्यसनों से सदैव दूर रहो। किसी भी परिस्थिति में उन्हें अंगीकार मत करो, मित्र-सम्बन्धी कितना ही आग्रह करें, शालीनता से मना कर दो।

पंचम अध्याय

प्रेरक एवं मनोरंजक अभ्यास

१. माता-पिता का आदर करो



सरस्वती का चित्र दिखाकर प्रशिक्षक बालकों से पूछता है, "यह कौन है?"

बालक-"यह देवी सरस्वती है!"

प्रशिक्षक- "यह क्या देती है?"

बालक- "ज्ञान तथा विद्या देती है।"

प्रशिक्षक- लक्ष्मी जी का चित्र दिखाकर पूछता है-"यह कौन है?"

बालक-"लक्ष्मी जी हैं।"

प्रशिक्षक-"यह क्या देती हैं?"

बालक-"धन-देती हैं।"

प्रशिक्षक- "क्या आपने कभी लक्ष्मी जी को धन देते हुए और सरस्वती को विद्या देते हुए देखा है?"

बालक- नहीं

प्रशिक्षक- आपको पैसे कौन देता है? आपके कपड़ों के लिए, पुस्तकों के लिए, विद्यालय शुल्क के लिए कौन पैसे देता है?

(ऐसे प्रश्न वह अलग-अलग बालकों से पूछता है।)

बालक-हमारे पिताजी।

प्रशिक्षक-आपको विद्या कौन देता है? आपको भाषा का ज्ञान किसने दिया? आपको संसार की समस्त वस्तुओं का परिचय किसने करवाया?

बालक- हमारी माँ ने।

प्रशिक्षक-फिर लक्ष्मी हमें धन देती है और सरस्वती हमें ज्ञान देती है, इस कल्पना से ही हम इन देवताओं को प्रणाम करते है और वास्तव में हमें जो धन और ज्ञान

देते हैं उन माता-पिता को प्रणाम करना हम भूल जाते हैं। कौन-कौन अपने अभिभावकों को प्रणाम करेगा? हाथ उठाओ। मैं कहता हूँ, इसलिए हाथ मत उठाना। सभी बालक हाथ उठाते हैं। माता-पिता के श्रेष्ठत्व की कहानियाँ सुनाकर इस बात का वचन लिया जाता है।

२. उत्तम आरोग्य का महत्त्व

(अ) दाँत नित्य साफ करें।

प्रशिक्षक बालकों को नकली दाँत दिखाते हुए पूछता है- यह क्या है?

बालक-ये नकली दाँत हैं।

प्रशिक्षक-क्या आप मुझे अपने दाँत देंगे? उनके बदले में मैं तुम्हें पाँच हजार रूपये और साथ-साथ में सुन्दर नकली दाँत भी दूँगा। जो बालक इस बात के लिए तैयार हैं, वे हाथ ऊपर करें। (कोई भी बालक हाथ ऊपर नहीं उठाता)

प्रशिक्षक- "हमारे शरीर में परमात्मा ने ऐसे कई यंत्रों की रचना की है, जिनको किसी भी मूल्य पर हम नहीं बेचेंगे- जैसे आँख-कैमरा, मस्तिष्क-कम्प्यूटर, हाथ-क्रेन, पाँव-गाड़ी, पेट-भट्टी, हृदय-पंपिंग स्टेशन, किडनी रिफायनेरी आदि। लेकिन हम जितनी सतर्कता अपने घर के प्रति रखते हैं, उतनी अपने शरीर के अनमोल यन्त्रों के लिए नहीं रखते। इनकी स्वच्छता, इनको सुचारू रूप से रखने के लिए आवश्यक व्यायाम आदि की ओर हम ध्यान नहीं देते।"

आपको इस बारे में बड़ी रोचक घटना सुनाता हूँ। एक बार दाँत का रोगी डेंटिस्ट के पास गया। डॉक्टर ने उसके कई दाँत बीस-बीस रुपये लेकर निकाल दिये। और दो-दो हजार रुपयों में उसे नकली दाँत बनाकर दिए। उसे समझाया कि दाँतों को नित्य सुबह-शाम साफ करना-रात को पानी में डुबोकर रखना, बच्चों की पहुँच से दूर रखना, आदि-आदि। उसने सभी बातों पर सिर हिलाकर स्वीकृति दी। डॉक्टर साहब ने पूछा-"पहले वाले दाँतो को सम्भालकर क्यों नहीं रखा? मरीज ने कहा-"पहले वाले दाँत मुफ्त के थे, उनका पैसा नहीं लगा था।" हमें अपने शरीर के किसी भाग को मुफ्त का नहीं समझना चाहिए।

फिर प्रशिक्षक बालकों को आलू दिखाते हुए पूछता है "यह क्या है और क्या काम आता है?"

बालक- "यह आलू है.....इसकी सब्जी खाने के काम आती है।"

प्रशिक्षक- "क्या आप आज की बनी सब्जी कल खा सकते हो?"

बालक-"नहीं।"
प्रशिक्षक-"क्यों?"
बालक-"इसमें बदबू आएगी।"
प्रशिक्षक-"यदि चार दिनों तक वह सब्जी पड़ी रहे तो क्या होगा?"
बालक-"उस में कीड़े पड़ जाएँगे।"
प्रशिक्षक-"हमारे दाँत में छेद है। हमने सब्जी खाई और चार दिन दाँत साफ नहीं किए तो क्या होगा?"
बालक-"हमारे मुँह से दुर्गन्ध आएगी और कीड़े पड़ जाएँगे।"
प्रशिक्षक-"अत: हमें नित्य दाँत साफ करने चाहिए।"

(ब) सफाई का महत्व

प्रशिक्षक-"आपने अपना पेट भीतर से नहीं देखा होगा? मैं आपको दिखा रहा हूँ। (एक पानी से भरी तेल की शीशी दिखाते हुये।) देखो हमने आपके कपड़े उतार दिए-चमड़ी उतार दी-अब आपको अपना पेट दिखाई दे रहा है। कई बालक दाँत साफ नहीं करते। कई बालक बाजार की चीजें, मीठी सुपारी, पानमसाला खाते हैं। अब देखो इस बात का शरीर पर क्या असर होता है"-(यह कहकर नीले रंग के दाने या स्याही शीशी में डालता है-शीशी में धीरे-धीरे वे कण फैले हुए दिखाई देते हैं।)

प्रशिक्षक- "यदि मुँह की सफाई ठीक से नहीं होती है तो क्या होता है, यह आपने देखा। ऐसे ही अपने विविध अंगो की सफाई यदि ठीक से नहीं होती है तो यह बहुमूल्य शरीर रोग ग्रस्त हो जाएगा। और आपका भविष्य चौपट हो जायेगा।"

३. देश-कार्य महत्त्वपूर्ण

प्रशिक्षक बालकों से महाराणा प्रताप का चित्र दिखाते हुए पूछता है "यह कौन है?" सभी बालक एक साथ उत्तर देते हैं, यह महाराणा प्रताप का चित्र है।

प्रशिक्षक- यह एक बहुत बड़े राजा थे। इनका एक घोड़ा था। बड़ा ही स्वामीभक्त था...... क्या नाम था उसका? सभी बालक एक साथ बोलते हें "चेतक!"

प्रशिक्षक- "बिल्कुल सही उत्तर दिया। कितने मेधावी हैं आप! आपको ४५० वर्ष पहले के घोड़े का नाम भी याद है। अब आप बताइए कि आपके घर में १००वर्ष पहले किसका जन्म हुआ था?" आपके परदादाजी के पिताजी का नाम आपको बताना है। सभी बालक एक दूसरे का मुँह ताकते हैं।

प्रशिक्षक- "जिन्होंने आपके लिए कष्ट सहा, जिन्होंने आपके लिए मकान बनाया, जिन्होंने आपके लिए दुकान बनाई, जिन्होंने आपके लिए पेड़ लगाए और सोचा कि मेरे पोता-पोती इनके फल चखेंगे और मुझे याद करेंगे, उनका नाम आप भूल गए। ऐसा क्यों हुआ? लोग उसी को याद करते हैं जो औरों के लिए भी कुछ करते हैं। केवल परिवार के लिए करने वालों को कोई याद नहीं करता।"

प्रशिक्षक-"बताओ महाराणा प्रताप और चेतक को आप क्यों जानते हैं?"

बालक-"उन्होंने देश हित के लिए कार्य किया-- इसलिए!"

प्रशिक्षक-"हम अपने पूर्वजों को भूल गए इसका अर्थ यह नहीं कि उन्होंने राष्ट्र के लिए कुछ नहीं किया। अपने राष्ट्र से किसे प्रेम नहीं होता? सच तो यह है कि हमारे पूर्वजों ने आने वाली पीढ़ियों के लिए अपनी इच्छाएँ, सपने और आकांक्षाओं का बलिदान किया है। इसलिए उनके प्रति हमारे मन में आदर भाव होना चाहिए। परन्तु इसके साथ-साथ हम उन्हें क्यों भूल गए, इसका कारण भी हमें ज्ञात होना चाहिए। केवल अपनों के लिए जो जीवन समर्पित करते हैं, उनका समाज को विस्मरण हो जाता है और जो अपनों के साथ-साथ राष्ट्र कार्य में हाथ बँटाते हैं, उन्हें समाज याद रखता है। आप क्या चाहते हैं? आप को समाज याद रखे या भूल जाए।"

बालक-"समाज याद रखे।"

प्रशिक्षक-"तो फिर देश के लिये आप क्या काम करेंगे? इस प्रश्न का उत्तर बालक यथामति देते हैं। उनके उत्तरों का तालियाँ बजाकर स्वागत-अभिनंदन करें।"

४. सावधान! आपके प्रत्येक काम पर समाज की दृष्टि है

प्रशिक्षक बालकों को एक बनावटी गुलाब का फूल दिखाता है। "यह क्या है?"

बालक- "गुलाब का फूल।"

प्रशिक्षक- "सच्चा है या बनावटी?"

बालक- "बनावटी।"

प्रशिक्षक- "अच्छा! एक टोकरी में मैं कुछ प्राकृतिक (सच्चे) फूल डाल दूँ और एक बनावटी, तो क्या तुम आँखे बन्द करके नकली फूल निकाल दोगे?"

बालक-"हाँ।"

किसी एक बालक को आगे बुलाकर उसकी आँख पर पट्टी बाँधकर नकली फूल निकालने को कहा जाता है। बालक सहजता से फूल निकाल लेता है।

प्रशिक्षक-"आपने यह फूल कैसे निकाला।"

बालक- "सूँघकर-छूकर।"

प्रशिक्षक- "तो इसका अर्थ यह हुआ कि पढ़-लिखकर तुम्हें अपना चाल-चलन और व्यवहार सुधारना होगा। हम सोचते हैं कि किसी का हमारी ओर ध्यान नहीं, कोई हमें देखता नहीं, समाज अन्धा है, इसलिए रास्ते से चलते हुए कूड़ा फेंक दिया, पान खाकर रास्ते पर थूक दिया, किसी अन्धे-अपंग-असहाय व्यक्ति की अवहेलना की, तो कोई देखता नहीं, पर यह गलत धारणा है। जैसे आपकी आँख बन्द होते हुए भी आपको सच्चा फूल कौन सा और नकली फूल कौन सा है, इसका पता चल सकता है, वैसे ही समाज भी पता लगाता है कि अच्छा बच्चा कौन सा है और बुरा बच्चा कौन सा! और यदि कोई नहीं भी देखता हो तो आपका अन्तर्मन इस बात को देख रहा होता है। अत: सावधान!"

५. मीठे वचन बोलिए

(अ) प्रशिक्षक बालकों को खीरा दिखाकर पूछता है-"यह क्या है?"

बालक- "खीरा!"

प्रशिक्षक- "इसका उपयोग क्या है?"

बालक- "यह खाने के काम आता है।"

प्रशिक्षक- "यह कहाँ पर मिलता है?"

बालक- "बाजार में।"

प्रशिक्षक- "वैसे ही मिलता है या पैसे देकर?"

बालक- "पैसे देकर।"

प्रशिक्षक- "आपने पैसे देकर खीरा खरीदा, घर लाकर उसे धोया और काटकर उसका कड़वापन निकाला, नमक लगाया और खाने पर आप को पता चला कि यह कड़वा है तो आप क्या करते हैं?"

बालक- "हम उसे फेंक देते हैं।"

प्रशिक्षक- "यदि पैसे खर्च करके लाया हुआ खीरा भी कड़वा निकला तो आप उसे फेंक देते हैं, तो आपका मित्र जो आपकी कड़वी बातें मुफ्त में सुनता है, आपकी कड़वी बातें-गाली-गलौज-अपमान आदि सुनकर उसे क्या करना चाहिए?

बालक- "कूड़ापात्र में फेंक देना चाहिए।"

प्रशिक्षक- "क्या आप चाहते हैं कि आपको कोई इसी प्रकार कूड़ापात्र में फेंक दे? आप से दुर्व्यवहार करे?"

बालक- "नहीं।"

प्रशिक्षक- "तो आप को क्या करना चाहिए?"

बालक- "सभी से मीठा बोलना चाहिए।"

(ब) इस प्रात्यक्षिक में १०-११ बालकों के दो गुट बनाकर आधे बालकों के हाथ में हवा भरे गुब्बारे दिए जाते हैं और आधे बालकों के हाथ में एक-एक आलपिन (टाचनी) दी जाती है। बालकों से कहा जाता है कि १-२-३ कहने के पश्चात् जिनके हाथ में गुब्बारे हैं, उनको गुब्बारे बचाने हैं और जिनके हाथ में आलपिन हैं, उनको उसका उपयोग करना है। यह खेल कौन सी सीमा में खेलना है, यह पहले ही बताना आवश्यक है, अन्यथा बच्चे सभागृह के बाहर भी भाग जाते हैं। १-२-३ कहने पर खेल आरम्भ होता है। सभी बच्चे एक दूसरे को झपटते हुए गुब्बारे फोड़ने का या हाथ उँचा करके उसे बचाने का प्रयास करते हैं। ५-७ गुब्बारे फूटने पर बालकों को रोका जाता है। फिर से बालक अपने गुटों में खड़े हो जाते हैं और किसने कितने गुब्बारे फोड़े, इसकी गिनती की जाती है।

उसके पश्चात् प्रशिक्षक बालकों को अपने शब्द याद दिलाता है-" आलपिन का उपयोग करना है!" और बालकों से पूछता है, "आपने आलपिन का उपयोग किया, या दुरुपयोग?"

"यदि दुरुपयोग किया है तो इसका उपयोग कैसे हो सकता था?"

बालक फिर से प्रयास शुरु करते हैं- कोई आलपिन अपनी कमीज को लगा देता है- कोई गुब्बारे के ऊपरी भाग में आलपिन लगाकर उसे परदे पर या उचित स्थान पर लगा देता है। यदि ऐसा करने में बालक असमर्थ दिखें तो प्रशिक्षक उन्हें सहायता दें। इसके बाद प्रशिक्षक इस प्रात्यक्षिक का अर्थ समझाता है।

"हमें गुब्बारा और आलपिन दिखाई देने पर आलपिन से गुब्बारे को फोड़ना, यही विचार मन में आता है। विध्वंसक प्रवृत्तियाँ हमारे मन में तुरन्त निर्मित होती हैं। आलपिन से उपयोगी काम भी किया जा सकता है, यह बात हमारे मन में देरी से आती है। उसी प्रकार हम अपनी जिह्वारूपी आलपिन से लोगों के मन के गुब्बारे फोड़ने का काम निरन्तर करते रहते हैं। जब कि भगवान् ने होठों को धनुष का आकार देकर हमें सूचित किया है कि इसके अन्दर से निकलने वाले शब्द बाण के समान हैं-सावधानी बरतें! जिह्वा का रंग लाल बनाकर, भगवान् ने इसके खतरे की ओर सूचित किया है। पर इस बात को भूल कर हम जिह्वा का ठीक उपयोग नहीं करते। भविष्य में हमें यह

सावधानी बरतनी है कि मधुर वचनों से हम लोगों के हृदय जीतेंगे" कौआ और कोयल का उदाहरण देकर भी हम मधुर वाणी की श्रेष्ठता सिद्ध कर सकते हैं।

६. सहकार्य

इस प्रात्यक्षिक में दो बालकों को आमने-सामने खड़ा किया जाता है। उनके हाथ कील दिये जाते हैं और कहा जाता है कि यदि तुम्हारे हाथ बिल्कुल सीधे होते, कोहनी का मोड़ यदि प्रकृति निर्माण नहीं करती तो ये चुरमुरे आप कैसे खाते?

काफी प्रयास करने पर चुरमुरे पकड़ा हुआ हाथ अपने मुँह तक नहीं जाता है, यह देखकर बालक लज्जित हो जाते हैं। यह कैसे सम्भव होगा, यह शेष बालकों को पूछने पर एकाध मेधावी बालक आगे आकर एक दूसरे के मुँह में चुरमुरे देने की बात कहता है। हाथ सीधे होने पर एक दूसरे के मुँह में कौर देने के अलावा दूसरा पर्याय नहीं बनता।

यह प्रात्यक्षिक पूरा होने पर देव और दानवों के सहभोजन की कहानी बालकों को सुनाई जाती है। जिसमें उनके हाथों पर लम्बे-लम्बे लकड़ी के चम्मच बाँधकर भोजन करने को कहा जाता है। दानव हवा में भोजन उड़ाकर उसे मुँह में पकड़ने की चेष्टा करते हैं और सारा भोजन उनके कपड़ों पर गिरता है। देवता एक दूसरे के मुँह में कौर देकर बड़े आनंद से भोजन का स्वाद लेते हैं। "जहाँ सहकार्य की भावना होती है, वहीं देवत्व का निर्माण होता है। जहाँ केवल स्वार्थ होता है, वहाँ दानवी प्रवृत्तियाँ जन्म लेती हैं।" यह भाव इस प्रात्यक्षिक द्वारा सिखाया जाता है।

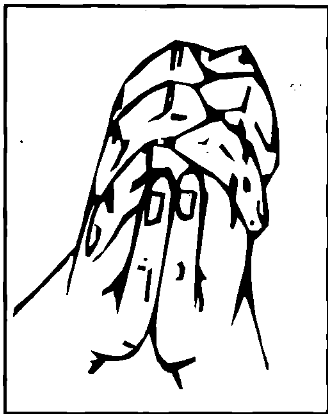
७. जीवन जीने के लिए आवश्यक है-विधेयात्मक विचारधारा

एक मोमबत्ती जलाकर बालकों से पूछा जाता है कि एक मोमबत्ती जलने के लिए कौन-कौन सी बातें आवश्यक होती हैं? बालक उत्तर देते हैं कि बत्ती (धागा) प्राणवायु, मोम, चिनगारी, माचिस आदि।

प्रशिक्षक जलती हुई मोमबत्ती को उलटी कर देता है। कुछ ही क्षणों में वह अपना ही मोम गिरने से बुझ जाती है। इसका अर्थ यह है कि केवल प्राणवायु, मोम आदि बातें होने पर भी जब तक मोमबत्ती सीधी नहीं है, तब तक वह जलती नहीं रह सकती। उसी तरह, जीवन में जब तक विधेयात्मक विचारधारा, सकारात्मक दृष्टिकोण नहीं होता, तब तक जीवन सार्थक नहीं बनता। यदि विचारधारा नकारात्मक हो, अधोगामी हो तो जीवन का अध:पतन भी दूर नहीं होता।

८. हर समय शारीरिक शक्ति से काम लेना ठीक नहीं

इस प्रात्यक्षिक में दो-दो बालकों की जोड़ियाँ बनाकर उन्हें आमने-सामने बैठाया जाता है। इसमें से एक बालक को अपने दोनों हाथ कसकर पकड़े रहने को कहा जाता है और दूसरे बालक को उसके हाथ छुड़ाने के लिए प्रयास करना होता है। जिस जोड़ी के हाथ सबसे पहले छूटेंगे, वह जोड़ी विजेता होगी, यह भी कहा जाता है।



१-२-३ कहने पर प्रयास शुरु होता है। जिसके हाथ सबसे पहले छूटेंगे-वह जोड़ी विजेता होगी, यह मालूम होते हुए भी जिसने हाथ पकड़ रखे हैं, वह हाथ छोड़ता नहीं और सामने वाला हाथ छूटे, इसलिए अपनी पूरी शारीरिक शक्ति लगाकर प्रयास करता है। (३-४ मिनट) के बाद प्रशिक्षक रुकने का आदेश देता है और कहता है- "यदि शारीरिक बल लगाने के बजाय केवल मुँह से कह देते कि "भाई हाथ छोड़ो, हमें जीतना है," तो शायद सामने वाला झट से हाथ छोड़ देता। लेकिन सामनेवाला बल से काम ले रहा है, यह देखकर हाथ पकड़े रहने वाला भी अपनी शक्ति का प्रयोग करने लगा। काम कोई भी हो, उसे शारीरिक शक्ति से ही सुलझाया जा सकता है, यह हमारा भ्रम है। जो काम, शान्ति और प्रेम से हो सकता है, उसके लिए भी शारीरिक शक्ति क्यों?

९. बहिर्मुखता के लिये आवश्यक है, नम्रता

इस प्रात्यक्षिक में १५ से २० बालकों का मण्डल बनाया जाता है। एक दूसरे का हाथ पकड़कर सभी बालक गोला बनाकर खड़े होते हैं। सभी के मुँह अन्दर की ओर रहते हैं। उनसे यह कहा जाता है कि आपको अपना मुँह तथा सम्पूर्ण शरीर बाहर की ओर लाना है, परन्तु यह करते समय हाथ छूटे नहीं।

बालक काफी प्रयास करते हैं लेकिन उनसे यह करना सम्भव नहीं होता। प्रशिक्षक यह काम अपने निर्देश द्वारा पूरा करता है। सबसे पहले किसी भी दो बालकों के हाथ ऊपर किए जाते हैं, और उनके नीचे से हाथ छोड़े बिना एक-एक कर सभी बालक निकल जाते हैं। अब अन्तिम बालक नीचे से चला

जाता है तो अपने आप सभी बहिर्मुख हो जाते हैं। इसका अर्थ- बहिर्मुख (पर चिंतक, दूसरों का चिंतन-विचार करने वाला, केवल आत्मकेंद्रित नहीं) होने के लिए दो बातों की आवश्यकता होती है-

१. दूसरों को रास्ता देना आवश्यक है। (जैसे, दो बालकों ने दूसरों के लिए अपने हाथ ऊँचे कर रास्ता बनाया।)
२. नम्रता, (जैसे, दिए गए रास्ते से बचे हुए बालक झुक कर निकले।) अहंकार मुक्त, नम्र लोग ही बहिर्मुख बन सकते हैं और वे ही लोग जन-प्रिय होते हैं।

१०. अपनी पुस्तकों से प्रेम करो

कई बालक ऐसे होते हैं, जो विद्यालय से घर जाते ही अपनी पुस्तकें जहाँ-तहाँ फेंक देते हैं। यदि एक दो पुस्तकें ले जानी हों तो उसी के अन्दर कम्पास, रूलर, पेन आदि ले जाते हैं। इस से पुस्तकें फटने का डर रहता है। इस बात को प्रात्यक्षिक द्वारा सिखाने के लिए एक बालक को आगे बुलाकर उसकी दो उँगलियों के बीच पेन रखकर हलके से उँगलियाँ दबाई जाती हैं। उँगलियों पर जोर पड़ते ही बालक जोर से चिल्लाता है। इस बात को लेकर प्रशिक्षक कहता है कि, "यदि हमारी दो उँगलियों के बीच कुछ रखकर दबाया जाये तो हमें क्षति पहुँचती है, कष्ट होता है। पुस्तकों के बीच कुछ रखने से क्या पुस्तकों को क्षति नहीं पहुँचती?" पुस्तकें बोल नहीं सकतीं, इसलिए उन पर अत्याचार करना ठीक नहीं। पुस्तकें हमारी गुरु हैं, इसलिए उनका उचित आदर करना हमारा कर्त्तव्य है। पुस्तकों पर छपे हुए महापुरुषों के चित्रों पर मूँछे बनाना, उन्हें गन्दा करना, बिना आवरण की पुस्तकें रखना, ये बातें हमें शोभा नहीं देतीं।" इसी के आगे जोड़ कर पुस्तिकाओं पर क्रमांक लिखना आदि बातें हम बता सकते हैं।

११. विचारों की सम्पन्नता सर्वश्रेष्ठ

प्रशिक्षक किन्हीं दो बालकों से एक-एक रुपये के सिक्के माँगता है। जिनके पास सिक्का हो, उन दो बालकों को आगे बुलाया जाता है। उनका नाम पूछ कर वह सिक्का ले लेता है। 'अ' का सिक्का 'ब' को देता है और 'ब' का 'अ' को। सिक्कों का आदान-प्रदान करने के पश्चात् प्रशिक्षक बालकों से पूछता है कि 'अब कौन धनी बना?'

बालक- दोनों के पास पहले भी एक रुपया था और अभी भी एक ही रुपया है।

प्रशिक्षक- इसका अर्थ कोई भी धनी नहीं बना। यदि दोनों को धनी बनना है तो दोनों को एक दूसरे को क्या देना होगा? ऐसी कौन सी चीज है, जिसके आदान-प्रदान से दोनों ही धनी बनेंगे?"

बालक अनेक विकल्प देने का प्रयास करते हैं, परन्तु वे इस प्रश्न का सही उत्तर नहीं दे पाते।

प्रशिक्षक- ऐसी कोई भौतिक वस्तु नहीं, जिसके आदान-प्रदान से दानों ही धनी बनी जाएँ, परन्तु आनन्द, हास्य, इनके साथ-साथ यदि अच्छे विचारों का आदान-प्रदान एक दूसरे से किया जाय तो दोनों ही विचारों से सम्पन्न बन सकते हैं। एक दूसरे के साथ अच्छे विषयों पर चर्चा करने से दोनों का ज्ञान बढ़ेगा। केवल व्यर्थ की बातें करके अपना समय मत गँवाओ, अच्छी चर्चा करो।" इसके पश्चात् व्यर्थ चर्चा और सार्थक चर्चा कौन सी होती है, इस बारे में बालकों से संवाद करें।

१२. कहने से अच्छा है, करना

हम जो अच्छी बात सुनते हैं, पढ़ते हैं और कहते हैं, उन्हें यदि जीवन में नहीं अपनाएँ तो ये सारी बातें व्यर्थ हैं। कुछ लोग केवल कहते हैं, करते कुछ भी नहीं। कुछ लोग कहते भी हैं और करते भी हैं। और कुछ लोग कहते कुछ भी नहीं, केवल करते हैं। सर्वश्रेष्ठ वही लोग हैं, जो कहते नहीं और कर दिखाते हैं।

यह बात बालकों को समझाने के लिये प्रशिक्षक बालकों से पहले ही कह देता है कि उन्हें केवल वही क्रिया करनी है, जो प्रशिक्षक कहते हैं, इसलिए प्रशिक्षक की बात को ध्यान से सुनें। सबसे पहले प्रशिक्षक बालकों को अपना बायाँ हाथ ऊपर उठाने को कहता है। फिर हाथ की उँगलियाँ फैलाने को, यह क्रिया प्रशिक्षक भी साथ-साथ करता है। फिर अँगूठा और अनामिका को जोड़कर एक गोला बनाने को कहा जाता है। फिर धीरे-धीरे हाथ नीचे मुँह की ओर लाना है, इसके लिए प्रशिक्षक अपनी उँगलियों को गाल पर लगाते हुए हाथ ठोड़ी पर लगाने की आज्ञा देता है। प्रशिक्षक का हाथ गाल पर देखकर बालक भी अनजाने में अपना हाथ गाल पर लगा देते हैं। फिर एक बार वही क्रिया पहले से दोहरायी जाती है। दूसरी बार भी उसी तरह बालक आपना हाथ ठोड़ी पर रखने के बजाय गाल पर रख देते हैं। हाथ गाल पर ही रखकर प्रशिक्षक बालकों से पूछता है, "मैंने हाथ गाल पर रखने को कहा था या ठोड़ी पर?" बालक इस बात पर हँस पड़ते हैं। और कहते हैं कि प्रशिक्षक ने हाथ ठोड़ी पर रखने के लिए कहा था, लेकिन वह

स्वयं अपना हाथ गाल पर रख रहा था, इसलिए उन्होंने भी अपना हाथ गाल पर रखा।

प्रशिक्षक- इसका अर्थ यह है कि मैं जो कह रहा था, उससे अधिक आपका ध्यान मैं जो कर रहा था, उस बात पर था। शब्द से भी अधिक प्रभाव आप पर क्रिया का पड़ रहा था। आप जो कह रहे हैं, इस से भी अधिक महत्त्व इस बात का है कि आप क्या कर रहे हैं। इसलिए श्रेष्ठ बातें कहकर रुक मत जाना। उन्हें जीवन में अपनाने का प्रयास भी करना। वही मनुष्य श्रेष्ठ होता है, जो सत्कार्यों से अपनी महानता सिद्ध करता है।''

१३. आगे बढ़ो!

१५-२० बालकों का एक मण्डल (गोला) बनाकर खड़ा किया जाता है। एक दूसरे का हाथ पकड़ कर सभी बालक मण्डल को अधिक से अधिक (खींचकर) खड़े होते हैं। उन्हें एक-दूसरे का हाथ अपनी-अपनी छाती से लगाने को कहा जाता है। सीटी बजते ही हाथ अपने सीने से लगाने के प्रयास में बालक खींचातानी शुरु करते हैं। बल के प्रयोग से सभी दूसरे का हाथ अपनी छाती पर लगाने का प्रयत्न करते हैं। अपना हाथ दूसरे की छाती से न लगे, इसकी भी चेष्टा होती है। जो बालक अधिक बलवान हैं, वे दूसरों का हाथ बलपूर्वक अपनी छाती से लगाकर विजय का आनंद पाते हैं। फिर प्रशिक्षक सभी को रुकने का आदेश देकर कहता है ''छाती से हाथ लगाने का अर्थ है कि दूसरे को अपने हृदय से लगाओ! सभी के हृदय एक दूसरे से जुड़ जायेंगे तो संगठन की शक्ति बढ़ेगी। यह कार्य बल से सम्पन्न नहीं होगा। यदि बलपूर्वक भी किसी का हाथ अपने हृदय से लगाने में आप सफल होते हैं तो भी जिसका हाथ आपके हृदय पर है, वह सन्तुष्ट नहीं होगा। यह काम करने के लिए सभी को एक कदम आगे बढ़ना होगा।''

तने हुए गोले से सभी बालक एक कदम आगे बढ़ते हैं। फिर प्रशिक्षक सभी को अपने बायें हाथ से बायें बाजू में खड़े बालक का दायाँ हाथ अपने हृदय से लगाने को कहता है। इस प्रयास में किसी भी खींचतानी के बिना सभी का एक हाथ दूसरे के हृदय पर लग जाता है।

प्रशिक्षक- ''यदि किसी को अपनाना हो तो आपको स्वयं एक कदम आगे बढ़ना होगा। जो अंहकार को छोड़कर एक कदम आगे बढ़ता है, वही मनुष्य दूसरे के हृदय जीतने में सफल होता है। किसी भी काम के लिए आवश्यक बात यही है कि एक कदम आगे बढ़ो।''

१४. विचारों की चौखट बढ़ाइए

अनेक विषयों पर एकांगी विचार करके अथवा संकुचित दृष्टि रखकर हम उस विषय में गलत धारणा बना लेते हैं। बालकों के साथ यह बात विशेष रूप से लागू होती है। माँ बालक से कहती है कि शाम के समय जल्दी घर आ जाना। कभी वह किसी पार्टी में या किसी मित्र के घर जाने से मना भी कर देती है। कभी दूरदर्शन का कोई धारावाहिक अथवा चलचित्र देखने से मना कर देती है। इस बात पर बालक का अन्तर्मन दुःखी हो जाता है। उसे इस मनाही का कारण समझाना माँ के लिए कठिन होता है, इसलिए वह सोचता है कि हर समय माँ मुझे रोक देती है।

सर्वांगीण विचार करने की प्रवृत्ति बालकों में पनपे, इस दृष्टि से उन्हें यह आकृति दिखाकर प्रशिक्षक पूछता है कि इसमें कितने वर्ग बने हुए हैं?

सबसे पहले उत्तर आता है कि इसमें १६ वर्ग हैं। यह उत्तर ठीक नहीं है, ध्यान से आकृति देखो" ऐसा कहने पर कोई बालक बाहर का बड़ा वर्ग मिलाकर १७ चौरस हैं, ऐसे कहता है। और विचार करने पर ४-४ छोटे वर्ग को मिलाकर और भी वर्ग की संख्या बढ़ जाती है। फिर ९-९ वर्गों को मिलाकर ३० वर्ग हैं, यह बात कोई मेधावी छात्र बताता है। ३०, यह सही उत्तर है, लेकिन उन्हें ढूँढने के लिए हमारे विचारों की चौखट को विस्तृत करना पड़ा। १६-१७-२१-२५-३० ऐसे वर्ग बढ़ते गए।

प्रशिक्षक-"इसी प्रकार हम अनेक बातों पर पूरा विचार किये बिना ही उत्तर ढूँढने का प्रयास करते हैं। और हमारा विचार गलत सिद्ध होता है। हमारी माँ का किसी बात के लिए हमें मना करना, हमें अतीव दुःखद लगता है, लेकिन इसके पीछे हमारे ही उज्जवल-भविष्य का उसका सपना सही कारण होता है। इसलिए उसके बारे में गलत धारणाएँ बनाना उतना ही संकुचित विचार है, जितना इस आकृति में १६ वर्ग देखना।"

१५. विकलांगों के प्रति स्नेह भाव रखें।

इस प्रात्यक्षिक के लिए लगभग ३० मिनट का समय आवश्यक है। उपस्थित बालकों में से आधे बालकों की आँख पर पट्टी (रूमाल) बाँधकर उन्हें अन्धा बनाया जाता है तथा अन्धे बने बालकों के घनिष्ठ मित्र को उनका हाथ पकड़ने को कहा जाता है। दृष्टिवान् बालकों को (जिन्होंने अन्धों के हाथ पकड़े हैं) गूँगा बनने को कहा जाता है। उन्हें इस प्रात्यक्षिक के बीच कुछ भी नहीं बोलना है। अपने प्रिय मित्र को उन्हें परिसर की परिक्रमा करवानी है और यह करते समय उन्हें केवल स्पर्श से परिसर में उपलब्ध वस्तुओं (जैसे खंबा, सीढ़ी, साईकल, पेड़, फूल, आदि) का परिचय अपने अंधे मित्र को करवाना है। दस मिनट पश्चात् सीटी बजने पर उन्हें भूमिका बदलनी है। अंधा मित्र अब गूँगा और गूँगा मित्र अंधा बनेगा। फिर यही उपक्रम दोहराना है। यह समाप्त होने तथा निर्धारित जगह पर पहुँचने पर बालकों से अपने-अपने अनुभव सुनाने को कहें।

जब परिक्रमा का प्रारम्भ होता है, तभी से अनेक समस्याओं का प्रारम्भ होता है। अपने अन्धे मित्र के जूते ढूँढ़ने में असमर्थता, सीढ़ियाँ उतरते समय हाथ दबाकर पीछे खींचना, अन्धे का अपने मित्र पर अविश्वास, एकाध बालक का गिर जाना आदि समस्याएँ आती हैं। जब यह यात्रा पूर्ण करके बालक लौटते हैं और अपने अनुभव बताते हैं, तब सभी रोमांचित हो जाते हैं। अन्धा बनने पर कौन-कौन सी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा, उस समय मन में क्या विचार आए, अपने मित्र पर भी कैसे अविश्वास हुआ, गूँगा होते समय विचारों को अभिव्यक्त करने में कैसी कठिनाई हुई आदि बातें बालकों को विस्तार से कहने के लिए प्रवृत्त करना है। अपने अनुभव कहने के पश्चात् बालकों को विकलांगो के जीवन संघर्ष का अल्प परिचय होता है तथा उनमें स्नेह तथा सहकार्य प्रदान करने की भावना जागृत होती है।

१६. संतोषी वृत्ति आवश्यक

प्रशिक्षक बालकों को पानी से आधा भरा हुआ काँच का प्याला दिखाकर पूछता है-"यह क्या है ?" इस प्रश्न के अलग-अलग उत्तर बालक देते हैं। कोई कहता है-यह आधा भरा हुआ गिलास है तो कोई कहता है यह आधा खाली गिलास है। प्रशिक्षक समझाता है, "दोनों ही जवाब सही तो है परन्तु आधा भरा हुआ दिखाई देना, यह संतोषी वृत्ति का द्योतक है। भगवान् ने मनुष्य का निर्माण करते समय उसे कई विशेषताओं से भर दिया एवं कई कमियाँ भी छोड़ दीं। परन्तु आज हमें ऐसे

अनेक लोग दिखते हैं, जो केवल अपनी कमियों पर रोते रहते हैं। किसी के पास सौंदर्य नहीं तो किसी के पास शक्ति नहीं, किसी के पास कुशाग्र बद्धिमत्ता नहीं तो किसी के पास कुशल कारीगरी नहीं। लेकिन कमियों को समझकर उन्हें ठीक करने की चेष्टा करने वाले एवं अपनी विशेषताओं को और विकसित करने का निरन्तर प्रयास करने वाले लोग सफलता के सोपान पर बढ़ते रहते हैं। हमें प्रकृति से जो भी मिला है, उसके लिए सन्तोष प्रकट करते हुए प्रयत्नपूर्वक विकास की ओर अग्रसर होना पुरूषार्थ है। अतः सन्तोषी वृत्ति अपनाकर जीवन में आनन्द बढ़ाएँ।''

१७. जन्मदिन विधि

बालकों के जन्मदिन मनाते समय मोमबत्तियाँ बुझाना तथा केक काटना-यह पाश्चात्य पद्धति अपनाने की प्रथा लोकप्रिया हो रही है। जन्मदिन एक ऐसा स्वर्णिम अवसर है, जब हम बालकों को उच्चतम भारतीय संस्कृति से परिचित करा सकते हैं। जन्मदिन भारतीय पद्धति से कैसे मनाना चाहिए, यह बालकों को प्रयत्क्ष दिखाना आवश्यक है। इसलिए इष्टदेव का पूजन, तिलक आदि करके उस क्रिया में छिपे मनोवैज्ञानिक दृष्टिकोण से बालक को परिचित कराया जाता है। हैपी बर्थ डे टू यू' कहने के स्थान पर सुन्दर संस्कृत गीत गाकर बालक का अभिनंदन करें व बालक....(नाम)चिरंजीव हो, व्रतशील हो, प्रगतिशील हो, धर्मशील हो का घोष करते हुए उसे शुभकामनाएँ दें। यह पद्धति देखकर बालकों को उनका जन्मदिन भी ऐसा ही मनाने की इच्छा हो जाती है। इसके लिये इस विधि की जानकारी देने वाली पुस्तिका गायत्री परिवार द्वारा प्रकाशित है। संस्कार वर्गों में तथा शिविरों में इस प्रात्यक्षिक को दिखाना हम अनिवार्य समझते हैं।

१८. एकाग्रता की आवश्यकता

सर्वप्रथम प्रशिक्षक बालकों को कहानी सुनाता है- एक आदमी जापानी तत्त्ववेत्ता के पास गया। उसने तत्त्ववेत्ता से कहा-''मैंने सुना है, आप झेन तत्त्वज्ञान के मर्मज्ञ हैं। कृपा करके इस तत्त्वज्ञान के बारे में मुझे जानकारी दीजिए। अन्य कार्यक्रमों के कारण मैं अत्यन्त व्यस्त हूँ, अतः समय की सीमा में आप इस तत्त्वज्ञान से मुझे अवगत कराएँ।''

तत्त्ववेत्ता ने कहा ''बैठिये। पहले चाय लेंगे और बाद में ज्ञान की बातें करेंगे।'' तत्त्ववेता ने दो कप मँगवाए, व चाय डालना शुरु किया। कप भर गया

तथा चाय कप से नीचे गिरने लगी, फिर भी तत्त्ववेत्ता चाय डालता ही रहा। (इस क्रिया को प्रशिक्षक कहानी कहते-कहते बालकों के सम्मुख करता है-इस प्रात्यक्षिक में चाय के स्थान पर पानी का उपयोग करें।) यात्री ने तत्त्ववेत्ता का हाथ पकड़ कर कहा-"यह आप क्या कर रहे हैं? चाय तो व्यर्थ जा रही है। कप भरा हुआ है और आप चाय डालते ही जा रहे हैं।"

तत्त्ववेत्ता ने उत्तर दिया "बिल्कुल ठीक कहा आपने! जब कप में स्थान नहीं हो तो चाय नहीं डालना चाहिए-चाय व्यर्थ जाती है। उसी प्रकार मन में अनेक विचार भरे हुए हों तो तत्त्वज्ञान के लिए स्थान कैसे बचेगा? मेरा कहना भी व्यर्थ जायेगा। इस समय आप अत्यन्त व्यस्त हैं, तो तत्त्वज्ञान व्यर्थ हो जायेगा। अपने अन्य कार्य पूरे करो, उसके पश्चात् स्वस्थ चित्त से आप लौट आना। मैं आपको झेन तत्त्वज्ञान से परिचित कराऊँगा।"

तात्पर्य के रूप में प्रशिक्षक बालकों से कहता है-"आप जब किसी भी प्रकार का ज्ञान ग्रहण करने जाते हैं तब आप को स्वस्थ चित्त से, एकाग्रचित्त से जाना चाहिए। और मन को एकाग्र करने का सरल उपाय है-ओंकार ध्वनि, श्वास-प्रश्वास के साथ! यदि आपके मन में इस समय अन्य विचार आ रहे हों तो थोड़ी देर अपनी आँखें बन्द करके दीर्घ श्वसन में मन शान्त करें। यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो आपका समय और कार्य दोनों व्यर्थ हो जायेंगे। "

इस बात को अपने विद्यालय में, स्वाध्याय करते समय, खेल के मैदान पर एवं अन्य कोई भी कार्य करते समय ध्यान रखना, जिससे आप प्रत्येक कार्य सही ढंग से पूर्ण कर सकें।"

१९. झंझावातों में इन अच्छी बातों को भूल न जाना

शिविर वर्ग, नैतिक शिक्षा के पाठ सुनने के पश्चात् बालकों में अपने भावी जीवन में क्या करना है, इस बात का विचार शुरु हो जाता है! इस पाठ के अन्त में बालकों को एक जलती हुई मोमबत्ती तथा एक जलता टार्च दिखाया जाता है और पूछा जाता है कि आप अपने जीवन में टार्च बनना चाहेंगे या मोमबत्ती?

बालक इस प्रश्न से उलझ जाते हैं, फिर भी कुछ बालक कहते हैं मैं टार्च बनना चाहूँगा, तो कुछ कहते हैं-मैं मोमबत्ती बनना चाहूँगा। प्रशिक्षक फूँक मारकर मोमबत्ती बुझा देता है और कहता है कि आप इन बातों को जीवन में अपनाने का प्रयत्न चालू करेंगे तो आपके मित्र आप पर हँसेंगे और कहेंगे कि ये सब व्यर्थ की

बातें हैं। आप मोमबत्ती के समान इन झंझावतों में उनकी बातों से बुझ मत जाना। टार्च पर फूँक मारने से वह बुझता नहीं। इसी प्रकार अपने श्रेष्ठ विचारों पर दृढ़ रहना। भक्त ध्रुव की तरह आप में दृढ़ता जगे, ऐसी शक्ति परमात्मा आपको प्रदान करे, यही हमारी प्रार्थना है।

२०. जैसी दृष्टि–वैसी सृष्टि



यहाँ पर छपे चित्र को ध्यान से देखकर आप यह बताइये कि चित्र में जो स्त्री है उसकी आयु कितनी हैं?

इस प्रश्न के अनेक उत्तर मिल सकते हैं। कोई उसकी आयु ६ वर्ष की बताएगा तो कोई १६ वर्ष की, कोई इसे ५० वर्ष की बता सकता है, तो कोई कहेगा १०० वर्ष की है। सभी उत्तर सही हैं, क्योंकि हर एक की चित्र की ओर देखने की अलग दृष्टि है।

जो व्यक्ति चित्र के आगे आये हुए भाग को ठोड़ी के रूप में देखेगा, उसे एक सुकुमार युवती दिखेगी तथा इसी भाग को नाक के रूप में देखने वाले व्यक्ति को वहाँ एक बुढ़िया दिखाई देगी।

जैसा व्यक्ति चित्र के विषय में है, वैसा ही प्रत्येक काम के बारे में भी है। किसी मूर्तिकार को अपना काम, पत्थर फोड़ने का दण्ड लग सकता है, तो कोई यही काम परमात्मा की पूजा समझकर भी कर सकता है। कार्य की ओर देखने का आपका क्या दृष्टिकोण है, यह इस पर निर्भर है कि आप को उस कार्य में आनन्द प्राप्त होता है अथवा दुःख।

सद्ग्रन्थ ऐसे शिक्षक हैं जो बिना बेंत मारे और कटु शब्द कहे, हमें ऊँची शिक्षा प्रदान करते हैं।

षष्ठ अध्याय

मनोरंजक तथा मैदानी खेल

प्रथम भाग - मनोरंजक खेल

बालक स्वभावत: चंचल होते हैं। एक ही स्थान पर अधिक समय तक उन्हें बैठना थोड़ा कठिन लगता है। संस्कार वर्ग की समय-सारणी में थोड़ा सा समय मनोरंजन का भी होता है। मनोरंजन के उत्तम विकल्प बालकों के लिए उपलब्ध कराना, यह भी हमारा कर्तव्य बनता है। मनोरंजन के आकर्षण से भी अधिक बालक वर्ग में आते हैं और अच्छी बातें सीख लेते हैं। इस पुस्तिका में मनोरंजन के ऐसे खेल समाविष्ट किये गये हैं, जिनका मनोरंजन के साथ-साथ कुछ सिखाने में भी उपयोग हो।

सायंकाल के सत्र में मैदान पर खेलने हेतु अधिकतम बालक एक साथ खेल सकें तथा अत्यल्प साहित्य की आवश्यकता हो, इसी प्रकार के खेल चुने गये हैं। मैदानी खेल से संघ भावना का विकास, हार-जीत को सहने की शक्ति, तथा उत्तम आरोग्य हेतु सर्वांगीण विकास, ये सभी बातें अनायास ही बालकों में आरोपित हो जाती हैं।

१. भारत माता

किसी भी एक बालक को सामने बुलाकर उसे कमर पर हाथ रखकर खड़ा होने को कहें। बालक की आकृति लगभग भारत के मानचित्र जैसी बन जाती है। यह "भारत माता है" ऐसा कह कर भिन्न-भिन्न शहर कहाँ पर हैं ? यह अन्य बालकों से पूछें। सिर पर जम्मू-काश्मीर, छाती पर "दिल्ली" बायें हाथ के मध्य पर "गुवाहटी" मुम्बई कमर के दाहिनी ओर, चेन्नई बाँये घुटने के पास, इस प्रकार अनेक शहरों के बारे में पूछा जा सकता है। शहरों के नामों की चिठ्ठीयाँ बनाकर उन्हें यथास्थान कपड़े पर लगाया भी जा सकता है। समूह में छोटे बालकों की संख्या अधिक होने पर नगरों के स्थान पर राज्यों को लिया जा सकता है। भारत का मानचित्र ठीक प्रकार समझने के लिए यह खेल उपयुक्त है।

२. शब्द संग्रह बढ़ाओ

"राजधानी रायगढ़" इस शब्द को फलक पर लिखें। और इन शब्दों के अक्षरों से अधिक से अधिक शब्द बनाने को कहें। शब्द बनाते समय अक्षर किन्हीं भी मात्राओं सहित हो सकता है। परन्तु फलक पर लिखे शब्दों के अतिरिक्त अन्य किसी शब्द का उपयोग करना मना होगा। प्रारंभ में बालकों को मिलकर शब्द बनाने को कहें। उदा.-राजा, राधा, रानी, राम, राग आदि, जीरा, जीजी, जगत्, धारा, धागा, धान्य, गया, गाय, नीरा, नीला, नीज, नारायण इस प्रकार अनेक शब्द बालक मिलकर बना सकेंगे। वर्ग में थोड़ी देर खेल खेलने के उपरान्त दूसरे दिन उन्हें घर से और अधिक से अधिक शब्द बनाकर लाने को कहें। अधिक से अधिक शब्द बनाने वाले बालक की सबके सम्मुख प्रशंसा करना न भूलें। इसी प्रकार "गीता परिवार" इस शब्द से भी कई शब्द बन सकते हैं। इस खेल में बनने वाले शब्दों की संख्या १०००-१५०० बन सकती है, ऐसा अनुभव है।

३. पैर उठा नहीं सकते

किसी एक बालक को सम्मुख बुलाएँ। एक हाथ व एक पैर दीवार से पूर्णतया चिपका रहे, इस प्रकार उसे खड़ा करें। दीवार की सहायता लिये बिना दूसरा पैर ऊपर उठाने को कहें। शरीर का गुरुत्व-केन्द्र दीवार के समान्तर हो जाने से कितना भी प्रयास किया जाय, दूसरा पैर उठाना सम्भव नहीं होता। अन्य बालक भी इस का आनन्द लें।

४. गोंद लगाये बिना बालक कुर्सी पर चिपक गया

किसी भी एक बालक को बुलाकर कुर्सी पर बैठने को कहें। कुर्सी पर बैठने पर उसके पैर भूमि पर लगे रहें, इसका ध्यान रखा जाय। इस हेतु लम्बे बालक का चयन करना होगा। अब उसे सीना आगे झुकाये बिना उठने को कहें। इस प्रकार उठना असम्भव होगा। गोंद लगाये बिना बालक कुर्सी पर चिपक गया, यह देखकर सभी बालकों को आनन्द आयेगा।

५. प्राणी को पहचानो

इस खेल के लिये गाय, भैंस, ऊँट, घोड़ा, कुत्ता, गधा, सिंह, साँप इत्यादि नाम की स्पष्ट और बड़ी पट्टियाँ तैयार करें। एक बालक को बुलाकर उसे दिखाई न दे, इस प्रकार से एक पट्टी उसकी पीठ पर आलपिन से लगाकर सबको दिखाएँ। अपनी पीठ पर क्या लिखा है, यह उसे पहचानना है। इस हेतु उसे हाँ या ना अथवा प्रश्न में ही उत्तर निहित हो, ऐसे प्रश्न समक्ष बैठे बालकों से पूछने हैं। उदा.- मैं पालतू

हूँ क्या? मैं पेड़ पर रहता हूँ या भूमि पर? जंगल में रहता हूँ या गाँव में? मुझे सींग हैं या नहीं? मैं दूध देती हूँ क्या? मैं शाकाहारी हूँ या माँसाहारी? इत्यादि। सामान्यत: १५ से २० प्रश्नों में उत्तर मिल जाना चाहिये। उत्तर न बता पाने पर उसे छोटा सा दण्ड (उठक-बैठक)दिया जाय। प्रारम्भ में खेल समझाकर स्वयं भी एक प्राणी पहचान कर दिखाएँ।

६. अफवाएँ कैसे फैलती हैं?

आओ देखें अफवाएँ कैसे फैलती हैं। सबको एक घेरे में फासला देते हुए खड़ा कर दो। सीटी बजते ही घेरे में खड़े किसी एक खिलाड़ी को यह संदेश दे दीजिए कि "झण्डू का भाई मण्डू कुएँ में गिर गया, जल्दी स्ट्रेचर लाओ।" वह अपने से दायीं ओर के साथी को वह संदेश कान में सुनाएगा। इस प्रकार पूरे सदस्यों के पास से होता हुआ यह संदेश अन्तिम बच्चे तक आएगा। वह प्रशिक्षक के पास आकर जोर से संदेश को सुनाएगा। संदेश निश्चित रूप से बिगड़ा हुआ होगा। इस खेल का यह भी उद्देश्य है कि हमें किसी की सुनी-सुनाई बात पर तुरंत यकीन नहीं कर लेना चाहिए।

नोट-१. आवाज इतनी धीमी हो कि तीसरे को संदेश सुनाई न दे।

२. जिस समय संदेश दिया जा रहा हो, तीसरा खिलाड़ी अपना मुँह दूसरी ओर फेर लेगा।

३. संदेश को ध्यान से व धीरे-धीरे सुनाना है।

४. यदि कोई संदेश समझे नहीं तो फिर से एक बार सुनाने की अनुमति दे दें।

५. इसी प्रकार अन्य चटपटे से संदेश तैयार किए जा सकते हैं।

६. जब भी खेल को खिलाया जाये, नया संदेश तैयार करें।

७ .सम्बधित कहावतें बताओ

यहाँ उदाहरण के रूप में कुछ मुहावरे आदि दिये गये हैं। बालकों से इसी तरह और मुहावरे/कहावतें बताने को कहें। दो समूह बना देने पर अंत्याक्षरी जैसा खेल भी खेल सकते हैं।

हाथ:- अपना हाथ जगन्नाथ।

हाथ कंगन को आरसी क्या।

पेट:- पेट नरम, पैर गरम, सिर ठण्डा, वैद्य आए तो मारो डण्डा।

पहले पेट-पूजा फिर काम दूजा।

कान:- दीवारों के भी कान होते हैं।

जीभ:- जीभ तारक भी है, मारक भी।

रहिमन जिव्हा बावरी, कह गई सरग पताल। आपहुँ तो भीतर गई, जूती खात कपाल।
बगल:- मुँह में राम बगल में छुरी।
मन :- मन चंगा तो कठौती में गंगा।
दाँत:- खाने के दाँत अलग, दिखाने के अलग।
दाँत हैं तो चने नहीं, चने हैं तो दाँत नहीं।
पैर:- नाचने वाले के पैर थिरकते हैं। पाँव तले जमीन खिसकना।
होंठ:- अपने ही दाँत, अपने ही होंठ।
नेत्र:- आँखें हैं तो जहान है।
पीठ:- पीठ पर मारो, पेट पर मत मारो।
चमड़ी:- चमड़ी जाय पर दमड़ी न जाय।

८. उलटी संख्या

बालकों को दो भागों में बाँटा जाता है। पहले भाग के किसी बालक को १५०या १०० से उलटे क्रम में १५०, १४९..या १००,९९,९८..संख्या कहने को कहा जाता है। कहते समय रुकने पर या गलत कहने पर उसे रोका जाता है। अधिक से अधिक संख्या कहने वाला बालक विजयी होता है।

९. काका-काकी क्या करते हैं

पाँच-पाँच बच्चों के गण बनाइये। एक दूसरे का स्वर ठीक से सुन सकें, इस प्रकार उन्हें बैठाइये। प्रत्येक गण को अपनी बारी आने पर एक वाक्य बोलना है। वाक्य बोलते हुए बालकों को निम्नांकित नियमों का पालन करना आवश्यक है।

१. वाक्य का कर्ता काका या काकी ही होना चाहिए।
२. वाक्य के बीच का शब्द "ड़ी" अक्षर से अन्त होने वाला हो।
३. वाक्य अर्थपूर्ण होना चाहिए।
४. बीच का शब्द प्रत्येक बार नया होना आवश्यक है।

जैसे- काका की गाड़ी आयी, काकी ने साड़ी पहनी, काका की पगड़ी गिरी इत्यादि।

वाक्य याद करने को आधे मिनट का समय दिया जाय। वाक्य याद न आने पर वह गण निरस्त किया जाएगा। बचे हुए गणों में अन्त तक खेल चलता रहेगा। पपड़ी, नाड़ी, ताड़ी, साड़ी, सिड़ी, चुड़ी, खाड़ी, जाड़ी इत्यादि शब्दों का उपयोग करते हुए बच्चे झटपट वाक्य बनाते हैं। खेल में तो मनोरंजन होता ही है। साथ-साथ शब्द-शक्ति, कल्पना-शक्ति, स्मरण-शक्ति का विकास भी होता है।

१०. प्राणियों की कहावतें

इस खेल में पाँच से छः बालकों के तीन-चार समूह बनाइये। एक बुद्धिमान बालक हर एक समूह में हो, इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है, अन्यथा सारे होशियार बालक एक ही गण में आने पर खेल का आनन्द कम हो जाता है।

इस खेल में अपनी बारी आने पर हर एक गण को प्राणियों से सम्बन्धित एक-एक कहावत कहनी है। जैसे कुत्ते की दुम टेढ़ी की टेढ़ी, ऊँट के मुँह में जीरा, कुत्ता भौंके हाथी अपनी चाल चले, भैंस के आगे बीन बजाना, धोबी का कुत्ता न घर का न घाट का, बंदर क्या जाने अदरक का स्वाद, आ बैल मुझे मार, छुछुन्दर के सिर में चमेली का तेल इत्यादि। सभी बच्चों को स्पर्धा समझाने हेतु उदाहरण के तौर पर एक दो कहावतें कहिए और स्पर्धा आरम्भ कर दीजिए। जो गण आधे मिनट के समय में कहावत बोलने में असफल होगा, उस पर एक अंक चढ़ेगा।

११. 'र' की अंत्याक्षरी

यह खेल बालकों में शब्द-संग्रह, स्मरण-शक्ति, कल्पना-शक्ति के विकास हेतु उपयुक्त है। सुनार, लुहार, चमार, कुम्हार, मार, पार, ज्वार, जैसे "र" से अन्त होने वाले शब्द बनाकर, उनमें क्रिया पद जोड़ कर अर्थपूर्ण वाक्य मंडल में बैठे बालकों को एक-एक करके बोलने को कहिए। जो बालक वाक्य बोलने में असफल हो, उसे खेल से अलग करके एक ओर बिठाइये।

सुनार गहने बनाता है, सितार सुन्दर बज रहा है, रविवार को छुट्टी है; इत्यादि वाक्य उदाहरण के तौर पर बताइए। गँवार, चार नर, टमाटर, हार इत्यादि शब्दों से बालक झटपट वाक्य बनाते हैं। डॉक्टर, कार, सर इत्यादि अंग्रेजी रूढ़ शब्दों को स्वीकार कर सकते हैं। अन्तिम बचे पाँच-छः बच्चों में रोचक खेल होता है।

१२. काका जी के काम

यह खेल स्मरण-शक्ति विकास के लिये अत्यंत उपयुक्त है। सर्वप्रथम बालकों को निम्नांकित घटना सुनाइए। खेल का स्वरूप बाद में बताना है। घटना इस प्रकार है-

काकाजी कचहरी की ओर चलने को हुए। आज वेतन मिलने वाला था। वे घर से बाहर निकल ही रहे थे कि पत्नी ने कहा "अजी सुनते हो! आज लौटते हुए सेब, चीकू, खीरा और टमाटर ले आना।" 'लेता आऊँगा' काका जी ने कहा "पिताजी! मेरे लिए क्रिकेट का सामान याने बैट, बॉल और स्टम्प लाना मत भूलियेगा" महेश बोला। "हाँ-हाँ, जरूर ले आऊँगा" काकाजी बोले।

"साथ में मेरे लिए बेल्ट, सफेद मोजे और लाल रिबन लाना मत भूलना" बेटी

बोली "नहीं भूलूँगा" काकाजी ने उत्तर दिया। "अरे! मेरा चश्मा सुधारने के लिये भेजा है और रामायण बाइंडिंग के लिये दी हुयी है, वह वस्तु याद से ले आना, बेटा!" पिताजी ने कहा "और पूजा के लिए हार और प्रसाद लाना मत भूलना" माँ ने फरमाया। माँ बाबूजी आपकी वस्तु जरूर ले आऊँगा-काकाजी ने कहा। "अरे! सभी की वस्तुओं की सूची बन गयी, पर अपने कपड़ों के बारे में भी सोचा है कभी? घिसकर कितने पुराने हो गये हैं, आते समय शर्ट और पैंण्ट के लिये कपड़ा जरूर ले आना।" पत्नी ने हिदायत दी "अच्छी याद करायी" काकाजी ने तत्काल कहा।

"ओ काकाजी! कृपया इस फटी नोट को बाजार से बदल कर लाना" पड़ोसन ने आकर कहा। "ला देता हूँ" काकाजी बुदबुदाये।

काकाजी ने सारी बातें ध्यान से सुनीं और कचहरी की ओर चल पड़े। शाम को लौटते हुए ध्यान से सारी वस्तुएँ ले आये।

अब बालकों से कापी पेन निकालकर काकाजी के कामों की सूची बनाने के लिये कहिये। जिसकी सूची सबसे लम्बी और जल्दी बनेगी, उसे शाबासी देना मत भूलिये। कुल मिलाकर अठारह काम हैं।

१३. उलटा पुलटा

इस खेल में कहावत के शब्दों को उलट-पुलट कर प्रशिक्षक कहता है और बालक सही क्रम से कहावतें कहते हैं जैसे:-

१. फिर चार चाँदनी दिन की रात अंधेरी (चार दिन की चाँदनी फिर अंधेरी रात)
२. पहाड़ नीचे है अब के आया ऊँट (अब आया है ऊँट पहाड़ के नीचे)
३. छम् पड़े घम् छड़ी छम् विद्या आये घम् (छड़ी पड़े छम् छम् विद्या आये घम् घम्)
४. नाम नयन आँख सुख अन्धे के (आँख के अन्धे नाम नयन सुख)
५. गंगू भोज कहाँ तेली राजा कहाँ (कहाँ राजा भोज कहाँ गंगू तेली)
६. रोओ दीदे अपने अन्धे के खोओ आगे (अन्धे के आगे रोओ, अपने दीदे खोओ)
७. टेढ़ा आये आँगन नाच ना (नाच ना आये आँगन टेढ़ा)
८. अदरक बंदर जाने स्वाद का क्या (बंदर क्या जाने अदरक का स्वाद)
९. चढ़ा और नीम करेला (करेला और नीम चढ़ा)
१०. होगा कर भला भला (कर भला होगा भला)

उपर्युक्त प्रकार से और भी कहावतें बन सकती हैं।

बालकों से भी कहावतें उलट- पुलट कर पूछने को कहा जा सकता है।

१४. आओ थोड़ा हँसें

इस खेल में बालकों को कागज के दो लम्बे-लम्बे टुकड़े दीजिए। पहले टुकड़े में कर्ता और दूसरे में वाक्य का शेष भाग लिखने को कहिए जैसे:-

पहला टुकड़ा (कर्ता)	दूसरा टुकड़ा (शेष वाक्य)
१. लड़के	खेल रहे हैं।
२. साँप	रेंगता है।
३. चाँद	चमक रहा है।
४. हवा	बहती है।
५. कुत्ता	भौंकता है।
६. सितार	बज रहा है।
७. बरफ	पिघल रही है।
८. मेंढक	फुदकता है।
९. लड़की	भाग रही है।
१०. माँ	गा रही है।
११. बच्चा	रो रहा है।

कर्ता के स्थान पर व्यक्ति का नाम न हो; जैसे (राम-शामू, उषा, प्रभा) दोनों पर्चियाँ मोड़कर अलग-अलग स्थान पर एकत्रित कीजिए। हर बच्चे को एक-एक कर बुलाइये और पहली (कर्ता) और दूसरी (शेष वाक्य) एक-एक पर्ची उठाकर पढ़ने के लिए कहिए। अब प्रत्येक वाक्य का कर्ता बदला होगा। पढ़ते हुए बड़ा मजा आएगा, जैसे लड़का रेंग रहा है, सितार भौंक रहा है, बरफ फुदक रही है, इत्यादि निरर्थक वाक्य तैयार होंगे और हँसी का वातावरण बनेगा। ऐसा भी हो सकता है कि किसी का पूर्ण वाक्य सही जुड़ जाय। ऐसा होने पर तालियाँ बजाकर अभिनन्दन कीजिये।

१५. पुर का महापुर

यह भी सूची बनाने की एक प्रतियोगिता है। अपने देश का मानचित्र बालक ध्यान से देखे। शहरों के नाम याद रखने की दृष्टि से यह प्रतियोगिता अत्यन्त उपयुक्त है। स्पर्धा में बालकों को 'पुर' से अन्त होने वाले शहरों की (जैसे कानपुर, रायपुर, नागपुर गोरखपुर आदि) सूची बनानी है। आरंभ में दस मिनट का समय देकर वर्ग में यह सूची बनाने को कहिए। बाद में सूची का विस्तार एक सप्ताह का समय देकर घर पर करने को कहिए। शहर के नाम के आगे जिला एवं राज्य लिखना

जरूरी है। सिंगापुर जैसे विदेशी नाम भी चल सकते हैं। इस तरह ७००-८०० शहरों की सूची संगमनेर के बालकों ने बनायी थी।

१६: चित्र भारत माता का

इस खेल के लिए ड्राईंग पेपर एवं स्केच पेन आवश्यक है। प्रथमत: पाँच-पाँच बालकों के गण बनाइए एवं प्रत्येक गण को दो ड्राईंग पेपर तथा ४ स्केच पेन दीजिए। आपसी चिंतन से बालकों को भारत की आज की स्थिति एवं उनके सपनों का भारत, ऐसे दो चित्र बनाने हैं। जिसमें आज भारत देश में क्या समस्याएँ हैं, इसका पहला चित्र बनेगा (जैसे भ्रष्टाचार, जनसंख्या वृद्धि, रोग, प्रदूषण, व्यसनाधीनता, अस्वच्छता, दूरदर्शनग्रस्त युवा पीढ़ी आदि) दूसरे चित्र में उनका इसी विषय में क्या सपना है, इसका वे चित्रांकन करेंगे। २० से ३० मिनट समय देकर पहले चर्चा करें, फिर चित्र बनाने को कहिए। चित्र पूर्ण होने पर प्रत्येक गण उनके बनाये हुए चित्र की जानकारी अन्य बालकों को देंगे।

परिवार निर्माण के स्वर्णिम सूत्र

आजकल हमारे परिवार सुख, स्वभाव, संगठन- इन तीनों दृष्टियों से कष्ट, क्लेश, कठिनाइयों और कटुताओं से ग्रस्त हैं। निम्नलिखित १८ सूत्र परिवार निर्माण के लिये अत्यंत महत्त्वपूर्ण हैं। बालक की प्रथम पाठशाला परिवार ही है। अत: बालकों में सुसंस्कारिता संवर्धन हेतु इन सूत्रों को अवश्य अपनाया जाना चाहिये।

१. सुघड़ दिनचर्या
२. सुव्यवस्था
३. सुसंस्कृत वेषभूषा
४. सात्विक आहार
५. स्वच्छता
६. शिष्ट आचार
७. मितव्ययिता
८. सुमधुर वाणी
९. शारीरिक श्रम
१०. स्वस्थ मनोरंजन
११. स्वाध्याय
१२. शिक्षा (विद्या)
१३. समय का सदुपयोग
१४. आदर्शवादिता लादें नहीं ढालें
१५. सेवा और सहानुभूति
१६. संस्कार-स्रोत-आस्तिकता
१७. भेद-भाव न रखना
१८. पारिवारिक गोष्ठी

– 'परिवार को सुसंस्कृत बनायें' पुस्तक से

षष्ठ अध्याय

मनोरंजक तथा मैदानी खेल

द्वितीय भाग - मैदानी खेल

१. **कुहनी से छूना**-यह खेल यथा सम्भव छोटे बच्चों के लिये है। इसमें छूने जा रहे बालक को अपना बायाँ कान बायें हाथ से पकड़कर भागने वाले साथियों को बायीं कुहनी से छूना है।

२. **सिर से छूना**- पीछा करने वाला बालक अपने दोनों हाथ पीछे (पीठ पर) बाँधे रखकर अपने शेष साथियों को सिर से छूता है। जो साथी छूआ जाएगा वह बाहर होगा।

३. **मैं शिवाजी**-इस खेल में दो बच्चे चुने जाते हैं, एक "अ" और दूसरा "ब" 'अ' 'ब' को छूने दौड़ता है, जब कि शेष खिलाड़ियों में से कोई एक इन दोनों के बीच में से "मैं शिवाजी' कहते हुए दौड़ेगा। इस पर तत्काल "अ" इस बीच में से निकले साथी को छूने का प्रयास करेगा। यदि "मैं शिवाजी" कहकर दौड़ने वाले बालक को "अ" छू लेता है तो "मैं शिवाजी" कहने वाले बालक को "अ" के पीछे दौड़ना है।

४. **भस्मासुर**-प्रत्येक बालक को अपना बायाँ हाथ सिर पर रखना है। सीटी बजने पर, प्रत्येक बालक को दूसरे का सिर पर रखा हाथ हटाकर अपना हाथ वहाँ रखने का प्रयास करना है। ऐसा होने न पाये, इसलिये प्रत्येक को भागते रहकर बचना है। जिसके सिर पर दूसरे साथी का हाथ रखा गया, वह बाहर हो जाएगा।

५. **भैया! तू कहाँ है?**-एक गोला बनाकर, उसमें दो बालकों को उनकी आँखें रूमाल से बाँधकर कर खड़ा करेंगे। इन दो में से एक (छूनेवाला) बालक पूछेगा "भैया तू कहाँ है?" दूसरा बालक अपना स्थान छोड़कर कहीं से कहेगा "भैया, मैं यहाँ हूँ।" अन्य सभी बालक भी उसे बहकाने के लिये ऐसा ही करेंगे। पहला बालक इसी प्रकार प्रश्न पूछता जायेगा और उत्तर आने की दिशा से दूसरे साथी को ढूंढ़ने का प्रयास करेगा। दूसरा साथी यदि छूआ जाता है तो वह "बाहर हो जायेगा।"

६. **ताण्डव नृत्य**-एक बड़ा गोला भूमि पर बनाएँ। इस गोले के अन्दर सारे बालक खड़े होंगे। दोनों हाथों को पीछे से आपस में पकड़े रखना है। शिक्षक की सीटी बजते ही बालक पैरों के पंजों पर उछलने लगेंगे। प्रत्येक बालक को

उछलते हुए दूसरे के पैर पर अपना पैर रखने का प्रयास करना है। जिसके पैर पर दूसरे का पैर पड़ेगा वह "बाहर" जायेगा।

७. वीरो! ऐसा करो-इस खेल में शिक्षकों द्वारा बालकों को गोले में खड़ा कर, भिन्न-भिन्न प्रकार के आदेश (जैसे-बैठ जाओ, खड़े हो जाओ, दोनों कान पकड़ो, नाक पकड़ो, एक हाथ ऊपर, एक पाँव ऊपर, नाचो इत्यादि) देता है। बालकों को उन्हीं आदेशों का पालन करना है। जिनमें "वीरो" शब्द आदेश के पूर्व हो (जैसे वीरो! कान पकड़ो) जो बालक बिना "वीरो" शब्द के आदेशानुसार करेगा वह "बाहर" हो जायेगा। जो बालक अन्त तक रहेगा वह विजयी होगा। पुस्तिका के प्रारंभ में लिखी हुयी आज्ञाएँ इस खेल के माध्यम से सिखाना सरल होगा।

८. संकेत-शिक्षक बालकों को तीन संकेत देता है, बालकों को संकेत के अनुसार क्रिया करनी है।

१. **मनुष्य**-दोनों हाथों से प्रणाम करने की स्थिति लेना।

२. **बन्दूक**-बन्दूक चलाने जैसी हाथों की स्थिति लेना।

३. **गधा**-दोनों हाथों से कान पकड़ना।

शिक्षक गोले के बीच में खड़े होकर, परिधि पर खड़े बालकों को शीघ्रता से एक के पश्चात् एक संकेत (आज्ञा) देता है और स्वयं भी तदनुसार अपनी स्थिति ठीक या जानबूझकर गलत बनाता है। जो बालक गलत स्थिति लेते हैं, वे "बाहर" हो जाते हैं।

९. नेता ढूँढ़ो-सारे बालक गोलाकार बैठते हैं। किसी एक बालक को दूर जाने को कहकर शिक्षक किसी अन्य बैठे बालक को "नेता" नियुक्त करता है। तत्पश्चात दूर भेजे गये बालक को फिर से गोल में बुलाया जाता है और उसे "नेता" ढूँढ़ने को कहा जाता है। उसके गोल में आने के पश्चात् नियुक्त नेता कुशलतापूर्वक, आये बालक को न दिखायी दे, इस प्रकार विविध हावभाव, हलचल (जैसे ताली बजाना, कान पकड़ना, सिर पर थपथपाना इत्यादि) करता है। शेष बैठे बालक उसका अनुकरण करते हैं। इस समय वे नेता को सीधा नहीं देखते। नेता बीच-बीच में कुशलता से अपनी क्रियाएँ इस प्रकार बदलता है कि बाहर से आये बालक को वे ध्यान में न आये। नेता ढूँढ़ने को आया हुआ बालक गोल में घूमता, चक्कर लगाता है। ढूँढ़ने आया बालक यदि गलत बालक को नेता कहता है, तो उसे पाँच बैठकें लगानी पड़ती हैं। तीन बार प्रयास करने पर भी यदि बालक नेता ढूँढ़ने में असफल रहे, तो उसे एक गीत गाना पड़ता है।

१०. चिड़िया 'भुर्रर्'-शिक्षक बालकों को गोलाकार में खड़ा कर स्वयं गोल के केन्द्र में खड़ा होता है। तब वह एक के बाद एक पशु पक्षियों के नाम बोलता जाता है। (उदा. घोड़ा, साँप, कुत्ता, चिड़िया, मोर...) किसी पक्षी का नाम बोलते ही बालक दोनों हाथ ऊँचे कर जोर से "भुर्रर्" कहते हैं। परन्तु पक्षी के अतिरिक्त किसी पशु का नाम सुनने पर यदि कोई बालक "भुर्रर्" कहता है या हाथ ऊपर उठाता है तो वह "बाहर" हो जाता है। अन्त तक रहने वाला बालक विजेता होता है।

११. तीर-नीर-बड़ा गोला बनाकर उस पर बालक खड़े रहते हैं। गोले के अन्दर नीर (अर्थात पानी) और बाहर तीर (अर्थात भूमि) होगा। शिक्षक शीघ्रता से 'तीर-नीर' किसी भी क्रम में कहता जाता है। तीर कहने पर गोल के बाहर और नीर कहने पर गोले के अन्दर उछलकर जाना है। गलत करने वाला बालक बाहर हो जाता है। बालकों को सारे कार्य उछलकर करने हैं। जो अन्त तक रहेगा, वह विजयी होगा।

१२. दृश्य बनाओ-दस ग्यारह बालकों का समूह बनाकर उनमें से ही एक को गण प्रमुख नियुक्त करें। किसी भी एक दृश्य अथवा स्थान की घोषणा प्रशिक्षक द्वारा किये ज़ाने पर बालकों को उस दृश्य की रचना करनी है। उदाहरण के तौर पर मन्दिर कहते ही बालक मन्दिर का दृश्य बनायेंगे। जैसे- दो ऊँचे बालक एक दूसरे का हाथ पकड़कर मन्दिर का मुख्य द्वार बनायेंगे। उसके पीछे आशीर्वाद की मुद्रा में एक बालक भगवान बनकर बैठेगा। कोई पुजारी बनकर प्रसाद बाँटेगा तो कोई हाथ उठाकर घण्टा बजायेगा। कुछ भक्त फूलमाला पहनायेंगे कुछ आरती का अभिनय करेंगे। इसी अभिनय के दौरान सीटी बजने पर बालक जिस मुद्रा में हैं, वैसे ही स्तब्ध बिना हिले-डुले खड़े हो जायेंगे। प्रशिक्षक सभी गणों का दृश्य देखकर विजेता गण की घोषणा करेगा। इस खेल में बालकों की कल्पनाशक्ति विकसित होती है। व्यायाम शाला, संस्कार वर्ग, बाजार, स्वतंत्रता संग्राम, चिकित्सालय, विद्यालय, बस स्थानक, कार्यालय, कारखाना, यात्रा, विवाह, दीपावली इत्यादि अनेक प्रसंगों को लेकर दृश्य बनाये जा सकते हैं।

१३. समूह बनाइये-इस खेल में विद्यार्थियों के सामान्यतः पाँच या छः समूह बनें, इस प्रकार से पर्चियाँ बनाई जायें। कुल पर्चियों के छः भाग कीजिए जैसे-देवता, स्वतंत्रता सेनानी, प्राणी, पक्षी, संत, राजा इत्यादि समूह बनाइये।

१. **देवता**-शंकर, विष्णु, ब्रह्मा, इंद्र, राम, कृष्ण, हनुमान, गणपति आदि।

२. **स्वतंत्रता सेनानी**-गांधी, नेहरू, राजगुरु,आजाद, भगतसिंह, सरदार पटेल आदि।

३. पशु-बाघ, सिंह, लोमड़ी, सियार, बन्दर, हिरण, कंगारु, खरगोश, बैल आदि।
४. पक्षी-कौवा, बगला, मैना, तोता, मोर, चिड़िया, चील, गरूड़, बतख, मुर्गी आदि।
५. सन्त-तुलसी, सूरदास, कबीर, नानक, ज्ञानेश्वर, तुकाराम, मीराबाई आदि।
६. राजा-शिवाजी, राणाप्रताप, छत्रसाल, चन्द्रगुप्त, अशोक, अकबर, औरंगजेब, शिवीराजा, राजा दशरथ, संभाजी आदि।

उपर्युक्त नाम डालकर पर्चियाँ तैयार कीजिये। प्रत्येक गण में समान संख्या में पर्चियाँ रखिए। पर्चियाँ बाँटने से पहले खेल की रूपरेखा समझाइये। खेल खेलते समय कोई भी मुंह से बोलेगा नहीं। केवल अभिनय करते हुए घूमेगा। जैसे देवता आशीर्वाद की मुद्रा में घुमता दिखाई देगा। स्वतंत्रता सेनानी- "भारत माता की जय" ऐसे हाथ उठाकर नारा लगाने का मूक अभिनय करेगा। पक्षी उड़ने का, प्राणी चार पैर से चलने का, सींग का, अभिनय करते हुए ही घूमेंगे। बच्चे इससे अपने समूह के बालकों को एकत्रित करेंगे। सारी पर्चियाँ इकट्ठा कर शिक्षक के पास देकर जो समूह सबसे पहले पंक्ति में खड़ा होगा वह विजयी घोषित होगा। समूह में कितनी पर्चियाँ है यह पहले ही बता दिया जाता है। खेल समाप्त होने पर प्रत्येक बालक आगे आकर वह कौन था यह बताएँ तो खेल और भी आनन्ददायी होगा।

१४. चित्र पूरा बनाओ -इस खेल के लिये पहले १०-१० बालकों की पंक्ति बनाइये। पंक्ति के अंत में एक ड्रॉईंग पेपर और एक स्केच पेन रख दीजिए। खेल शुरू होते ही पंक्ति का पहला बच्चा पीछे जाकर चित्र बनाना प्रारम्भ करेगा। उस समय पाँच तक गिनती बोलनी है। जैसे ही गिनती बन्द होगी चित्र बनाना भी बन्द होगा। फिर दूसरा लड़का चित्र बनाने उठेगा तब तक पहला अपने स्थान पर आकर बैठ जायेगा। दूसरे के समय छः तक गिनती होगी। फिर तीसरे के समय सात तक इस तरह अन्तिम बालक तक १५ तक गिनती जायेगी। १५ तक गिनती में चित्र पूरा होना चाहिए। बच्चों को न बताते हुए सारे चित्र एकत्रित कीजिए। पंक्ति के पहले बच्चे को बुलाकर पूछिये कि उसने किस चित्र का प्रारंभ किया था? उसके बताने पर चित्र सभी बच्चों को दिखाइए। प्राय: चित्र कुछ और ही बन जाता है। जैसे मन्दिर का चित्र पहाड़ बन जाता है। हाथी, वृक्ष का रूप ले लेता है, गलत चित्र बना देखकर बच्चे खूब हंसते हैं। कभी-कभी ऐसा भी होता है, कि पहले बच्चे की कल्पना के अनुसार ही चित्र सही बनता है। ऐसे चित्र के लिए तालियाँ बजाकर अभिनन्दन कीजिए। इस खेल में यह सावधानी बरतनी होगी कि पहला बच्चा अपने मन का चित्र किसी से न कहे।

१५. आगे कदम स्पर्धा-इस खेल के लिये पाँच-छः बालकों की अलग-अलग पंक्तियाँ बनाइये। हर बालक को एक दूसरे की कमर पकड़कर शृंखला तैयार करनी है। एक-दो-तीन बोलते ही सबको सीमा रेखा तक जाकर फिर पीछे लौट आना है। दौड़ते हुए यदि शृंखला टूट गई तो वह समूह पराजित हो जायेगा। जो समूह सबसे पहले लौटेगा वह विजयी घोषित होगा। मैदान यदि छोटा हो तो तीन-चार फेरियाँ करवाइये।

१६. गुब्बारा प्रतियोगिता-आठ या दस बालकों की अलग-अलग पंक्तियाँ बनाइये। कम से कम दो पंक्तियाँ हों। आखिर के लड़के के हाथ में एक फूला हुआ गुब्बारा दीजिए। अन्तिम लड़का अपने हाथ का गुब्बारा आगे खड़े लड़के के पैरों के बीच से उसे देगा। इसी प्रकार हर लड़के को दोनों पैरों के बीच से गुब्बारा सबसे पहले बालक तक पहुँचाना है। पहले बालक के पास गुब्बारा आते ही उसे दौड़कर सीमा रेखा को छूकर पंक्ति के अन्त में खड़े होना है। फिर वही क्रिया, पैरों के बीच से गुब्बारा देना शुरू करनी है। पंक्ति के प्रत्येक बालक को सीमा रेखा छूकर इसी क्रम में पीछे आना है। जिस समूह के बालक सबसे पहले यह दौड़ पूर्ण करेंगे वे विजयी घोषित होंगे। इस बीच गुब्बारा फट जायेगा तो वह समूह पराजित समझा जायेगा।

१७. गुब्बारा दौड़-दस-पंद्रह बालकों के दो समूह बनाइये। इसमें एक समूह के पास दस गुब्बारे दीजिए। अब इस समूह को इन गुब्बारों को उड़ाते हुए सीमा रेखा तक ले जाना है। दूसरे समूह को, एक भी गुब्बारा सीमा रेखा तक न जा पाये, इसलिये गुब्बारे फोड़ना है। दोनों समूहों को गुब्बारे उड़ाने का अवसर दीजिए। जो समूह अधिक गुब्बारे सीमा रेखा तक ले जाने में सफल होगा वह विजयी होगा।

१८. टपाल स्टेशन-सभी बालकों को एकत्रित करके गोला बनाएँ। हर बालक को एक-एक गँव का नाम लेने के लिए कहें। (उदा.-दिल्ली, मद्रास, कलकत्ता, कानपुर इत्यादि, ध्यान में रखने हेतु प्रशिक्षक यदि सभी नाम लिखकर रखता है तो कोई आपत्ति नहीं है।) जिस बालक की बारी है, उसे बीच में बुलाकर उसके हाथ में कागज, रूमाल या कोई भी अन्य वस्तु देकर यह वस्तु पत्र है, ऐसा कहिए। इस बालक को किसी भी गाँव का नाम कहकर वहाँ पत्र पहुँचाने को कहिए। यदि बालक ने उक्त गाँव वाले बालक के पास पत्र पहुँचाया तो उसके लिए तालियाँ बजाएँ एवम् जिस बालक के पास पत्र पहुँचा है उसे अगले गाँव का नाम देकर पत्र पहुँचाने को कहें। यदि पत्र गलत बालक के पास पहुँचा होगा तो उसे दो बार और

अवसर दिया जाये और यदि फिर भी गलती हुई हो तो वह बालक खेल से बाहर हो जायेगा। गाँव का नाम कहने से पूर्व सभी यदि नीचे की पंक्ति एक साथ गाते हैं तो खेल में और भी आनन्द आयेगा।

बालक- डाकिया भाई, डाकिया भाई पत्र हमारा लो, हमारे मामा के गाँव बिना भूले दो।

शिक्षक-मामा हमारे रहते हैं................गाँव।

१९. शब्द ढूँढ़ो-सभी बालक गोलाकार बैठें। एक बालक दूर भेजा जाएगा। गोले में बालकों के द्वारा एक शब्द निश्चित किया जायेगा। दूर गया हुआ बालक लौटकर मण्डल के केन्द्र पर खड़ा रहेगा। संकेत मिलने पर (बजने पर) वह शब्द सभी को जारे से और तेजी से बोलना होगा। केन्द्र पर खड़े हुए बालक को वह शब्द कौन सा है यह बताना है। यदि उसे तीन प्रयत्नों में असफलता मिली तो उसे कुछ सामान्य दण्ड दें और दूसरे बालक से खेल प्रारंभ करें।

२०. रूमाल ले भागना-सारे बालक गोलाकार बैठें। गोले के केन्द्र में एक रूमाल इस प्रकार रखा जाय कि उसका बीच का भाग ऊपर उठा हुआ हो। सभी बालक पैर के पंजों पर (उकड़ूँ) बैठेंगे और दाहिने हाथ से बायाँ टखना और बायें हाथ से दाहिना टखना पकड़ेंगे। सीटी बजते ही (या आदेश होते ही) सभी बालक ऊपर बतायी स्थिति में उछलते, कूदते, हुए रूमाल मुँह से उठाने के लिये आगे बढ़ेंगे। रूमाल मुँह से उठाने वाला उसी स्थिति में गोले के बाहर आने लगे तब अन्य बालक इस रूमाल लेजाने वाले बालक को, अपनी उकड़ूँ स्थिति न छोड़ते हुए, धक्के मारकर गिराने का प्रयास करें। यदि यह बालक गिर जाता है तो वह बाहर हो जाता है। अन्य बालक भी जिनकी अपनी स्थिति टूट जाती है, अर्थात् हाथ छूट जाते हैं या एड़ियाँ टिक जाती हैं, वे भी बाहर हो जाते हैं। बचे हुए बालक पुनः खेल प्रारंभ करते हैं। स्थिति बनाये रखकर मुँह से रूमाल उठाकर गोले के बाहर आनेवाला बालक विजयी होता है।

२१. घोड़ा-सवारी-बालकों को दो समान संख्या के दलों में बाँटें। एक दल के एक बालक से किसी लकड़ी के खम्भे को (या किसी बालक की कमर को) हाथों से पकड़कर खड़े होने को कहा जाता है। दल के अन्य बालक एक दूसरे के पीछे, अगले साथी की कमर को बांहों से पक्का पकड़ते हैं। इस प्रकार एक श्रृंखला सी बन जाती है। इन बालकों को यह सावधानी रखनी चाहिए कि प्रत्येक को अपना सिर नीचे रखना है। अब दूसरे दल के बालक कुछ दूरी से, एक के बाद एक दौड़कर आते हैं। आगे झुककर खड़े बालकों की पीठ पर उछलकर सवार हो जाते हैं। सवार हुए बालकों के पैर भूमि से नहीं लगने चाहिए, अन्यथा उनका दल

बाहर हो जायेगा। घोड़ी बने हुए दल का सबसे पहला (पिछला) बालक अन्य की तुलना में हट्टा-कट्टा होना उचित होगा। जिस दल के अधिक बालक बिना गिरे सवार हो सकेंगे वह दल विजयी होगा। दुर्बल बालकों को इस खेल में न रखें।

२२. आओ, खेलें खेल- घेरे में एक जगह खाली छोड़ दो। दो बच्चों को घेरे के बाहर इस प्रकार खड़ा करो कि इनके मुँह विपरीत दिशा में हों। सीटी बजते ही दोनों खिलाड़ी जिस दिशा में उनका मुँह होगा, उधर दौड़ेंगे और जो स्थान खाली है, जहाँ पर वे खड़े थे, उसे पूरा करेंगे। वे आपस में जहाँ मिलें एक फुट के फासले पर खड़े होंगे। बायाँ हाथ मिलाएँगे तथा मुस्कुराएँगे। उसके बाद वे दौड़कर खाली स्थान को पूरा करेंगे। उनमें से एक बाहर बचेगा, जो फिर से दौड़ेगा किसी की पीठ पर हाथ लगायेगा। फिर मिलने पर, बायाँ हाथ मिलाएँगे और मुस्कराने की क्रियाओं को दुहराएँगे। इस प्रकार खेल चलता रहेगा। सभी का नम्बर जब तक न आ जाये तब तक यह क्रम चलेगा।

नोटः-१. दुबारा किसी को छूने की भूल न की जाय।

२. कभी-कभी ऐसा हिस्सा बच जाता है जहाँ से बारी नहीं आती। उधर के ही दोनों खिलाड़ियों को भी चुना जा सकता है और खेल खेला जा सकता है।

२३. काश्मीर किसका है- यह खेल बड़े और हट्टे-कट्टे बालकों के लिये है। एक गोला बनाकर सभी बालकों को उस पर खड़ा किया जाता है। किसी एक बालक को केन्द्र में खड़ा करके उसके चारों ओर लगभग १ मीटर त्रिज्या का गोल बनाया जाता है। अब यह बालक ऊँचे स्वर में पूछता है "काश्मीर किसका है?" शेष बालक उसी प्रकार ऊँचे स्वर में एक साथ कहते हैं "हमारा है" इस प्रकार तीन बार प्रश्न उत्तर होने पर सारे बालक दौड़कर बीच में खड़े बालक की ओर जाकर, उसे गोले से बाहर धकेलते हुए स्वयं गोले में खड़े होने का प्रयास करते हैं। सीटी बजते ही यह संघर्ष रूकता है और उस समय बीच में बने गोले में खड़े बालक को विजयी घोषित किया जाता है। अब यह विजयी बालक बीच के गोले में खड़ा होता है और सारा खेल उसी प्रकार पुनः खेला जाता है। धक्का मुक्की में कपड़ों को खींचना या फाड़ना नहीं है, यह पहले ही समझा दें।

२४. कुक्कुट युद्ध-सभी बालकों को समान संख्या में बाँटकर दो गण बनाएँ। बालकों को क्रमांक दें। क्रमांक पुकारते ही दोनों गणों के एक-एक बालक को कुक्कुट की स्थिति लेने को बताया जाता है। स्थिति इस प्रकार ली जाती है-बायीं

टाँग मोड़कर पीछे की ओर बायें हाथ से पकड़ी जाती है और दाहिने हाथ से पीछे से बायाँ हाथ पकड़ते हैं। यह कुक्कुट स्थिति है। अब इस स्थिति में बायीं टाँग से फुदकते हुए, दोनों बालक एक दूसरे को कन्धे से धक्के मारकर खदेड़ने का प्रयास करते हैं। जो बालक गिर जाता है, या जिसका पैर या हाथ छूट जाता है। वह बाहर हो जाता है।

२५. झूल झूल झण्डा झूल-इस खेल में बालकों को गोले में (गोलाकार) दौड़ने को कहा जाता है। शिक्षक कुछ नारे (घोषणा) लगाते हैं जैसे:-

१. झूल झूल-झण्डा झूल। २. संगठन में शक्ति है।
३. शक्ति को-बढ़ाना है। ४. जय भवानी- जय शिवाजी।

(नारों का पहला भाग शिक्षक कहेगा, और दूसरा भाग ऊँचे स्वर में बालक पूरा करेंगे।) नारे लगाते समय बालक भागते रहेंगे। तत्पश्चात शिक्षक एकाएक १,२,३,४ में से किसी एक अंक (जैसे दो)कहेगा। यह सुनते ही बालक उस अंक के अनुसार आपस में गुट बनायेंगे। उदा. 'दो' कहने पर बालक दो-दो के गुट बनायेंगे जिस बालक या बालकों को किसी गुट में स्थान नहीं मिलता, वे 'बाहर' हो जाते हैं।

२६. साँप-केंचुली-बराबर संख्या में बालकों को २ या ३ गणों में बाँटते हैं। सभी गण सामने मुँह करके इस प्रकार खड़े होते हैं कि प्रत्येक गण का बालक आगे झुककर अपना दाहिना हाथ दोनों पैरों के बीच से पीछे की ओर निकालता है, जिसे पीछे वाला बालक अपने बायें हाथ से पकड़ता है। इस प्रकार सभी बालक करते हैं। गण का सबसे अगला बालक केवल दाहिना हाथ और सबसे पीछे वाला बालक केवल बायाँ हाथ काम में लाते हैं। इस प्रकार सभी गण सिद्ध होने पर सीटी बजते ही, प्रत्येक गण का सबसे पीछेवाला बालक नीचे भूमि पर पैरों को मिलाये रखकर और बिना हाथ छोड़े लेटता है और अन्य बालक पीछे हटते हुए, अपनी बारी आने पर भूमि पर लेटते हैं। पकड़े हुए हाथ छूटने न पायें, इसका ध्यान रखा जाता है। जो गण बिना हाथ छोड़े, (अर्थात् बिना शृंखला तोड़े)भूमि पर पहले लेटता है, वह विजयी होता है। खेल में, फिर से उठकर प्रारम्भिक स्थिति में आने को भी गणों को कहा जा सकता है।

२७. नौका युद्ध-बालकों को दो समान संख्या के गणों में बाँटकर उन्हें विपरीत दिशा में मुँह करके खड़ा किया जाता है। तत्पश्चात् प्रत्येक गण के बालक आपस में, एक दूसरे के हाथ में हाथ (बाँहों में बाँहें) डालकर और हाथों को अपनी छाती के आगे पक्का पकड़ेंगे। इस प्रकार प्रत्येक गण की एक पक्की शृंखला रूपी

नौका बन जायेगी। सीटी बजते ही प्रत्येक गण की नाव दूसरे गण की नाव को, नारे लगाते हुए, पीठ से धक्के मारकर तोड़ने का प्रयास करेगी। जिस गण की श्रृंखला (नाव) टूट जायेगी, वह गण पराजित हो जायेगा।

२८. अग्निकुण्ड-सभी बालक हाथ पकड़कर बीच में बने गोले के चारों ओर खड़े होंगे। बीच में बना गोला अग्निकुण्ड होगा। सीटी बजते ही सारे बालक बिना हाथ छोड़े एक-दूसरे को अग्निकुण्ड में धकेलने का प्रयास करेंगे। जिन बालकों के दोनों पैर अग्निकुण्ड में चले जायेंगे, वे बाहर हो जायेंगे। इसी प्रकार जिन दो बालकों के हाथ छूट जायेंगे, वे भी बाहर हों जायेंगे।

२९. भेड़िया-बकरी-सभी बालक, दो को छोड़कर हाथ पकड़ कर एक पक्का गोला बनाएँगे। एक बालक गोले के अन्दर और दूसरा बालक बाहर होगा। अन्दर वाला बालक बकरी और बाहर वाला बालक भेड़िया होगा। भेड़िया बकरी को खाने के लिये गोले में घुसने का प्रयास करेगा। गोले पर खड़े बालक बकरी को अन्दर आने या बाहर जाने में कोई बाधा नहीं डालेंगे। परन्तु भेड़िये को अन्दर जाने या बाहर निकलने में कड़ी बाधा डालेंगे। भेड़िये द्वारा बकरी पकड़े जाने पर, ये दोनों बालक आपस में अपना रूप बदलेंगे और खेल शुरू रहेगा। भेड़िया-बकरी की एक जोड़ी के स्थान पर दो जोड़ियाँ बनाकर भी खेल खेला जा सकता है।

३०.घुटने पर रूमाल बांधना-दो बालक आमने सामने खड़े कियें जाते हैं। दोनों बालकों के हाथ में एक रूमाल होगा और प्रत्येक बालक दूसरे के घुटने पर रूमाल बांधने का प्रयास करेगा, जबकि दूसरा उसे बाँधने नहीं देगा। दोनों के प्रयास में जो दूसरे के घुटने में रूमाल बाँधने में सफल होगा वह विजयी होगा। रूमाल बाँधने में एक गाँठ तो कम से कम होनी ही चाहिए।

३१. भूत की गली-बालकों को दो गणों में बाँटकर, प्रत्येक गण को दूसरे गण के सम्मुख आमने-सामने मुख करके दो पंक्तियों में लगभग १ मीटर की दूरी पर खड़ा किया जाता है। इस प्रकार ये दो पंक्तियाँ भूत की गली बनाती हैं। अब एक-एक करके बालक निर्धारित दूरी से और दिशा से दौड़ता हुआ आता है और इन दो पंक्तियों के बालक उसकी पीठ पर मुक्के या थप्पड़ लगाते हैं। मुक्के या थप्पड़ केवल पीठ पर ही लगाये जायें इस बात की सावधानी रखनी है। इसी प्रकार उसके मार्ग में कोई और रूकावट नहीं लानी है और न बालकों को अपना स्थान छोड़ना है। सभी बालक एक के बाद एक इस प्रकार दौड़ते हुए आ कर गली पर करते हैं। गली पार होने पर फिर से वे अपने स्थान पर गली में खड़े हो जायेंगे।

३२. स्थान दोगे ?- सारे बालक गोलाकार में खड़े होंगे। एक बालक "क्ष" गोले में बालकों के आगे से जाते हुए "स्थान दोगे ?" कहेगा। बालक "क्षमस्व" कहेंगे। इस प्रकार जब यह बालक "क्ष" पूछता हुआ घूम रहा हो तब गोले में कोई भी दो बालक संकेत कर के आपस में स्थान बदलने का प्रयास करेंगे। संकेत घूम रहे बालक के ध्यान में न आएँ यह देखा जाय। स्थान बदलते समय यदि "क्ष" ने उनमें से एक स्थान ले लिया, तो स्थान खोने वाला बालक "क्ष" जैसे ही, "स्थान दोगे ?" कहकर घूमता जायेगा। इस प्रकार खेल चलता रहेगा।

३३. डाक आई- एक गोल घेरा खींचें और सब को उसमें बिठा दें। गेंद घेरे में बैठे किसी एक खिलाड़ी को दे दें। लम्बी सीटी बजते ही गेंद दायीं ओर से एक से दूसरे के पास होती हुई आगे बढ़ेगी। प्रशिक्षक कभी भी सीटी बजाये तो जिसके हाथ में गेंद होगी वह खड़ा होकर कुछ सुनाएगा। यदि कोई बालक हिचक महसूस करे तो उसे निम्नलिखित करने को या सुनाने को कहा जा सकता है। जैसे- हँस कर दिखना, गाना गाओ, चुटकुला सुनाओ, पहाड़ा सुनाओ, बकरी की बोली बोलो, रेल चलने की आवाज करो, कई तरह की छींकें निकालो, लंगड़ी टाँग से सब की परिक्रमा करो, हकलाकर अपना नाम बोलो, किसी की नकल उतारो आदि। यह खेल इसी प्रकार चाहे जितनी देर चलाएँ।

नोटः-१. सीटी के स्थान पर चम्मच थाली से आवाज की जा सकती है। गाना भी गा सकते हैं।

३४. पक्षी और पेड़-एक खिलाड़ी घेरे में खड़े हुए खिलाड़ियों में से किसी एक खिलाड़ी से पूछेगा "तुम्हारा क्या नाम है ? तुम कहाँ रहते हो/रहती हो ?" इसके उत्तर में वह अपने नाम व रहने के स्थान का पहला अक्षर बतायेगा। 'प्रश्न पूछने वाला खिलाड़ी' उसका उत्तर देगा। यदि वह सही उत्तर न दे पाया तो लंगड़ी चाल से सारे घेरे का चक्कर लगाकर घेरे पर खड़े किसी खिलाड़ी की कमर पर हाथ लगायेगा। अब वह खिलाड़ी घेरे के बीच में जाकर खड़ा होगा। वह किसी दूसरे खिलाड़ी से वही प्रश्न पूछेगा। जैसे-तुम्हारा क्या नाम है ? तुम कहाँ रहते हो ? उसके उत्तर में वह खिलाड़ी उत्तर देगा/ देगी। मेरा नाम 'को' है मैं 'आ' पर रहती हूँ। यदि प्रश्न पूछने वाला खिलाड़ी इसका उत्तर "कोयल आम के पेड़ पर रहती है।" दे देता है तो वह और किसी से प्रश्न करेगा।

नोटः- तोता, गौरेया, चिड़िया, कौआ, चील, बाज, मोर, मैना, कबूतर, कठफोड़वा आदि के रहने के स्थानों का पता करें व उनके सम्बन्ध में प्रश्न पूछे जायें।

सातवाँ अध्याय

योग व्यायाम - प्राणायाम

योग-व्यायाम आवश्यकता एवं उपयोगिता

वर्तमान समय में मनुष्य का स्वास्थ्य गिरता जा रहा है। हर व्यक्ति शारीरिक और मानसिक रोगों से पीड़ित है उसकी अधिकांश कमाई दवाओं पर ही खर्च होती है। शरीर को कष्ट उठाना पड़ता है, लेकिन रोगों से छुटकारा नहीं मिल पा रहा है। कहावत भी है-

"प्रथम सुख- नीरोगी काया"

"दवा दबायें रोग को, करें नहीं निर्मूल ।
चतुर चिकित्सक ठग रहे, क्यों करते हो भूल॥"

स्वस्थ रहने के लिए आहार-विहार का संयम और नियमित दिनचर्या का क्रम जितना आवश्यक है, उतना ही यह भी आवश्यक है कि शरीर के सभी अंग सक्रिय और जीवन्त रहें। इसलिए स्वास्थ्य विज्ञान में व्यायाम, भोजन, शयन और नियम-संयम का महत्त्व एक मत से स्वीकार किया गया है। चलती रहने वाली मशीन में कितनी ही सतर्कता बरती जाय तो भी उसमें कुछ मैला कूड़ा आ ही जाता है, यही स्थिति शरीर की है। उसकी जीवन प्रक्रिया में भी शरीर के विभिन्न अंगों में विकार अनायास ही उत्पन्न होते रहते हैं। जैसे- किसी मकान में गर्द-बुहार। घर को साफ-सुथरा बनाये रखने के लिए जितना आवश्यक है उसे रोज साफ करते रहना। उतना ही आवश्यक यह भी है कि शरीर मंदिर की भी सफाई की जाती रहे और यह सफाई योग व्यायाम द्वारा होती है। शारीरिक दृष्टि से चुस्त-दुरुस्त (फिजिकली फिट) बालक ही अपनी पढ़ाई एवं सामाजिक कार्यों का निर्वाह ठीक से कर सकते हैं।

योग व्यायाम प्रारंभ करने के पहले शरीर की मांसपेशियों की जकड़न दूर करके, उन्हें गर्म कर लेने वाले व्यायाम (वार्म अप एक्सरसाइज) करा लेना अच्छा रहता है। उसके कुछ क्रम नीचे दिये जा रहे हैं।

अंग मर्दन (रबिंग) :- योग व्यायाम करने से पूर्व रात्रि की शिथिलता एवं जकड़न तथा सुस्ती को दूर करने हेतु पहले गतियोग तथा रबिंग के माध्यम से मांस-पेशियों को सक्रिय करते हैं।

गतियोग क्रमांक- (१) अपने स्थान पर ही धीरे-धीरे दौड़ लगाना।

(२) अपने पंजों पर ही उछलना।

(३) अपने पैरों को कूद कर दोनों हाथों को कंधों की सीध में फैलाना तथा दो पर नीचे हाथों का लाना तथा सावधान होना।

(४) उछलकर पैर खोलना तथा दोनों हाथों को कंधों की ओर ऊपर ले जाकर ताली बजाना, दो पर नीचे लाना तथा सावधान हो जाना।

(५) नं. १ पर उछलकर पैर खोलना तथा हाथों को कंधों की सीध में ले जाना, दो पर नीचे लाना, तीन पर हाथों को ऊपर ले जाना तथा चार पर हाथ नीचे करना।

नोटः- यह गतियोग १६ क्रमांकों में किया जाए अंत में गतियोग के बाद हाथों को रगड़कर माथा, सिर, गर्दन, गला तथा चेहरे की मालिश की जाये। बाद में हाथों तथा पैरों को भी हाथों से रगड़ा जाए। दोनों हाथों को रगड़कर आँखों का सेंक तथा चेहरे की मालिश करना चाहिये।

पवन मुक्तासनः- शरीर के विभिन्न अंगों काः- योग व्यायाम का मुख्य उद्देश्य शरीरगत वात, पित्त, कफ को संतुलित करना तथा अंदर भरी हुई दूषित वायु से शरीर को मुक्त करना व प्रत्येक अंग-अवयव को सक्रिय बनाना है।

करने की विधिः- जमीन या तख्त पर कम्बल या दरी बिछाकर दोनों पैर सामने फैलाकर बैठें। एड़ी व अंगूठे मिले रहे। दोनों हाथ पीछे रखकर शरीर को सीधा रखकर टिकाये रहें।

क्रमांक (१) पैरों की अंगुलियों का व्यायामः-

विधिः- दोनों पैरों की अंगुलियों को नीचे की ओर दबायें। कुछ क्षण इसी अवस्था में रखकर ढीला कर दें। पुनः यही क्रिया करें। यथा स्थिति ४ से ६ बार करें।

क्रमांक (२) पंजों का व्यायाम :-

विधि :- पैर के दोनों तलुओं को जमीन से लगाने का प्रयास करें, एड़ी व घुटना जमीन से न उठे। पूरा झुककर पुनः विपरीत दिशा (पेट की ओर) लायें। इस प्रकार पैरों को ३-४ बार आगे-पीछे और फिर दाएँ-बाएँ झुकाएँ।

क्रमांक (३) एड़ी व अंगूठे का व्यायाम :-

विधिः- एड़ी व अंगूठे मिली हुई स्थिति में दायें से बायें व बायें से दायें दोनों पंजों को तीन से पाँच बार गोल घुमायें।

क्रमांक (४) दोनों एड़ियों का व्यायाम :-

विधिः- दोनों एड़ियों के बीच छः से आठ इंच का फासला करें। दोनों पंजों को विपरीत दिशा में गोल घुमायें। यह क्रिया भी दायें से बायें व बायें से दायें तीन से पाँच बार घुमायें।

क्रमांक (५) घुटनों का व्यायाम :-

विधि :- दाहिने पैर को सीधे इतना उठायें कि एड़ी बायें पैर के अगूंठे की ऊँचाई तक पहुँचे। एक क्षण यहीं रोके। पुनः पैर घुटने से मोड़कर एड़ी नितम्ब से लगायें। यहाँ भी एक क्षण रोकें। पुनः पैर को सीधा करें तथा पूर्व स्थिति में एक क्षण रोक कर एड़ी जमीन पर रखें। दूसरे पैर से भी यही क्रिया करें। दोनों अवस्थाओं में दूसरा पैर सीधा रखें। यह क्रिया भी तीन से पाँच बार करें।

क्रमांक (६) कमर का व्यायाम :-

विधिः- त्रिकोणासन की भाँति दोनों पैरों के बीच फासला करके दोनों हाथों को कंधे की सीध में फैलायें। आगे झुकते हुए दाहिने हाथ से बायें पैर के अगूंठे तथा बायें हाथ से दायें पैर के अगूंठे को छुएँ, दूसरा हाथ विपरीत दिशा में सीधा रखें।

क्रमांक (७) हाथ की अंगुलियों का व्यायाम :-

विधिः- वज्रासन या सुखासन में बैठें। दोनों हाथ को कंधे की सीध में आगे फैलाकर अंगुलियों को ताकत से फैलायें, मुट्ठी बंद करें । यह क्रिया ४-६ बार करें।

क्रमांक (८) कलाई का व्यायाम :-

विधिः- अँगूठा अंदर करके दोनों हाथ की मुट्ठी बंद करें तथा दायें से बायें व बायें से दायें गोल घुमायें। पुनः अंगुलियाँ सीधी करके हथेली को नीचे-ऊपर व दायें-बायें समकोण पर मोड़ें। हाथ पूर्ववत् सीधे रहेंगे।

क्रमांक (९) कोहनी का व्यायाम :-

विधिः- दोनों हाथ इस प्रकार सामने फैलायें कि हथेली ऊपर को रहे। अब कोहनी से हाथों को अपनी ओर मोड़कर अंगुलियों के अग्रभाग को कंधों पर रखें। पुनः दोनों हाथ सीधा करें व मोड़ें। यह क्रिया भी ४-६ बार करें, इसके बाद दोनों हाथ दायें-बायें, सीधे फैलायें और पूर्ववत् कोहनी से मोड़कर अंगुलियाँ कंधे से

लगायें। पुनः दोनों हाथों को ऊपर उठायें। हथेली आमने-सामने रहे और पूर्ववत् अंगुलियाँ कंधों से मिलायें।

क्रमांक (१०) कंधों का व्यायाम :-

विधिः- वज्रासन या सुखासन में ही बैठे हुए दोनों हाथों को दाहिनी व बायीं ओर से कोहनी से मोड़कर अंगुलियों को दोनों कंधों पर रखें। कमर सीधी, गर्दन सामान्य व दृष्टि सामने रहे। अब दाहिनी कोहनी को जितना ले जा सकते हैं आगे की ओर ले जायें। बायीं कोहनी उतनी ही विपरीत दिशा अर्थात् पीछे जायेगी। दृष्टि सामने व अंगुलियाँ कंधों पर ही रहेंगी। पुनः बायीं कोहनी आगे व दाहिनी कोहनी पीछे ले जायें। यह क्रिया ४-५ बार करें।

पुनः हाथों को सामान्य स्थिति में लाकर कोहनियों को आगे से पीछे व पीछे से आगे चक्राकार गोल घुमायें। गर्दन सीधी व दृष्टि सामने ही रहे, तत्पश्चात् दोनों हाथों को साइकिल के पायडल की तरह (जब दाईं कोहनी बाहर जाये तब बायीं पीछे, जब बायीं पीछे तब दायीं आगे) चक्राकार गोल घुमायें। यह क्रिया भी ४-५ बार करें। इतनी ही बार इसके विपरीत करें।

क्रमांक (११) छाती का व्यायाम :-

विधिः- गहरी श्वास लें एवं छोड़ें। इस क्रिया को 3-5 बार तक करें।

5 मिनट प्राणायाम भी कर सकते हैं।

क्रमांक (१२) गर्दन का व्यायाम :-

विधिः- पूर्व स्थिति में बैठे हुए सिर को नीचे झुकायें कि ठोड़ी कंठ कूप से लगे, पुनः विपरीत अर्थात् पीछे ले जायें। ४-५ बार यह क्रिया करें। पुनः गर्दन दायें व बायें घुमाएँ, पश्चात् दायें-बायें व बायें से दायें चक्राकार गोल घुमायें। इन सभी क्रियाओं में आँख बंद रखें। समाप्ति पर कुछ क्षण विश्राम करके पलकों का सेंक करते हुए आँखें खोलें।

क्रमांक (१३) जबड़े का व्यायाम :-

विधिः- मुँह को जितना फैला सकते हैं, फैलाएँ। कुछ क्षण रुक कर बंद कर लें, ऐसा २-४ बार करें। पुनः जबड़े को दायें-बायें एवं दायें से बायें गोल घुमाएँ।

क्रमांक (१४) दाँतों का व्यायाम :-

विधिः-प्रथम आगे के दाँतों व पश्चात् पीछे के दाँतों (दाढ़ों) को दबाएँ व ठीक करें। यह क्रिया ४-६ बार करें। नकली दाँत लगे हों तो न करें।

क्रमांक (१५) नेत्रों का व्यायाम :-

विधि:- इसको तीन प्रकार से करते हैं। प्रथम दृष्टि सामने किसी बिन्दु या वस्तु पर टिकाएँ। यथासंभव पलक न झपकते हुए एकटक देखें व आँखें बंद कर लें। २-४ बार करें। द्वितीय गर्दन सीधी रखते हुए अपने दायें व बायें जितना देख सकते हैं देखें। तृतीय पुतलियों को दायें से बायें व बायें से दायें चक्राकार गोल घुमाएँ। गर्दन सीधी रखें। पश्चात् नेत्र बंद करके कुछ क्षण विश्राम दें व पलकों को सेंक करें। जिनकी नकली आँख लगी हो तो न करें।

क्रमांक (१६) जीभ का व्यायाम :-

विधि:- वज्रासन या सुखासन में बैठकर जीभ को अधिकतम बाहर निकाल दें। कुछ क्षण रुककर सामान्य हों तथा पुनः करें।

क्रमांक (१७) गालों का व्यायाम :-

विधि:- गालों को जितना फुला सकते हैं, फुलाएँ।

क्रमांक (१८) कानों का व्यायाम :-

विधि:- कानों को चार भागों-नीचे, ऊपर, अगले व पिछले को एक-एक हाथ से पकड़कर क्रमशः नीचे को नीचे, ऊपर को ऊपर, पीछे को पीछे तथा आगे को आगे खींचे। ताकत न बहुत अधिक लगाएँ न कम। भीतर तक खिंचाव अनुभव हो यह प्रयास करें। बाद में दोनों हथेलियों से दोनों सम्पूर्ण कानों की मालिश करें।

क्रमांक (१९) ललाट का व्यायाम :-

विधि:- दोनों हाथों की अंगुलियों को मस्तक के मध्य रखकर कानों की ओर सहलाना। अंगूठे से कनपटी व अंगुलियों से तालू को दबाना। अंगूठों से कान के ऊपर के भाग को आगे से पीछे मालिश करना। गर्दन की मालिश करना।

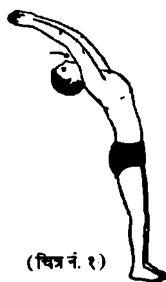
क्रमांक (२०) पेट का व्यायाम (उपनौली) :-

विधि:- सीधे खड़े होकर दोनों पैरों में लगभग ८-१० इंच का फासला करें। नासिका के दोनों छिद्रों से श्वास अंदर भरें व नीचे झुकते हुए मुँह से पूरी श्वांस बाहर निकाल दें तथा बाहर ही रोक दें (बाह्य कुंभक), अब दोनों पैरों को घुटनों से आगे झुकाकर हथेलियों को घुटनों पर टिकाकर कुर्सी आसन की भाँति स्थिर हो जाएँ। इस अवस्था में पेट को अंदर खीचे व छोड़ें। सुविधा से जितनी बार पूर्व की भांति नीचे झुकते हुए मुँह से निकालें तथा घुटने झुकाकर पेट को खीचें व छोड़ें। यथा स्थिति ४-६ बार करें।

प्रज्ञायोग

प्रज्ञायोग व्यायाम की इस पद्धति में आसनों, उप-आसनों, मुद्राओं तथा शरीर संचालन की लोम-विलोम क्रियाओं का सुन्दर समन्वय है। इसमें सभी प्रमुख अंगों का व्यायाम संतुलित रूप से होता है। फलतः अंगों की जकड़न, दुर्बलता दूर होकर उनमें लोच और शक्ति का संचार होता है। निर्धारित क्रम व्यवस्था (टेबिल) विभिन्न परिस्थितियों में रहने वाले नर-नारियों के लिए भी बहुत उपयोगी है। व्यायाम शृंखला की हर मुद्रा के साथ गायत्री मंत्र के अक्षरों-व्याहृतियों को जोड़ देने से शरीर के व्यायाम के साथ मन की एकाग्रता और भावनात्मक पवित्रता का भी अभ्यास साथ ही साथ होता रहता है।

क्र. १) ॐ भूः -(ताड़ासन) विधिः- धीरे-धीरे श्वास खींचना प्रारंभ करें। दाहिने हाथ को दाहिनी तरफ, बायें को बायीं तरफ ले जाते हुए दोनों पैर के पंजों के बल खड़े होते हुए शरीर को ऊपर की ओर खींचे। दृष्टि आकाश की ओर रखें। यह चारों क्रियाएँ एक साथ होनी चाहिए। यह समूचा व्यायाम ताड़ासन (चित्र नं-१) की तरह सम्पन्न होगा। सहज रूप से जितनी देर में यह क्रिया संभव हो, कर लेने के बाद अगली क्रिया (नं-२) की जाए।



(चित्र नं. १)

लाभः- हृदय की दुर्बलता, रक्तदोष और कोष्ठबद्धता दूर होती हैं। यह मेरुदण्ड के सही विकास में सहायता करता है और जिन बिन्दुओं से स्नायु निकलते हैं, उनके अवरोधों को दूर करता है।

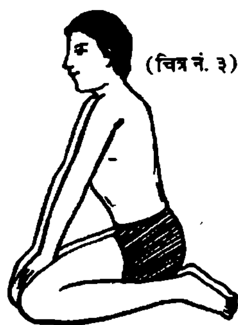


क्र. २) ॐ भुवः-(पाद हस्तासन) विधिः- श्वास छोड़ते हुए सामने की ओर (कमर से ऊपर का भाग, गर्दन, हाथ साथ-साथ) झुकना। हाथों को 'हस्तपादासन' चित्र नं. २ की तरह सामने की ओर ले जाते हुए दोनों हाथों से दोनों पैरों के समीप भूमि स्पर्श करें , सिर को पैर के घुटनों से स्पर्श करें। इसे सामान्य रूप से जितना कर सकें उतना ही करें। क्रमशः अभ्यास से सही स्थिति बनने लगती है।

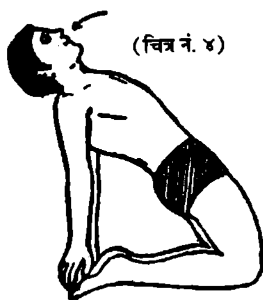
लाभः- इससे वायु दोष दूर होते हैं। इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना को

बल मिलता है। पेट व आमाशय के दोषों को रोकता तथा नष्ट करता है। आमाशय प्रदेश की अतिरिक्त चर्बी भी कम करता है। कब्ज को हटाता है। रीढ़ को लचीला बनाता एवं रक्त संचार में तेजी लाता है।

क्र. ३) ॐ स्वः (वज्रासन) विधिः- हस्तपादासन की स्थिति में सीधे जुड़े हुए पैरों को घुटनों से मोड़ें, दोनों पंजे पीछे की ओर ले जाकर उन पर वज्रासन (चित्र नं-३) की तरह बैठ जायें। दोनों हाथ दोनों घुटनों पर, कमर से मेरुदण्ड तक शरीर सीधा, श्वास सामान्य। यह एक प्रकार से व्यायाम से पूर्व की आरामदेह या विश्राम की अवस्था है।


(चित्र नं. ३)

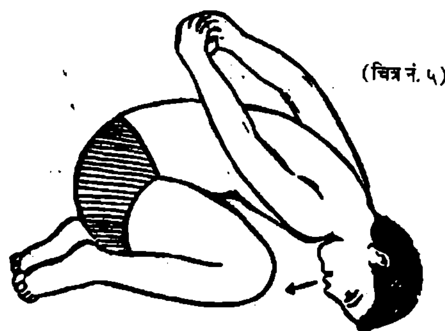
लाभः- भोजन पचाने में सहायक, वायु दोष, कब्ज, पेट का भारीपन दूर करता है। यह आमाशय और गर्भाशय की मांसपेशियों को शक्ति प्रदान करता है, अतः हार्निया से बचाव करता है। गर्भाशय, आमाशय आदि में रक्त व स्नायविक प्रभाव को बदल देता है।


(चित्र नं. ४)

क्र. ४) तत् (उष्ट्रासन) विधिः- घुटनों पर रखे दोनों हाथ पीछे की तरफ ले जायें। हाथ के पंजे पैरों की एड़ियों पर रखें। अब धीरे-धीरे श्वास खींचते हुए 'उष्ट्रासन' (चित्र नं-४) की तरह सीने को फुलाते हुए आगे की ओर खींचे। दृष्टि आकाश की ओर हो। इससे पेट, पेडू, गर्दन, भुजाओं सबका व्यायाम एक साथ हो जाता है।

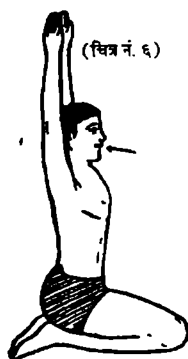
लाभः- हृदय बलवान्, मेरुदण्ड तथा इड़ा, पिंगला, सुषुम्ना को बल मिलता है। पाचन, मल निष्कासन और प्रजनन-प्रणालियों के लिए लाभप्रद है। यह पीठ के दर्द व अर्द्ध-वृत्ताकार (झुकी हुई पीठ) को ठीक करता है।

क्र. ५) सवितुः (योग मुद्रा) विधि- अब श्वास छोड़ते हुए पहले की तरह पंजों पर बैठने की स्थिति में आयें, साथ ही दोनों हाथ पीछे पीठ की ओर ले जायें व दोनों हाथ की अंगुलियाँ आपस में फैलाकर धीरे-धीरे दोनों हाथ


(चित्र नं. ५)

ऊपर की ओर खींचे और मस्तक भूमि से स्पर्श कराने का प्रयास 'योगमुद्रा' (चित्र नं.५) की तरह करें।

लाभः- वायुदोष दूर करता है। पाचन संस्थान को तीव्र तथा जठराग्नि को तेज करता है। कोष्ठबद्धता को दूर करता है। यह आसन मणिपूरक चक्र को जाग्रत् करता है।


(चित्र नं. ६)

क्र. ६) वरेण्यं (अर्द्ध ताड़ासन)- विधि- अब धीरे-धीरे सिर ऊपर उठायें तथा श्वास खींचते हुए दोनों हाथ बगल से आगे लाते हुए सीधे ऊपर ले जायें। बैठक में कोई परिवर्तन नहीं। दृष्टि ऊपर करें और हाथों के पंजे देखने का प्रयत्न करें। चित्र नं-६ यह 'अर्धताड़ासन' की स्थिति है।

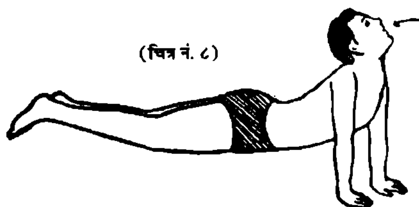
लाभः- हृदय की दुर्बलता जो दूर कर रक्तदोष हटाता है और कोष्ठबद्धता दूर होती है। जो लाभ ताड़ासन से होते हैं, वे ही लाभ इस आसन से होते हैं।

क्र. ७) भर्गो (शशांकासन) विधिः- श्वास छोड़ते हुए कमर से ऊपर के भाग आगे (कमर, रीढ़, हाथ एक साथ) झुकाकर मस्तक धरती से लगायें। दोनों हाथ जितने आगे ले जा सकें, ले जाकर धरती से सटा दें। 'शशांकासन' (चित्र नं-७) की तरह करना है।


(चित्र नं. ७)

लाभः- उदर के रोग दूर होते हैं। यह कूल्हों और गुदा स्थान के मध्य स्थित मांसपेशियों को सामान्य रखता है साइटिका के स्नायुओं को शिथिल करता है और एड्रिनल ग्रंथि के कार्य को नियमित करता है। कब्ज को दूर करता है।

क्र. ८) देवस्य (भुजंगासन) विधिः- हाथ और पैर के पंजे उसी स्थान पर रखते हुए, श्वास खींचते हुए, कमर उठाते हुए धड़ आगे की ओर ले जायें।


(चित्र नं. ८)

घुटने जंघाएँ भूमि से छूने दें। सीधे हाथ पर कमर से पीछे की ओर मोड़ते हुए सीना उठायें, गर्दन को ऊपर की ओर तानें। चित्र नं-८ की तरह 'भुजंगासन' जैसी मुद्रा बनायें।

लाभः- हृदय और मेरुदण्ड को बल देता है, वायु दोष को दूर करता है। यह भूख को उत्तेजित करता है तथा कोष्ठबद्धता और कब्ज का नाश करता है। यह जिगर और गुर्दे के लिए लाभदायक है।

क्र. ९) धीमहि (तिर्यक् भुजंगासन बायें)-चित्र नं-८ की मुद्रा में कोई परिवर्तन नहीं, केवल गर्दन पूरी तरह बायीं ओर मोड़ते हुए दाएँ पैर की एड़ी देखें।

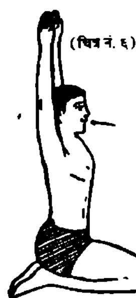
लाभ-भुजंगासन जैसे लाभ अभ्यासकर्त्ता को प्राप्त होते हैं।

क्र. १०) धियो (तिर्यक भुजंगासन दाएँ) विधि- शरीर की स्थिति पहले जैसे रखते हुए गर्दन दाहिनी ओर मोड़ते हुए बायें पैर की एड़ी देखें।

लाभ- भुजंगासन जैसे लाभ अभ्यासकर्त्ता को मिलते हैं।


(चित्र नं. ७)

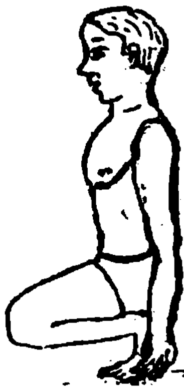
क्र. ११) यो नः (शशांकासन) विधि- श्वास छोड़ते हुए कमर से ऊपर के भाग आगे (कमर, रीढ़, हाथ एक साथ) झुकाकर मस्तक धरती से लगायें। दोनों हाथ जितने आगे ले जा सकें, ले जाकर धरती से सटा दें। भुजंगासन की स्थिति में ही पीछे जाकर एड़ियों पर बैठते हैं। **लाभ**- शशांकासन के अनुसार ही (क्रमांक-७) के लाभ प्राप्त होते हैं।


(चित्र नं. ६)

क्र. १२) प्रचोदयात् (अर्द्ध ताड़ासन) विधि- यह मुद्रा, मुद्रा क्रमांक ६ की तरह 'अर्द्ध ताड़ासन' की होगी।

लाभ- अर्द्ध ताड़ासन जैसे लाभ।

क्र. १३) भूः (उत्कटासन) विधि- इस मुद्रा में पंजों के बल ६ उत्कट आसन (चित्र नं-१३) की तरह बैठते हैं। सीना



निकला हुआ, हाथ सीधे भूमि छूते हुए। श्वास की गति सामान्य रखें।

लाभ- पिण्डली मजबूत बनती हैं। शरीर संतुलित होता है।

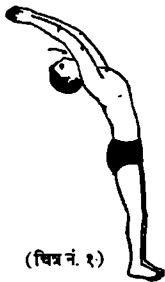


क्र. १४) भुवः (पाद हस्तासन)

विधि- घुटनों से सिर लगाते हुए एवं श्वास छोड़ते हुए कूल्हों को ऊपर उठाते हुए (चित्र नं-१४) की तरह पादहस्तासन की स्थिति में आयें।

लाभ-मुद्रा क्र. दो की तरह वायु दोष दूर होते हैं।

क्र. १५) स्वः (पूर्व ताड़ासन) विधि- धीरे-धीरे श्वास खींचते हुए दोनों हाथों को सिर के साथ ऊपर उठाते हुए दोनों हाथों को ऊपर ले जायें। दोनों पैर के पंजों के बल खड़े होते हुए शरीर को ऊपर की ओर खींचें। दृष्टि आकाश की ओर रखें। यह चारों क्रियाएँ एक साथ होनी चाहिए। यह समूचा व्यायाम ६ पूर्व ताड़ासन (चित्र नं-१५) की तरह सम्पन्न होगा। सहज रूप से जितनी देर में यह क्रिया संभव हो, कर लेने के बाद अगली क्रिया के लिए अगला नं० बोला जाए।



(चित्र नं. १)

लाभः-क्र. १ की तरह हृदय दुर्बलता को दूर कर रक्तदोष ठीक करता है।

क्र. १६) ॐ - बल की भावना करते हुए सावधान- विधि-ॐ का गुंजन करते हुए हाथों की मुट्ठियाँ कसते हुए बल की भावना के साथ कुहनियाँ मोड़ते हुए मुट्ठियाँ कंधे के पास से निकालते हुए हाथ नीचे लाना सावधान की स्थिति में। यह क्रिया श्वास छोड़ते हुए सम्पन्न करें। अंत में शवासन करें।

लाभः- समग्र स्वास्थ्य लाभ की कामना शरीर में स्फूर्ति तथा चैतन्यता आती है, मन प्रसन्न होता है।

इस प्रज्ञा योग व्यायाम को कम से कम दो बार करायें। प्रथम बार गिनती में तथा द्वितीय बार गायत्री मंत्र के साथ आध्यात्मिक विकास हेतु करायें।

सामूहिक अभ्यास में एक साथ एक गति से ड्रिल के अनुशासन का पूरी

तरह पालन करते हुए व्यायाम कराया जाए। जो उस अनुशासन में फिट न बैठते हों, उनको व्यक्तिगत रूप से अभ्यास करायें। यह व्यायाम प्रज्ञापीठों, शक्तिपीठों, विद्यालयों में, गली-मुहल्लों में बच्चों को, वयस्क पुरुषों और महिलाओं को भी कराया जाय। नियत समय पर नियत स्थान पर एकत्रित होकर करें व करायें। एक ही शिक्षक समय अदल-बदल कर विभिन्न स्थानों पर करा सकते हैं।

व्यायाम के साथ स्वास्थ्य रक्षा के, स्वच्छता के सूत्र क्रमशः समझाने का क्रम चलाया जा सकता है। व्यक्तिगत और सामूहिक स्वास्थ्य संरक्षण के प्रति जागरूकता बढ़ायी जा सकती है।

विशेष- (१) ये आसन प्रायः बच्चे, बूढ़े, जवान, स्त्री, पुरुष सभी कर सकते हैं; परन्तु अधिक कमजोर व जीर्ण रोगी न करें।

(२) शरीर के जिस अंग में कोई चोट, टूट-फूट या बड़ा आपरेशन हुआ हो, दर्द रहता हो तो उस अंग का व्यायाम न करें।

(३) कोई अंग बनावटी (नकली) लगा हो, तो वह व्यायाम न करें।

(४) पेट का व्यायाम कोलाइटिस, अल्सर के रोगी अथवा जिनका आपरेशन दो वर्ष पूर्व तक हुआ हो अथवा किसी प्रकार का पेट में दर्द रहता हो, वे न करें अथवा शिक्षक के परामर्श से करें। गर्भवती बहिनें बिलकुल न करें।

(५) प्रत्येक व्यायाम के बाद कुछ क्षण के लिए उस अंग को विश्राम दें, तब अगली क्रिया करें।

नोट- उच्चस्तरीय योग साधना हेतु किसी भी शिविर में आकर प्रशिक्षण ले सकते हैं। शांतिकुंज में स्वीकृति लेकर ही आयें।

योग व्यायाम से पूर्व की सावधानियाँ-

१- शरीर और वस्त्र स्वच्छ रखें।

२- योग-व्यायाम शुद्ध हवा में करें, मकान के अंदर करें तो देख लें कि स्थान साफ-सुथरा हो।

३- आसन करते समय किसी का अनावश्यक रूप से उपस्थित होना ठीक नहीं। ध्यान दूसरी ओर खींचने वाली आदि चर्चा वहाँ पर नहीं होना चाहिए और आसन करने वाले का प्रसन्नचित्त रहना बहुत जरूरी है। प्रातः संध्या स्नान करने के बाद योग-व्यायाम करना चाहिए।

४- योगाभ्यास करने वाले को यथासमय प्रातः चार बजे बिस्तर से उठने और रात को दस बजे तक सो जाने की आदत डालनी चाहिए।

५- भोजन स्वास्थ्यवर्द्धक और आयु के हिसाब से नियत समय पर करना चाहिए। स्वाद के लोभ से अधिक भोजन हानिकारक है।

६- भोजन सादा होना चाहिए, उसमें मिर्च-मसाला न डालें तो अच्छा है। यदि डालने ही हों तो कम से कम डालें। शाक, सब्जी उबली हुई गुणकारी होती है। आटा चोकर सहित और चावल हाथ का कुटा लाभप्रद है।

७- योग-व्यायाम करते समय कसे हुए कपड़े नहीं पहनने चाहिए, ढीले कपड़े ही लाभप्रद रहते हैं।

८- योग करने के बाद आधा घंटा विश्राम करके दूध या फल खाये जा सकते हैं। चाय, काफी आदि नशीली चीजें हानिकारक होती हैं।

९- प्रातः या सायं शौच करने के बाद ही योग का अभ्यास करना चाहिए।

१०-अनिद्रा निवारण के लिए रात को सोने से पहले गोमुखासन करना चाहिए।

११-आसनों के चुनाव में आगे झुकने वाले आसनों के साथ पीछे झुकने वाले आसन आवश्यक हैं। जिन्हें पेचिश का रोग हो, उन्हें मेरुदण्ड को पीछे झुककर करने वाले आसन नहीं करने चाहिए। जिनकी आँखें दुःख रही हों या लाल हों, उन्हें शीर्षासन नहीं करना चाहिए।

१२-योगाभ्यासरत व्यक्ति को ब्रह्मचर्य (संयम) का पालन दृढ़ता के साथ करना चाहिए। योगाभ्यास के तुरन्त बाद ही भारी कार्य नहीं करना चाहिए। योगाभ्यास नियमित रूप से करना चाहिए।

प्राणायाम

प्राणायाम ऋषियों की महान् देन में से प्राणायाम मनुष्य की प्राणशक्ति को बढ़ाने, अभिवर्द्धन करने हेतु एक विद्या है। प्राण शक्ति के अभिवर्द्धन से सामान्य व्यक्ति भी असाधारण कार्य कर सकता है। संतों-महापुरुषों में प्राण की अधिकता ही उन्हें महान् बनाती है! विश्व ब्रह्माण्ड में प्राण का अनन्त सरोवर लहरा रहा है। सामान्य रूप से श्वास-प्रश्वास के साथ काया में उतने ही प्राण का संचार होता है जिससे शरीर में प्राण टिका रह सके। उसकी वृद्धि होती रहे इसके लिए प्राणयाम करना चाहिए। यहाँ प्राणायाम की कुछ सरल विधियाँ दी जा रही हैं। बालकों को दनका अभ्यास कराएँ।

१) अंतरंग व्यायाम परक प्राणायाम - इसमें ३ चरण होते हैं। (१) पूरक (श्वांस खींचना), (२) कुम्भक (श्वांस अंदर रोकना) और (३) रेचक (श्वांस बाहर निकालना)। इस तरह के प्राणायामों में उक्त तीनों क्रियाओं में लगने वाले

समय का अनुपात १:२:१ (अर्थात् - जितने समय में श्वांस खींचा जाए उससे दो गुने समय तक अंदर रोका जाये और श्वांस छोड़ने में श्वांस खींचने जितना समय लगाया जाये।) अथवा १:४:२ (अर्थात् - जितने समय में श्वांस खींचा जाए उससे चार गुने समय तक श्वांस अंदर रोका जाये और श्वांस खींचने के समय से दो गुना समय, श्वांस छोड़ने में लगाया जाये।) इन प्राणायामों में १:२:१ मात्रा से ही अभ्यास प्रारम्भ करना चाहिये। जब इसका अभ्यास ठीक तरह से हो जाये तब १:४:२ की मात्रा अपनाना उचित है।

२) तालयुक्त श्वांस- किसी भी आसन पर सीधे बैठकर तालयुक्त श्वांस का अभ्यास किया जाए। श्वांस खींचने और छोड़ने में समान समय लगाएँ। श्वांस को जितनी देर बाहर रोक सकें, उतनी ही देर अंदर रोकें। इस प्रकार श्वांस लयबद्ध होने लगती है। यह अभ्यास हो जाने पर श्वांस के साथ प्राण प्रवाह को शरीर के विभिन्न अंगों में प्रवाहित होने का ध्यान करें। भावना करें कि शरीर के प्राण प्रवाह के तमाम विकारों और दुर्बलताओं को यह शुद्ध प्राण प्रवाह दूर कर रहा है। इस क्रिया के अभ्यास से पीड़ित अंगों की पीड़ा भी कम की जा सकती है। तालयुक्त श्वांस की क्रिया का अभ्यास सतत किया जा सकता है।

३) प्राणाकर्षण प्राणायाम- सुखासन में, मेरुदण्ड सीधा रखते हुए सहज स्थिति में बैठें। दोनों हाथ गोद में या घुटनों पर रखें, आँखें बन्द करें। ध्यान करें कि विश्व ब्रह्माण्ड में प्राण का अनन्त सागर हिलोरें ले रहा है। वह हमारे आवाहन पर हमारे चारों ओर घनीभूत हो रहा है।

धीरे-धीरे गहरी श्वांस खींचें। भावना करें कि दिव्य प्राण-प्रवाह श्वांस के साथ अन्दर प्रवेश कर रहा है तथा सारे शरीर में कोने-कोने तक पहुँच रहा है।

श्वांस रोकते हुए ध्यान करें कि दिव्य प्राण शरीर के कण-कण में सोखा जा रहा है और मलिन प्राण छोड़ा जा रहा है। श्वांस निकालते हुए भावना करें कि वायु के साथ मलिनताएँ बाहर निकल कर दूर चली जा रही हैं। श्वांस बाहर रोकते हुए ध्यान करें कि खींचा हुआ प्राण अन्दर स्थिर हो रहा है। बाहर श्रेष्ठ प्राण पुनः हिलोरें ले रहा है। श्वांस खींचने और निकालने में एक सा समय लगायें। अन्दर रोकने और बाहर रोकने में खींचने या छोड़ने से आधा समय ही लगायें। इस प्राणायाम से थोड़े प्रयास से ही दिव्य प्राण के बड़े अनुदान प्राप्त होते हैं।

४) नाड़ी शोधन प्राणायाम- नाड़ी शोधन प्राणायाम के लिये प्राणायाम की मुद्रा में बैठें। बायीं नासिका से श्वांस खींचें और उसी से छोड़ें। पूरक, रेचक, कुम्भक

क्रमशः २:१:२:१ के निर्धारित क्रम से ३ बार श्वांस खींचना ३ बार निकालना। फिर यही क्रम दाहिने स्वर से अपनायें। फिर दोनों नासिका छिद्रों से गहरा श्वांस खींचें और मुंह से धीरे-धीरे उपयुक्त समय लगाते हुए रेचक करना चाहिये। यह एक प्राणायाम माना जाता है। इस प्रकार तीन बार क्रिया दोहराएँ। इसमें इड़ा, पिंगला, सुषुम्रा नाड़ी में प्राण का प्रवाह संतुलित किया जाता है।

इस प्रयोग में क्रमशः इड़ा, पिंगला और सुषुम्रा नाड़ियों में प्राणप्रवाह के साथ नाड़ी तंत्र के शोधन की भावना की जाती है। हर श्वांस के साथ दिव्य प्राण संचार तथा प्रश्वांस के साथ विकारों के बाहर फेंके जाने की धारणा की जाती है।

५) मानसिक शक्ति बढ़ाने के लिये प्राणायाम- दाहिने पैर की ऐड़ी, बाएँ पैर की जाँघ पर और बाएँ पैर की एड़ी गुदा पर रखें। ठोढ़ी को कंठ कूप से चिपकाएँ और नेत्र बंद करें। गहरा और लंबा श्वांस खींचें। थोड़ी देर भीतर रोक कर बाहर निकाल दें। इस क्रिया को कुछ देर तक दोहराएँ।

६) चित्त की ऐकाग्रता के लिये प्राणायाम- शवासन (शिथिलासन) में लेट जाओ। शरीर को बिल्कुल ढीला कर दो। कानों में रुई लगाकर नेत्र बंद कर लो, जिससे बाहर के शब्द सुनाई न पड़ें। दृष्टि नासिका के अग्र भाग पर रखो। साधारण रीति से गहरे साँस लेते और छोड़ते रहो, बीच में थोड़ा कुंभक भी करते रहो।

फिर नेत्रों की पुतलियों को ऊपर चढ़ाकर दोंनों भवों के मध्य-त्रिकुटी में दिव्य तेज कर ध्यान करो। कुछ निद्रा सी आये तो आने दो, उसे तोड़ो मत। इस अवस्था में 'अनहद' शब्द सुनाई पड़ते हैं और ज्योति स्वरूप परमात्मा के दर्शन होने से चित्त की एकाग्रता दिनों-दिन बढ़ती जाती है।

७) थकान मिटाने के लिये प्राणायाम- साधारण रीति से पूरक करें और वैसा ही थोड़ा कुंभक करें। रेचक मुँह से करें। मुँह को सिकोड़ कर इस प्रकार हवा बाहर फेंकें जैसे सीटी बजाते हैं। पूरी वायु एक बार में ही बाहर न निकालें, वरन् रुक-रुककर तीन बार में बाहर निकालें।

प्राणायाम से पुष्ट नाड़ी एवं चक्र तंत्र, जप-ध्यान आदि प्रयोगों से उत्पादित ऊर्जा के धारण और नियोजन में भली प्रकार सक्षम हो जाता है। आरोग्य शक्ति, संकल्प शक्ति, पूर्वाभास, विचार संचार (टेलीपैथी) जैसी क्षमताएँ अनायास हस्तगत होने लगती हैं। उच्चस्तरीय प्राणायाम कभी शांतिकुंज के शिविर में आकर सीख सकते हैं।

ऊषापान-जल प्रयोग (वॉटर थेरेपी)

भारत में ऊषापन के नाम से यह उपचार विद्वानों से लेकर ग्रामीणों तक में प्रचलित रहा है। पश्चिम के सम्मोहन और अपनी संस्कृति के प्रति उपेक्षा-अवज्ञा की मानसिकता के कारण यह प्रचलन और इसका ठीक-ठाक स्वरूप भुला दिया गया था। भारत में प्राकृतिक जीवनचर्या की समर्थक कुछ संस्थानों तथा जापान की एक संस्था '**सिकनेस ऐसोसिएशन**' ने विभिन्न शोधात्मक अध्ययनों के आधार पर इस उपचार प्रणाली को पुनः स्थापित और प्रचारित किया है। हजारों की संख्या में प्रयोगकर्त्ताओं ने इसका लाभ उठाया है।

लाभ-स्वस्थ, शरीर वालों के लिए यह नियमित प्रयोग आरोग्यवर्धक रोगप्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने वाला तथा स्फूर्तिदायक सिद्ध होता है। इसके नियमित प्रयोग से तमाम रोगों से छुटकारा मिलता है। जैसे:-

१. सिरदर्द, रक्तचाप, एनीमिया, संधिवात, मोटापा, अर्थ्राइटिस, स्नायु रोग, साइटिका, दिल की धड़कन, बेहोशी। कफ, खाँसी, दमा, ब्राँकाइटिस, टी.बी.।
२. मेनीन्जायटिस, लिवर संबंधी रोग,गुर्दे की बीमारी, पेशाब की बीमारियाँ।
३. आँखों की कई प्रकार की तकलीफें।
४. स्त्रियों की अनियमित माहवारी, प्रदर (ल्यूकोरिया), गर्भाशय का कैंसर।
५. हाइपर एसीडिटी,गेस्ट्राइटिस, पेचिश, कब्ज़ियत, डायबिटीज़ (शर्करायुक्त पेशाब)
६. नाक और गले संबंधी बीमारियाँ। अनुभवों और परीक्षणों से रोग ठीक होने की अवधि निम्नानुसार सिद्ध हुई है- रक्तचाप- १माह में, मधुमेह -१ माह में, कब्ज एवं गैस की तकलीफ -१० दिन में, टी.बी. -३ माह में।

विधि- सबेरे ऊषाकाल में जागकर यह प्रयोग करना विशेष लाभकारी है। इसीलिए इसे ऊषापान कहा जाता है। रात में देर से सोने के कारण जो लोंग सबेरे जल्दी न उठ पायें, वे जब जागें तभी इसका प्रयोग करें।

- सबेरे उठते ही आवश्यकता होने पर लघुशंका (पेशाब) से निवृत्त होकर, मंजन-ब्रश आदि करने से पहले ऊषापान करें। एकाध सादा पानी का कुल्ला किया जा सकता है। वयस्क व्यक्ति, जिनका शरीर भार ६० कि.ग्रा. के लगभग तक है, वे १ किलो (१लीटर) तथा अधिक भार वाले सवा किलो (सवा लीटर) पानी क्रमशः एक साथ पियें।

- पानी उकडूँ बैठकर पीना अधिक अच्छा रहता है। यदि रात में ताँबे के बर्तन में रखा गया पानी हो, तो उसकी लाभ अधिक होता है। सामान्यतः किसी भी स्वच्छ

बर्तन में रखा पानी पिया जा सकता है। ऊषापान के लगभग ४५ मिनट बाद तक कुछ भी खाना-पीना नहीं चाहिए।

ज्ञातव्य- १. जिनको सर्दी लगती हो, शरीर ठंडा रहता हो, अग्नि मंद हो, कमजोरी हो वे कड़ी सर्दियों में सामान्य स्थिति में भी गर्म पानी या हल्का गर्म पानी पीयें।
२. जिनके शरीर में गर्मी हो, जलन रहती हो, वे रात्रि का रखा सादा पानी पीयें।
३. एक साथ न पी पायें तो ५-१० मिनट रुक कर दो बार में पी लें। प्रारंभ में एक साथ निर्धारित मात्रा तक जल न पी सकें तो धीरे-धीरे (सप्ताह भर में) अभ्यास में लायें।
४. पहले १०-१५ दिन पेशाब बहुत ज्यादा व जोर से लगेगी, बाद में ठीक हो जायेगी।
५. जो लोग वात रोग एवं संधिवात के रोगों से ग्रस्त हों, उन्हें लगभग १ सप्ताह तक यह प्रयोग दिन में तीन बार (सबेरे जागते ही, दोपहर भोजन विश्राम के बाद एवं शाम को) करना चाहिए। बाद में केवल सबेरे का क्रम प्रारम्भ रखें।
६. पानी पीकर पेट पर हाथ फेरते हुए १०-१५ मिनट जहाँ सुविधा हो वहाँ टहलें या कटिमर्दनासन करें। यह क्रिया कब्ज के मरीजों के लिए विशेष उपयोगी है।

कटिमर्दनासन विधि- चित्त लेटकर, पैरों को मोड़कर नितम्ब से लगा लें व तलवे जमीन से लगा लें। एड़ी घुटने (दोनों पैर के) सटे हों। दोनों हाथ कंधे की सीध में फैलाकर १८० डिग्री में कर लें। हाथ की मुट्ठी बंद करके धीरे-धीरे पैरों को बायें मोड़ें व गर्दन दाहिने मोड़ें। फिर पैरों को दाहिने ले जायें और गर्दन बायें ले जायें। ऐसा ३० बार से शुरू करें तथा ८४ बार तक ले जायें।

पथ्य- ऊषापान करने वाले, रोगों की प्रकृति के अनुसार आहार पर ध्यान दें।

वात प्रधान रोगों में- पत्तीदार साग बंद कर दें।

पित्त प्रधान रोगों में- तला-भुना पदार्थ, मिर्च, चाय-काफी, गरम मसाले, अचार, खटाई आदि बंद कर दें।

कफ प्रधान रोगों में - मैदा, चावल, उड़द, आलू, अरबी, भिण्डी व केला न लें।
१. भूख से कम खायें व चबा-चबा कर खायें। भोजन के तुरंत पहले पानी न पीयें।
२. भोजन के बीच ४-५ घूँट पानी पीना लाभदायक होता है।

आयुर्वेद का मान्य नियम है कि अपच (आहार के सार तत्त्व से शरीर के आवश्यक रस- रक्तादि बनने तक की प्रक्रिया में गड़बड़ी) की स्थिति में जल प्रयोग औषधि रूप है। निरोग स्थिति में बल-स्फूर्तिदायक है। खाद्य सामाग्री में स्वाभाविक जल की उपस्थिति अमृत तुल्य होती है तथा भोजन के तत्काल बाद पानी पीना पाचन तंत्र को गड़बड़ा देता है।

वैज्ञानिक दृष्टिः- यह प्रयोग रोगी, स्वस्थ सभी के लिए अपनाने योग्य है। शरीर विज्ञान की दृष्टि से इसके लाभों के पीछे निम्नानुसार सूत्र कार्य करते हैं।

-रात में नींद के समय लगभग ६ घण्टे तक हर व्यक्ति के शरीर में कम से कम हलचल होती है, लेकिन इस बीच पेट द्वारा भोजन पचाकर उसका रस सारे शरीर में पहुँचाने का क्रम बराबर चलता रहता है। इस प्रक्रिया के साथ शरीर में नये कोष बनने तथा पुराने कोषों को मल के रूप में विसर्जित करने का चयापचय (मेटाबॉलिज्म) का क्रम चलता रहता है। रात में शरीर की हलचल तथा शरीर में पानी के प्रवाह की कमी से जगह-जगह शरीर में पर्याप्त मात्रा में एक साथ पानी पहुँचने से, शरीर के अन्तरंग अवयवों की धुलाई (फ्लशिंग) जैसी प्रक्रिया चल पड़ती है। अत: सहज प्रवाह में शरीर के विजातीय पदार्थों को शरीर से बाहर निकालने का काम सहजता से हो जाता है। यदि ये विजातीय पदार्थ या विष शरीर से बाहर नहीं निकल पाते हैं, तो तमाम रोगों का कारण बन जाते हैं। शरीर में पथरी या गाँठों के रूप में भी इन्हीं पदार्थों का जमाव होता है। ऊषापान से ऐसी विसंगतियों का निवारण भी होता है तथा उन्हें पनपने का अवसर भी नहीं मिलता।

ऊषापान बासी मुँह करने का नियम है। मुख में सोते समय कुछ शारीरिक विषों (माउथ पॉयजंस) की पर्त जम जाती है। एक साथ काफी मात्रा में पानी पीने से उनका बहुत हल्का घोल शरीर में पहुँचता है, जो 'वैक्सीन' का काम करता है। उसके प्रभाव से शरीर में उन विषों को निष्प्रभावी बनाने वाले एण्टीबॉयटीज़ तैयार होने लगते हैं। इससे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता का विकास होता है। निश्चित रूप से यह प्रयोग स्वस्थ-रोगी, अमीर-गरीब और हर उम्र के नर-नारी द्वारा अपनाया जाने योग्य है। इसे स्वयं भी प्रयोग करें व देसरों को भी बतायें।

प्रकृति का अमृत- गेहूँ के ज्वारे (Green Blood)

अमेरिका की एक महिला डॉ. एन बीगमोर ने गेहूँ की शक्ति के सम्बन्ध में अनुसंधान तथा अनेकानेक प्रयोग करके यह सिद्ध कर दिया है कि गेहूँ के ज्वारे के रस के प्रयोग से कठिन से कठिन रोग अच्छे किये जा सकते हैं। वे कहती हैं कि संसार में ऐसा कोई रोग नहीं है, जो इस रस के सेवन से अच्छा न हो सके। कैंसर के बड़े-बड़े भयंकर रोगी तक उन्होंने अच्छे किये हैं।

गेहूँ के ज्वारे के रस से भगन्दर, बवासीर, मधुमेह, गठिया, पीलियाज्वर, दमा, खाँसी, थैल्सीमिया, ल्यूकेमिया (रक्त का कैंसर), हृदय रोग, टायफाइड,

पथरी, पेट के कीड़े, दाँत व मसूड़ों के रोग, खून की कमी, त्वचा रोग, अनिद्रा, हाथ-पैरों में कम्पन आदि सभी रोग ठीक होते हैं।

इस रस को बनाने की विधि:-

उत्तम किस्म के गेहूँ के दानों को दस-बारह गमलों में एक-एक दिन के अन्तर से बोयें और छाया में रखें। यदाकदा थोड़ा-थोड़ा पानी देते रहें। आठ-दस दिन में पहले गमले के पौधे ७-८ इंच तक बड़े हो जायेंगे। तब ४०-५० पौधों को जड़ सहित उखाड़ लें। जड़ को काट दें, बचे हुए डंठल तथा पत्तियों को धोकर सिल पर अथवा मिक्सी में थोड़े से पानी के साथ पीस लें। अब उसे छानकर ताजे रस को तत्काल पी लें। इस प्रकार नियम से एक-एक गमले के पौधों के रस का इस्तेमाल करें। गेहूँ के पौधे ७-८ इंच से ज्यादा बड़े न होने पाएँ। जैसे-जैसे गमले खाली होते जाएँ, उनमें गेहूँ बोते रहें। इस प्रकार गेहूँ के ज्वारे घर में बारहों मास उगाये जा सकते हैं।

लाभ:- इस रस में ७०% तरल क्लोरोफिल, पोटैशियम, कैरोटीन, प्रोटीन, ९० से ज्यादा खनिज, लौह तत्व, कैल्शियम, एन्जाइम, अमीनोएसिड तथा बहुत से विटामिन ए, बी, बी१२, सी इत्यादि मौजूद होते हैं। कहते हैं कि यह रस मनुष्य के रक्त से ४०% मेल खाता है। इसीलिये इसे 'ग्रीन ब्लड' भी कहते हैं। यह रक्त में लाल रक्त कोशिकाओं को बढ़ाता है। पाचन क्रिया तेज करता है। खून साफ करता है। Toxin (जैव तत्व विष) को निष्प्रभावी करता है। स्वस्थ एवं रोगी दोनों के लिये अमृत समान है।

सेवन विधि:- इसे स्वस्थ, रोगी, बालक, युवा एवं वृद्ध सभी ले सकते हैं। प्रारंभ में दो बड़े चम्मच, फिर आधा कप, उसके बाद एक कप तक मात्रा बढ़ाई जा सकती है। यदि सेवन के उपरांत उल्टी, उबकाई या पेट भारी महसूस हो, सिर दर्द हो अथवा दस्त लग जाएँ या अन्य कोई परेशानी हो, तो घबराएँ नहीं। यह आपके शरीर की अशुद्धियों के बाहर निकलने के लक्षण हैं। ताजे रस का ही सेवन करना चाहिये। सुबह खाली पेट लेना फायदेमंद है। घंटे-दो घंटे तक रखने से उसकी शक्ति घट जाती है। इससे अधिक रखने पर तो यह बिल्कुल शक्तिहीन हो जाता है। ज्वारों को बारीक काटकर सलाद की तरह चबा-चबाकर खाना भी लाभदायक है। परंतु इसमें और कुछ नहीं मिलाना चाहिये। थोड़ा-थोड़ा करके दिन में दो-तीन बार भी ले सकते हैं। अधिक जानकारी के लिये देखें डॉ. गाला की पुस्तक 'पृथ्वी की संजीवनी : गेहूँ के ज्वारे' व कल्याण का 'आरोग्य अंक'।

अष्टम् अध्याय

व्यक्तित्व विकास के महत्त्वपूर्ण तथ्य

१. शिष्टाचार

एक व्यक्ति दूसरे के साथ जो सभ्यतापूर्ण व्यवहार करता है, उसे शिष्टाचार कहते हैं। यह व्यवहार ऐसा होना चाहिए कि अपने रहन-सहन तथा वचनों से दूसरों को कष्ट तथा असुविधा न हो। शिष्टाचार दिखावटी नहीं होना चाहिए, वह सच्चा होना चाहिए। शिष्टाचार सदाचार का ही एक अंग है। प्रत्येक देश एवं समाज के शिष्टाचार के नियम कुछ पृथक-पृथक होते हैं। बचपन में ही इन नियमों को जान लेना चाहिए और इनके पालन का स्वभाव बना लेना चाहिए।

क. बड़ों का अभिवादन

१. बड़ों को कभी 'तुम' मत कहो, उन्हें 'आप' कहो और अपने लिए मैं का प्रयोग मत करो 'हम' कहो।

२. जो गुरुजन घर में है, उन्हें सबेरे उठते ही प्रणाम करो। अपने से बड़े लोग जब मिलें/जब उनसे भेंट हो उन्हें प्रणाम करना चाहिए।

३. जहाँ दीपक जलाने पर या मन्दिर में आरती होने पर सायंकाल प्रणाम करने की प्रथा हो वहाँ उस समय भी प्रणाम करना चाहिए।

४. जब किसी नये व्यक्ति से परिचय करया जाय, तब उन्हें प्रणाम करना चाहिए। सौंफ-इलायची या पुरस्कार अगर कोई दे तब उस समय भी उसे प्रणाम करना चाहिए।

५. गुरुजनों को पत्र व्यवहार में भी प्रणाम लिखना चाहिए।

६. प्रणाम करते समय हाथ में कोई वस्तु हो तो उसे बगल में दबाकर या एक ओर रखकर दोनों हाथों से प्रणाम करना चाहिए।

७. चिल्लाकर या पीछे से प्रणाम नहीं करना चाहिए। सामने जाकर शान्ति से प्रणाम करना चाहिए।

८. प्रणाम की उत्तम रीति दोनों हाथ जोड़कर मस्तक झुकाना है। जिस समाज में प्रणाम के समय जो कहने की प्रथा हो, उसी शब्द का व्यवहार करना चाहिए। महात्माओं तथा साधुओं के चरण छूने की प्राचीन प्रथा है।

९. जब कोई भोजन कर रहा हो, स्नान कर रहा हो, बाल बनवा रहा हो, शौच जाकर हाथ न धोये हों तो उस समय उसे प्रणाम नहीं करना चाहिए। उसके इन कार्यों से निवृत्त होने पर ही प्रणाम करना चाहिए।

ख. बड़ों का अनुगमन

१. अपने से बड़ा कोई पुकारे तो 'क्या', 'ऐं', 'हाँ' नहीं कहना चाहिए। 'जी हाँ' 'जी' अथवा 'आज्ञा' कहकर प्रत्युत्ता देना चाहिए।

२. लोगों को बुलाने, पत्र लिखने या चर्चा करने में उनके नाम के आगे 'श्री' और अन्त में 'जी' अवश्य लगाओ। इसके अतिरिक्त पंडित, सेठ, बाबू, लाला आदि यदि उपाधि हो तो उसे भी लगाओ।

३. अपने से बड़ों की ओर पैर फैलाकर या पीठ करके मत बैठो। उनकी ओर पैर करके मत सोओ।

४. मार्ग में जब गुरुजनों के साथ चलना हो तो उनके आगे या बराबर मत चलो उनके पीछे चलो। उनके पास कुछ सामान हो तो आग्रह करके उसे स्वयं ले लो। कहीं दरवाजे में से जाना हो तो पहले बड़ों को जाने दो। द्वार बंद है तो आगे बढ़कर खोल दो और आवश्यकता हो तो भीतर प्रकाश कर दो। यदि द्वार पर पर्दा हो तो उसे तब तक उठाये रहो, जब तक वे अंदर न चले जायें।

५. सवारी पर बैठते समय बड़ों को पहले बैठने देना चाहिए। कहीं भी बड़ों के आने पर बैठे हो तो खड़े हो जाओ और उनके बैठ जाने पर ही बैठो। उनसे ऊँचे आसान पर नहीं बैठना चाहिए। बराबर भी मत बैठो। नीचे बैठने को जगह हो तो नीचे बैठो। स्वयं सवारी पर हो या ऊँचे चबूतरे आदि स्थान पर और बड़ों से बात करना हो तो नीचे उतर कर बात करो। वे खड़े हों तो उनसे बैठे-बैठे नहीं बल्कि खड़े होकर बात करो। चारपाई आदि पर बड़ों को तथा अतिथियों को सिरहाने की ओर बैठाना चाहिए। मोटर, घोड़ा-गाड़ी आदि सवारियों में बराबर बैठना ही हो तो बड़ों की बांयीं ओर बैठना चाहिए।

६. जब कोई आदरणीय व्यक्ति अपने यहाँ आएँ तो कुछ दूर आगे बढ़कर उनका स्वागत करें और जब वे जाने लगें तब सवारी या द्वार तक उन्हें पहुँचाना चाहिए।

ग. छोटों के प्रति

१. बच्चों को, नौकरों को अथवा किसी को भी 'तू' मत कहो। 'तुम' या 'आप' कहो।

२. जब कोई आपको प्रणाम करे तब उसके प्रणाम का उत्तर प्रणाम करके या जैसे उचित हो अवश्य दो।

३. बच्चों को चूमो मत। यह स्वास्थ्य के लिए भी हानिकारक है। भारत की स्नेह प्रकट करने की पुरानी रीति है मस्तक सूँघ लेना और यही उत्तम रीति है।
४. नौकर को भी भोजन तथा विश्राम के लिए उचित समय दो। बीमारी आदि में उसकी सुविधा का ध्यान रखो। यदि भोजन-स्नान आदि में लगा हो तो पुकारो मत। किसीको भी कभी नीच मत समझो।
५. आपके द्वारा आपसे जो छोटे हैं, उन्हें असुविधा न हो यह ध्यान रखना चाहिए। छोटों के आग्रह करने पर भी उनसे अपनी सेवा का काम कम से कम लेना चाहिए।

घ. महिलाओं के प्रति

१. अपने से बड़ी स्त्रियों को माता, बराबर वाली को बहिन तथा छोटी को कन्या समझो।
२. बिना जान पहचान के स्त्री से कभी बात करनी ही पड़े तो दृष्टि नीचे करके बात करनी चाहिए। स्त्रियों को घूरना, उनसे हँसी करना उनके प्रति इशारे करना या उनको छूना असभ्यता है, पाप भी है।,
३. घर के जिस भाग में स्त्रियाँ रहती हैं, वहाँ बिना सूचना दिये नहीं जाना चाहिए। जहाँ स्त्रियाँ स्नान करती हों, वहाँ नहीं जाना चाहिए। जिस कमरे में कोई स्त्री अकेली हो, सोयी हो, कपड़े पहन रही हो, अपरिचित हो, भोजन कर रही हो, वहाँ भी नहीं जाना चाहिए।
४. गाड़ी, नाव आदि में स्त्रियों को बैठाकर तब बैठना चाहिए। कहीं सवारी में या अन्यत्र जगह की कमी हो और कोई स्त्री वहाँ आये तो उठकर बैठने के लिए स्थान खाली कर देना चाहिए।
५. छिपकर, अश्लील-चित्र, पोस्टर आदि देखना बहुत बुरा है। स्त्रियों के सामने अपर्याप्त वस्त्रों में स्नान नहीं करना चाहिए और न उनसे स्त्री पुरुष के गुप्त रोगों की चर्चा करनी चाहिए।
६. यही बातें स्त्रियों के लिए भी हैं। विशेषत: उन्हें खिड़कियों या दरवाजों में खड़े होकर झाँकना नहीं चाहिए। और न गहने पहनकर या इस प्रकार सजधज कर निकलना चाहिए कि लोगों का ध्यान उनकी ओर आकर्षित हो।

ङ सर्वसाधारण के प्रति

१. यदि किसी के अंग ठीक नहीं - कोई काना, अंधा लंगड़ा या कुरूप है अथवा किसी में तुतलाने आदि का कोई स्वभाव है तो उसे चिढ़ाओ मत। उसकी नकल मत करो। कोई स्वयं गिर पड़े या उसकी कोई वस्तु गिर जाये, किसी से कोई भूल

हो जाये, तो हँसकर उसे दुखी मत करो। यदि कोई दूसरे प्रान्त का तुम्हारे रहन-सहन में, बोलने के ढंग में भूल करता है। तो उसकी हँसी मत उड़ाओ।

२. कोई रास्ता पूछे तो उसे समझाकर बताओ और संभव हो तो कुछ दूर तक जाकर मार्ग दिखा आओ। कोई चिट्ठी या तार पढ़वाये तो रुक कर पढ़ दो। किसी का भार उससे न उठता हो तो उसके बिना कहे ही उठवा दो। कोई गिर पड़े तो उसे सहायता देकर उठा दो। जिसकी जैसी भी सहायता कर सकते हो, अवश्य करो। किसी की उपेक्षा मत करो।

३. अंधों को अंधा कहने के बदले सूरदास कहना चाहिए। इसी प्रकार किसी में कोई अंग दोष हो तो उसे चिढ़ाना नहीं चाहिए। उसे इस प्रकार बुलाना या पुकारना चाहिए कि उसको बुरा न लगे।

४. किसी भी देश या जाति के झण्डे, राष्ट्रीय गान, धर्म ग्रन्थ अथवा सामान्य महापुरुषों को अपमान कभी मत करो। उनके प्रति आदर प्रकट करो। किसी धर्म पर आक्षेप मत करो।

५. सोये हुए व्यक्ति को जगाना हो तो बहुत धीरे से जगाना चाहिए।

६. किसी से झगड़ा मत करो। कोई किसी बात पर हठ करे व उसकी बातें आपको ठीक न भी लगें, तब भी उसका खण्डन करने का हठ मत करो।

७. मित्रों, पड़ोसियों, परिचतों को भाई, चाचा आदि उचित संबोधनों से पुकारो।

८. दो व्यक्ति झगड़ रहे हों तो उनके झगड़े को बढ़ाने का प्रयास मत करो। दो व्यक्ति परस्पर बातें कर रहे हों तो वहाँ मत आओ और न ही छिपकर उनकी बात सुनने का प्रयास करो। दो आदमी आपस में बैठकर या खड़े होकर बात कर रहे हों तो उनके बीच में मत जाओ।

९. आपने हमें पहचाना। ऐसे प्रश्न करके दूसरों की परीक्ष मत करो। आवश्यकता न हो तो किसीका नाम, गाँव, परिचय मत पूछो और कोई कहीं जा रहा हो तो "कहाँ जाते हो? भी मत पूछो।"

१०. किसी का पत्र मत पढ़ो और न किसी की कोई गुप्त बात जानने का प्रयास करो।

११. किसी की निन्दा या चुगली मत करो। दूसरों का कोई दोष तुम्हें ज्ञात हो भी जाये तो उसे किसी से मत कहो। किसी ने आपसे दूसरे की निन्दा की हो तो निन्दक का नाम मत बतलाओ।

१२. बिना आवश्यकता के किसी की जाति, आमदनी, वेतन आदि मत पूछो।

१३. कोई अपना परिचित बीमार हो जाय तो उसके पास कई बार जाना चाहिए।

वहाँ उतनी ही देर ठहरना चाहिए जिसमें उसे या उसके आस पास के लोगों को कष्ट न हो। उसके रोग की गंभीरता की चर्चा वहाँ नहीं करनी चाहिए और न बिना पूछे औषधि बताने लगना चाहिए।

१४. अपने यहाँ कोई मृत्यु या दुर्घटना हो जाये तो बहुत चिल्लाकर शोक नहीं प्रकट करना चाहिए। किसी परिचित या पड़ोसी के यहाँ मृत्यु या दुर्घटना हो जाये तो वहाँ अवश्य जाना व आश्वासन देना चाहिए।

१५. किसी के घर जाओ तो उसकी वस्तुओं को मत छुओ। वहाँ प्रतीक्षा करनी पड़े तो धैर्य रखो। कोई आपके पास आकर कुछ अधिक देर भी बैठै तो ऐसा भाव मत प्रकट करो कि आप उब गये हैं।

१७. किसी से मिलो तो उसका कम से कम समय लो। केवल आवश्यक बातें ही करो। वहाँ से आना हो तो उसे नम्रतापूर्वक सूचित कर दो। वह अनुरोध करे तो यदि बहुत असुविधा न हो तभी कुछ देर वहाँ रुको।

च. अपने प्रति

१. अपने नाम के साथ स्वयं पण्डित, बाबू आदि मत लगाओ।

२. कोई आपको पत्र लिखे तो उसका उत्तर आवश्यक दो। कोई कुछ पूछे तो नम्रतापूर्वक उसे उत्तर दो।

३. कोई कुछ दे तो बायें हाथ से मत लो, दाहिने हाथ से लो और दूसरे को कुछ देना हो तो भी दाहिने हाथ से दो।

४. दूसरों की सेवा करो, पर दूसरों की अनावश्यक सेवा मत लो। किसी का भी उपकार मत लो।

५. किसी की वस्तु तुम्हारे देखते, जानते, गिरे या खो जाये तो उसे दे दो। तुम्हारी गिरी हुई वस्तु कोई उठाकर दे तो उसे धन्यवाद दो। आपको कोई धन्यवाद दे तो नम्रता प्रकट करो।

६. किसी को आपका पैर या धक्का लग जाये तो उससे क्षमा माँगो। कोई आपसे क्षमा माँगे तो विनम्रता पूर्वक उत्तर देना चाहिए, अकड़ना नहीं चाहिए। क्षमा माँगने की कोई बात नहीं अथवा आपसे कोई भूल नहीं हुई कहकर उसे क्षमा करना / उसका सम्मान करना चाहिए।

७. अपने रोग, कष्ट, विपत्ति तथा अपने गुण, अपनी वीरता, सफलता की चर्चा अकारण ही दूसरों से मत करो।

८. झूठ मत बोलो, शपथ मत खाओ और न प्रतीक्षा कराने का स्वभाव बनाओ।

९. किसी को गाली मत दो। क्रोध न करो व मुख से अपशब्द मत निकालो।

१०. यदि किसी के यहाँ अतिथि बनो तो उस घर के लोगों को आपके लिये कोई विशेष प्रबन्ध न करना पड़े ऐसा ध्यान रखो। उनके यहाँ जो भोजनादि मिले, उसकी प्रशंसा करके खाओ। वहाँ जो स्थान आपके रहने को नियत हो वहीं रहो। भोजन के समय उनको आपकी प्रतीक्षा न करनी पड़े। आपके उठने-बैठने आदि से वहाँ के लोगों को असुविधा न हो। आनको जो फल, कार्ड, लिफाफे आदि आवश्यक हों, वह स्वयं खरीद लाओ।

११. किसी से कोई वस्तु लो तो उसे सुरक्षित रखो और काम करके तुरंत लौटा दो। जिस दिन कोई वस्तु लौटाने को कहा गया हो तो उससे पहले ही उसे लौटा देना उत्तम होता है।

१२. किसी के घर जाते या आते समय द्वार बंद करना मत भूलो। किसी की कोई वस्तु उठाओ तो उसे फिर से यथास्थान रख देना चाहिए।

छ. मार्ग में

१. रास्ते में या सार्वजनिक स्थलों पर न तो थूकें, न लघुशंकादि करें और न वहाँ फलों के छिलके या कागज आदि डालें। लघु शंकादि करने के नियत स्थानों पर ही करें। इसी प्रकार फलों के छिलके, रद्दी कागज आदि भी एक किनारे या उनके लिये बनाये स्थलों पर डालें।

२. मार्ग में कांटे, कांच के टुकड़े या कंकड़ पड़े हो तो उन्हें हटा दें।

३. सीधे शान्त चलें। पैर घसीटते सीटी बजाते, गाते, हँसी मजाक करते चलना असभ्यता है। छड़ी या छत्ता घुमाते हुए भी नहीं चलना चाहिए।

४. रेल में चढ़ते समय, नौकादि से चढ़ते-उतरते समय, टिकट लेते समय, धक्का मत दो। क्रम से खड़े हों और शांति से काम करो। रेल से उतरने वालों को उतर लेने दो। तब चढ़ो। डिब्बे में बैठे हो तो दूसरों को चढ़ने से रोको मत। अपने बैठने से अधिक स्थान मत घेरो।

५. रेल के डिब्बे में या धर्मशाला में वहाँ की किसी वस्तु या स्थान को गंदा मत करो। वहाँ के नियमों का पूरा पालन करो।

६. रेल के डिब्बों में जल मत गिराओ। थूको मत, नाक मत छिनको, फलों के छिलके न गिराओ, कचरा आदि सबको डिब्बे में बने कूड़ापात्र में ही डालो।

७. रेल में या किसी भी सार्वजनिक स्थान पर ध्रूमपान न करो।

८. बाजार में खड़े-खड़े या मार्ग चलते कुछ खाने लगना बहुत बुरा स्वभाव है।

९. जहाँ जाने या रोकने के लिए तार लगे हों, दीवार बनी हो, काँटे डाले गये हों उधर से मत जाओ।

१०. एक दूसरे के कंधे पर हाथकर रखकर मार्ग में मत चलो।

११. जिस ओर से चलना उचित हो किनारे से चलो। मार्ग में खड़े होकर बातें मत करो। बात करना हो तो एक किनारे हो जाओ।

१२. रास्ता चलते इधर-उधर मत देखो। झूमते या अकड़ते मत चलो। अकारण मत दौड़ो। सवारी पर हो तो दूसरी सवारी से होड़ मत करो।

ज. तीर्थ स्थल सभा स्थल में

१. कहीं जल में कुल्ला मत करो और न थूको। अलग पानी लेकर जलाशय से कुछ दूर शौच के हाथ धोओ तथा कुल्ला करो और मल मूत्र पर्याप्त दूरी पर त्यागो।

२. तीर्थ स्थान के स्थान पर साबुन मत लगाओ। वहाँ किसी प्रकार की गंदगी मत करो। नदी के किनारे टट्टी-पेशाब मत करो।

३. देव मंदिर में देवता के सामने पैर फैलाकर या पैर पर पैर चढ़ाकर मत बैठो और न ही वहाँ सोओ। वहाँ शोरगुल भी मत करो।

४. सभा में या कथा में परस्पर बात चीत मत करो। वहाँ कोई पुस्तक या अखबार भी मत पढ़ो। जो कुछ हो रहा हो उसे शान्ति से सुनो।

५. किसी दूसरे के सामने या सार्वजनिक स्थल पर खांसना, छींकना या जम्हाई आदि लेना पड़ जाये तो मुख के आगे कोई वस्त्र रख लो। बार-बार छींक या खाँसी आती हो या अपानवायु छोड़ना हो तो वहाँ से उठकर अलग चले जाना चाहिए।

६. कोई दूसरा अपानवायु छोड़े खांसे या छींके तो शान्त रहो। हँसो मत और न घृणा प्रकट करो।

७. यदि तुम पीछे पहुँचे हो तो भीड़ में घुसकर आगे बैठने का प्रयत्न मत करो। पीछे बैठो। यदि तुम आगे या बीच में बैठे हो तो सभा समाप्त होने तक बैठे रहो। बीच में मत उठो। बहुत अधिक आवश्यकता होने पर इस प्रकार धीरे से उठो कि किसी को बाधा न पड़े।

८. सभा स्थल में या कथा में नींद आने लगे तो वहाँ झोंके मत लो। धीरे से उठकर पीछे चले जाओ और खड़े रहो।

९. सभा स्थल में, कथा में बीच में बोलो मत कुछ पूछना, कहना हो तो लिखकर प्रबन्धकों को दे दो। क्रोध या उत्साह आने पर भी शान्त रहो।

१०. किसी सभा स्थल में किसी की कहीं टोपी, रूमाल आदि रखी हो तो उसे हटाकर वहाँ मत बैठो।

११. सभा स्थल के प्रबंधकों के आदेश एवं वहाँ के नियमों का पालन करो।

१२. किसी से मिलने या किसी सार्वजनिक स्थान पर प्याज, लहसुन अथवा कोई ऐसी वस्तु खाकर मत जाओ जिससे तुम्हारे मुख से गंध आवे। ऐसा कोई पदार्थ खाया हो तो इलायची, सौंफ आदि खाकर जाना चाहिए।

१३. सभा में जूते बीच में न खोलकर एक ओर किनारे पर खोलो। नये जूते हों तो एक-एक जूता अलग-अलग छिपाकर रख दो।

झ. विशेष सावधानी

१. चुंगी, टैक्स, किराया आदि तुरंत दे दो। इनको चुराने का प्रयत्न कभी मत करो।

२. किसी कुली, मजदूर, ताँगे वाले से किराये के लिए झगड़ो मत। पहले तय करके काम कराओ। इसी प्रकार शाक, फल आदि बेचने वालों से बहुत झिकझिक मत करो।

३. किसी से कुछ उधार लो तो ठीक समय पर उसे स्वयं दे दो। मकान का किराया आदि भी समय पर देना चाहिए।

४. यदि कोई कहीं लौंग, इलायची आदि भेंट करे तो उसमें से एक दो ही उठाना चाहिए।

५. वस्तुओं को धरने उठाने में बहुत आवाज न हो ऐसा ध्यान रखना चाहिए। द्वार भी धीरे से खोलना बंद करना चाहिए। दरवाजा खोलो तब उसकी अटकनें लगाना व बंद करो तब चिटकनी लगाना मत भूलो। सब वस्तुएँ ध्यान से साथ अपने-अपने ठिकाने पर ही रखो, जिससे जरूरत होने पर ढूंढना न पड़े।

६. कोई पुस्तक या समाचार पत्र पढ़ना हो तो पीछे से या बगल से झुककर मत पढ़ो। वह पढ़ चुके तब नम्रता से माँग लो।

७. कोई तुम्हारा समाचार पत्र पढ़ना चाहे तो उसे पहले पढ़ लेने दो।

८. जहाँ कई व्यक्ति पढ़ने में लगे हों, वहाँ बातें मत करो, जोर से मत पढ़ो और न कोई खटपट का शब्द करो।

९. जहाँ तक बने किसी से माँगकर कोई चीज मत लाओ, जरूरत हो तभी लाओ व उसे सुरक्षित रखो और अपना काम हो जाने पर तुरंत लौटा दो। बर्तन आदि हो तो भली भाँति मांजकर तथा कपड़ा, चादर आदि हो तो धुलवाकर वापस करो।

१०. किसी भी कार्य को हाथ में लो तो उसे पूर्णता तक अवश्य पहुँचाओ, बीच में/ अधूरा मत छोड़ो।

अ. बात करने की कला

अपनी बात को ठीक से बोल पाना भी एक कला है। बातचीत में जरूरी नहीं है कि बहुत ज्यादा बोला जाय। साधारण बात भी नपे-तुले शब्दों में की जाए तो उसका गहरा असर होता है।

अपनी बात को नम्रता पूर्वक, किन्तु स्पष्ट व निर्भयता वे बोलने का अभ्यास करें। जहाँ बोलने की आवश्यकता हो वहाँ अनावश्यक चुप्पी न साधें। स्वयं को हीन न समझें। धीरे-धीरे, गम्भीरता पूर्वक, मुस्कराते हुए, स्पष्ट आवाज में, सद्भावना के साथ बात करें। मौन का अर्थ केवल चुप रहना नहीं वरन उत्तम् बातें करना भी है। बातचीत की कला के कुछ बिन्दु नीचे दिये गये हैं इन्हें व्यवहार में लाने का प्रयास करें।

१. बेझिझक एवं निर्भय होकर अपनी बात को स्पष्ट रूप से बोलें।

२. भाषा में मधुरता, शालीनता व आपसी सद्भावना बनी रहे।

३. दूसरों की बात को भी ध्यान से व पूरी तरह से सुनें, सोचें-विचारें और फिर उत्तर दें। धैर्यपूर्वक किसी को सुनना एक बहुत बड़ा सद्गुण है। बातचीत में अधिक सुनने व कम बोलने के इस सद्गुण का विकास करें। सामने देख कर बात करें। बात करते समय संकोच न रखें, न ही डरें।

४. बोलते समय सामने वाले की रूचि का भी ध्यान रखें। सोच-समझ कर, संतुलित रूप से अपनी बात रखें। बात करते हुए अपने हावभाव व शब्दों पर विशेष ध्यान देते हुए बात करें।

५. बातचीत में हार्दिक सद्भाव व आत्मीयता का भाव बना रहे। हँसी-मज़ाक में भी शालीनता बनाए रखें।

६. उपयुक्त अवसर देखकर ही बोलें। कम बोलें। धीरे बोलें। अपनी बात को संक्षिप्त और अर्थपूर्ण शब्दों में बताएँ। वाक्यों और शब्दों का सही उच्चारण करें।

७. किसी बात की जानकारी न होने पर धैयपूर्वक, प्रश्न पूछकर अपना ज्ञान बढ़ाएँ।

८. सामने वाला बात में रस न ले रहा हो तो बात का विषय बदल देना अच्छा है।

९. पीठ पीछे किसी की निन्दा मत करो और न सुनो। किसी पर व्यंग मत करो।

१०. केवल कथनी द्वारा ही नहीं वरन करनी द्वारा भी अपनी बात को सिद्ध करें।

११. उचित मार्गदर्शन के लिए स्वयं को उस स्थिति में रखकर सोचें। इससे सही निष्कर्ष पर पहुँच सकेंगे। किसी की गलत बात को सुनकर उसे तुरंत ही अपमानित न कर, उस समय मौन रहें। किसी उचित समय पर उसे अलग से नम्रतापूर्वक समझाएं।

१२. दो लोग बात कर रहे हों तो बीच में न बोलें। बिन मांगी सलाह न दें। समूह में बात हो रही हो तो स्वीकृति लेकर अपनी बात संक्षिप्त में कहना शालीनता है।
१३.प्रिय मित्र, भ्राता श्री, आदरणीया बहनजी, प्यारे भाई, पूज्य दादाजी, श्रद्धेय पिताश्री, वन्दनीया माता जी आदि संबोधनों से अपनी बात को प्रारंभ करें।
१४. मीटिंग के बीच से आवश्यक कार्य से बाहर जाना हो तो नम्रता पूर्वक इजाजत लेकर जाएँ। बहस में भी शांत स्वर में बोलो। चिल्लाने मत लगो। दूर बैठे व्यक्ति के पास जाकर बात करो, चिल्लाओ मत।
१५. बात करते समय किसी के पास एकदम सटो मत और न उसके मुख के पास मुख ले जाओ। दो व्यक्ति बात करते हों तो बीच में मत बोलो।
१६. किसी की ओर अंगुली उठाकर मत दिखाओ। किसी का नाम पूछना हो तो आपका शुभ नाम क्या है। इस प्रकार पूछो किसी का परिचय पूछना हो तो, आपका परिचय? कहकर पूछो। किसी को यह मत कहो कि आप भूल करते हैं। कहो कि आपकी बात मैं ठीक नहीं समझ सका।
१७. जहाँ कई व्यक्ति हो वहाँ काना फूसी मत करो। किसी सांकेतिक या ऐसी भाषा में भी मत बोलो जो आपके बोलचाल की सामान्य भाषा नहीं है और जिसे वे लोग नहीं समझते। रोगी के पास तो एकदम काना फूँसी मत करो, चाहे आपकी बात का रोगी से कोई संबंध हो या न हो।
१८. जो है सो आदि आवृत्ति वाक्य का स्वभाव मत डालो । बिना पूछे राय मत दो।
१९. बहुत से शब्दों का सीधा प्रयोग भद्दा माना जाता है। मूत्र त्याग के लिए लघुशंका, मल त्याग के लिए दीर्घशंका, मृत्यु के लिए परलोकगमन आदि शब्दों का प्रयोग करना चाहिए।

ब्रिटेन के प्रसिद्ध साहित्यकार 'जार्ज बर्नार्ड शा' शाकाहारी थे। एक बार वे एक ऐसे भोज में शामिल हुए जिसमें सलाद के अंलावा कुछ भी शाकाहारी नहीं था। वे केवल सलाद ही खाने लगे। यह देखकर उनके पास बैठे सज्जन बोले 'मिस्टर शा, इतनी स्वादिष्ट चीजों के होते हुए भी आप यह क्या खा रहे हैं?'

जार्ज बर्नार्ड शा ने बड़ी विनम्रता से उत्तर दिया, 'मेरा पेट कब्रिस्तान नहीं है महोदय! इसमें केवल साग-सब्जियों के लिये जगह है, मुर्दों के लिये नहीं।'

२. पढ़ाई में ढिलाई के कुछ कारणों एवं उनके निवारण पर चिन्तन

१. विषय कठिन लगना:- अधिक परिश्रम करें। अपने प्रयत्नों को आवश्यकता अनुसार बढ़ायें। थोड़ा विश्राम लेकर फिर आगे बढ़ें। बीच में थोड़ा मनोविनोद कर लें।

२. प्रारंभिक शिक्षा अपूर्ण अथवा दोषयुक्त होना, नींव कच्ची होना:- प्रारम्भिक शिक्षा कमजोर होने पर पढ़ा हुआ समझ में नहीं आना, उस विषय में अरूचि के कारण याद नहीं रहना आदि स्वाभाविक है। ऐसी अवस्था में उन्नति के लिए आवश्यक है कि पहले की कक्षाओं की उस विषय की पुस्तकों को भली प्रकार से दोहराया जाए। भाषा में शब्द भण्डार व व्याकरण का ज्ञान बढ़ाया जाए। गणित व विज्ञान के सिद्धान्त समझे जाएं गणित हेतु पहाड़ों (Tables) को ३० की संख्या तक कण्ठस्थ किया जाए। दुबारा मजबूत किया जाए, अध्ययन का विषय कुछ भी हो, समय -समय पर दोहरा लेने से निपुणता में वृद्धि हो जाती है तथा शिक्षण काल की एक गम्भीर कठिनाई दूर करने में मदद मिलती है।

३. पढ़ाई की गलत रीति का अवलम्बन:- शुरू की कक्षाओं में या प्रारम्भिक पढ़ाई में गलत तरीके अपनाने पर वे विकास की सीमा बाँध देते हैं। ऐसे में पढ़ने की विधियों में परिवर्तन करें। जैसे किसी विषय में यदि केवल महत्तवपूर्ण अंश पढ़ने का अभ्यास हो तो ऐसे में विषय का ज्ञान अधूरा रह जाता है। अत: संपूर्ण विषय पढ़ें। नोट बनाना प्रारम्भ करें। नोट लेने की अपनी विधि में परिवर्तन करें। आप जो भी परिवर्तन या विकल्प सोच सकते हों, उन्हें बारी-बारी आजमा कर देखें।

समझ-बूझकर योजना बनाएँ व प्रयोग की तैयारी करें। फिर पढ़ाई में बिना किसी तैयारी के कूद पड़ने का प्रयोग करें, बड़ी तत्परता से पढ़ें... फिर उपेक्षा से पढ़ें... रात में देर तक पढ़ाई करें...सबेरे जल्दी पढ़ें, हर अवस्था में परिणामों को देखें तथा अपने लिए सर्वोत्तम विधि को खोज लें।

४. रूचि का कम होना :- पढ़ाई मन लगाकर न करना, सीखने की इच्छा-शक्ति दुर्बल हो जाना, प्रयास कमजोर पड़ जाना तरक्की की गति पहले जैसी न रहना आदि। इसके लिए चाहे वास्तविक शौक न भी हो तो भी कार्य में मन लगाएं। यह बनावटी रूचि यथासमय वास्तविक रूचि में बदल जाती है। अपने

उत्साह की अग्नि को तेजी से जलता रखें, अपनी पढ़ाई में आनन्द लेने का अभ्यास करें। इस पढ़ाई के (स्वयं के लिए) महत्व की कल्पना करें।

५. साधारणता को स्वीकार कर लेना :- जो पढ़ाई हो रही है सो ठीक है...पास तो हो ही जाएंगे आदि ऐसे में आगे उन्नति करने के लिए आत्म-प्रतियोगिता एक बड़ी प्रभावकारी प्रेरणा है। आत्म-प्रतियोगिता अर्थात अपने ही पिछले दिन या पिछले सप्ताह में की पढ़ाई से उन्नति करना। प्रगति का ग्राफ बनाएं। किसी आदर्श विद्यार्थी से भी ईर्ष्या रहित प्रतियोगिता कर सकते हैं। वैसे दूसरों के साथ प्रतियोगिता करने के बजाए आत्म-प्रतियोगिता अच्छी है, क्योंकि इससे कमजोर व बुद्धिमान दोनों को स्फूर्ति मिलती है।

६. थकानः- मानसिक व शारीरिक थकान के कारण भी पढ़ाई में शिथिलता आती है। वास्तव में शरीर के अंग प्रायः १०० वर्ष या उससे अधिक समय सक्षमता-पूर्वक बिना रूके निरंतर कार्य करते हैं। बिना थके व बिना रूके। जैसे हृदय, गुर्दे, फेफड़े आदि। ऐसे ही मस्तिष्क भी निरंतर कार्य कर सकता है। वास्तव में थकान का विचार ही थकान लाता है, इस बात पर चिन्तन एवं प्रयोग करें।

७. थकान का कारणः- मानिसक थकान का मुख्य कारण है- जी ऊबना। इससे कार्यक्षमता, पढ़ाई की गति कम हो जाती है, ऐसे में विषय बदल कर पढ़े, खुली हवा में थोड़ी कसरत कर थकावट की भावना को दूर करें। रूचिकर विषय को प्रबल उत्साह या शौक से पढ़ना शुरू करने पर थकान एक जादू समान उड़ जाएगी।

८. अगर मन को रूचिपूर्वक पढ़ाई में लगाए रखा जाए। पढ़ते समय शरीर को किसी प्रकार का परिश्रम या असुविधा न हो तो न थकावट होगी, ना ही पढ़ने की क्षमता में कोई कमी आयेगी।

९. उचित मात्रा में प्रकाश हो, प्रकाश की दिशा बांये कंधे के ऊपर से हो, कमरा हवादार हो, शांत हो, कुर्सी-टेबल ठीक ऊँचाई व आकार के हों। पढ़ते समय शरीर के अंग ढीले रहें, उन पर कम से कम खिंचाव पड़े। इससे थकान को दूर रखने में मदद मिलेगी।

१०. उत्तम रीति से संचालित शिक्षा जिसमें सीखने का संकल्प किसी प्रबल प्रेरणा से हो तो वह थकावट दूर रखने में बहुत प्रभावशाली होती है। प्रबल विचारों में थकान पर विजय पाने की बड़ी शक्ति भरी रहती है। जैसे देश का गौरव बढ़ाने की भावना, माँ-बाप का नाम रोशन करने की भावना।

११. मेरिट सूची में आने की महत्वाकांक्षा, पढ़ाई में उत्कृष्टता पाने की अभिलाषा, किसी को प्रसन्न करने की इच्छा, कर्त्तव्य पालन का संकल्प, लोक सेवा की कामना मानिसक व शारीरिक दक्षता बढ़ाने वाले हैं। एक प्रबल विचार, चाहे वह कुछ भी हो, मनुष्य को असाधारण काम करने के लिए प्रेरित करता है। किसी उच्च आदर्श या भावना से प्रेरित होकर मनुष्य दुःख और कष्ट भूल जाता है और कठिनाइयों का सामना करते हुए प्रयत्नशील रहता है, जब तक कि वह अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं कर लेता। जैसे जन्मभूमि की आजादी, सत्य के मार्ग पर चलने का संकल्प।

१२. थकान व शिथिलता के बावजूद यदि दृढ़तापूर्वक प्रयत्न जारी रखा जाए तो शक्ति भी पुनः लौट आती है। अरूचि और थकावट की अवहेलना कर काम में डटे रहा जाए तो हम मानसिक शक्ति के महान् स्त्रोतों को पा सकते हैं। आशातीत, उच्चतम और चमत्कारपूर्ण ढंग से कार्यों को पूर्ण कर सकते हैं।

१३. क्रोध या आवेश में व्यक्ति असाधारण शक्ति का प्रदर्शन करता है। एक गाय ममतावश बछड़े की रक्षा के लिए शेर से भी भिड़ जाती है। माता अपनी संतान को खतरे में देख शेरनी के समान हो जाती है। किन्हीं संतो, विचारकों की प्रेरणा से व्यक्ति बड़े विलक्षण काम कर डालते हैं। अतः सच्चाई तो यह है कि हममें से अधिकांश लोग अपनी दक्षता की चरम सीमा तक कभी नहीं पहुँचते। अलबेलेपन में, निचले स्तर पर ही, अज्ञात जीवन जीकर, इस संसार से विदा हो जाते हैं।

१४. सभी के भीतर गुप्त शक्तियों के भण्डार दबे रहते हैं। इन खजानों को पाने का रहस्य है, कि ठहराव काल में भी शक्तियों की पुनरावृत्ति अपने कार्य को रोके नहीं, जब तक की शक्ति की दूसरी पर्त ना खुल जाए। ऐसे समय में शवासन द्वारा शरीर को तथा ध्यान द्वारा मन को थोड़ी देर विश्राम देना अत्यंत उपयोगी है। लगातर कठिन परिश्रम से ही यह योग्यता प्राप्त होती है कि आप अपनी गुप्त शक्तियों का कठिन कार्य के समय इच्छानुसार आह्वान कर सकें।

अ. पढ़ाई में अच्छे अंक कैसे लाएँ ?

इसके लिए एक कार्यशाला सम्पन्न की गई। कार्यशाला में विद्यार्थियों के कुल बारह ग्रुप बनाये गये थे। जिनमें निम्न विषयों पर विचार निष्कर्ष निकाले गये :-

१.पढ़ाई में अच्छे अंक पाने के लिए आप क्या-क्या करेंगे ?

२. अगर आपको कुछ दिनों के लिए आपकी कक्षा में लीडर का रोल करने के लिए कहा जाय तो आप क्या-क्या करेंगे ?

३. एक आदर्श विद्यार्थी एवं आदर्श नागरिक के रूप में आपके क्या कर्त्तव्य है?
४. घर में अपनी माँ एवं पिता जी की आप क्या-क्या मदद कर सकते हैं?
५. आपके आदर्श महापुरुष कौन-कौन हैं एवं उनकी किन विशेषताओं /प्रेरणओं से आप प्रभावित हुए?
६. व्यवहार कला (Art of Behaviour) नीचे "पढ़ाई में अच्छे अंक पाने के लिए" विषय पर जो विचार-विमर्श हुआ उनके निष्कर्ष दिये जा रहे हैं।

ब. नियमित पढ़ाई के दिनों में

१. स्कूल में प्रतिदिन नियमपूर्वक उपस्थिति देंगे। प्रयास करेंगे कि कभी अनुपस्थित न हों।
२. दृढ़ संकल्प करेंगे कि परीक्षा में इतने प्रतिशत अंक लाने ही हैं, फिर उस अनुसार तैयारी में जुट जायेंगे।
३. अपनी पढ़ाई को योजनाबद्ध तथा व्यवस्थित बना कर करेंगे। समय का एक दिनचर्या चार्ट बनायेंगे उसका दृढ़ता पूर्वक पालन करेंगे।
४. स्मरणशक्ति बढ़ाने के विभिन्न तरीकों को सीखकर उनका अपनी पढ़ाई में प्रयोग करेंगे। पूरा मन लगाकर पढ़ाई का अभ्यास करेंगे।
५. पढ़ाई शुरु करने से पहले मन ही मन ईश्वर का स्मरण करेंगे (तमसो मा ज्योतिर्गमय..)
६. क्लास में शिक्षक जो पढ़ाते हैं उसे ध्यान पूर्वक सुनेंगे तथा नोट्स बनायेंगे। शिक्षक जो पढ़ाने वाले होंगे उसे पहले से घर पर पढ़ लेंगे।
७. किसी प्रश्न का हल न आने पर अथवा कोई बात समझ में न आने पर अपने शिक्षक, माता-पिता अथवा योग्य मित्रों की मदद लेंगे।
८. हम पढ़ाई में रुचि पैदा करेंगे। समझते-हुए पढ़ेंगे। रटेंगे नहीं लेकिन मूल बातों को स्पष्ट करेंगे। अवसर आने पर उसका अपने जीवन में प्रयोग भी करते रहेंगे।
९. पूरे साल नियमित पढ़ाई करेंगे ताकि परीक्षा के पहले ज्यादा पढ़ाई करने का तनाव न रहे। केवल दोहराने व अभ्यास की जरूरत रहे।
१०. टी.वी., रेडियो, टेपरिकार्डर आदि देखते-सुनते, लेटे-लेटे या आराम कुर्सी पर बैठ कर पढ़ाई नहीं करेंगे। आलस्य में अपना समय बर्बाद नहीं करेंगे।
११. जब मित्रों से मिलना हो तब उनके साथ पढ़ाई के विषय में चर्चा करेंगे।
१२. हम अपने लिखने की गति बढ़ायेंगे ताकि प्रश्न पत्र समय से पूरा कर सकें। समय कम होने पर चित्रों को मुक्तहस्त से बनायेंगे। इसका पहले से अभ्यास करेंगे।

१३. अपनी हस्तलिपि को गति में लिखते हुए भी सुंदर बनाने का अभ्यास करेंगे ताकि पेपर्स अधूरे न छूट जायें।

१४. पढ़ने-लिखने में एकाग्रता बढ़ाने के लिए प्रतिदिन ध्यान, प्राणायाम व योग साधना का अभ्यास करेंगे।

१५. शरीर को खान-पान की शुद्धि तथा व्यायाम आदि द्वारा स्वस्थ रखेंगे ताकि बीमारी आदि से शारीरिक, मानसिक व पढ़ाई का नुक्सान न उठाना पड़े।

स. परीक्षा के दिनों में

१. सकारात्मक चिंतन करेंगे कि हम अपने लक्ष्य को प्राप्त करके ही रहेंगे।

२. हर विषय के लिए संक्षिप्त नोट्स की एक छोटी पॉकेट डायरी बनायेंगे। उनमें महत्वपूर्ण बिन्दु लिखेंगे। जब-जब भी समय मिलेगा उसे देखकर मन ही मन विस्तार से पढ़ाई का मनन करेंगे।

३. पिछली बार जिस भी विषय में अंक कम आये होंगे, उस पर अधिक मेहनत करेंगे।

४. पहले के पेपर्स को परीक्षा हाल की तरह अभ्यास के रूप में हल करेंगे।

५. अगर कोई पेपर अच्छा न गया हो तो उस पर अनावश्यक चिंता करने के बजाए अगले पेपर्स की और अच्छी तरह तैयारी करने के लिए संकल्प पूर्वक जुट जायेंगे।

६. प्रवेश पत्र पर लिखें निर्देशों को पहले से ही अच्छी तरह पढ़ लेंगे।

द. परीक्षा हॉल में

१. परीक्षा हॉल में हमारे केवल दो साथी हैं (१) हमारी वर्ष भर की नियमित पढ़ाई (२) हमारा आत्म विश्वास। यह दोनों साथ होने पर भय की कोई बात नहीं।

२. परीक्षा देने जाते समय आत्म विश्वास पूर्वक सोचेंगे कि मैंन पढ़ा है उसी में से पेपर आने वाला है।

३. पेपर लिखने के पहले हम दो क्षण ईश्वर का स्मरण करेंगे फिर बिना घबराये पेपर को हल करना प्रारम्भ करेंगे।

५. प्रश्नों को ध्यान पूर्वक पढ़कर जो पूछा गया है उसी का जवाब देंगे। अनावश्यक नहीं।

६. प्रश्न पत्र डरते हुए हल नहीं करेंगे बल्कि आत्म विश्वास के साथ करेंगे। अपने आत्म बल व इच्छा शक्ति को बढ़ायेंगे।

७. जो प्रश्न अच्छी तरह से आते होंगे उन्हें पहले हल करेंगे, शेष उनके बाद। आवश्यकता अनुसार इनके लिए जगह खाली छोड़कर आगे के सहज प्रश्न पहले हल करेंगे।

८. परीक्षा हॉल में इधर उधर देखकर, अन्य अनावश्यक कार्यों में समय व्यर्थ न गंवायेंगे। अनुचित तरीकों से सफलता प्राप्त करने के बजाय अपने परिश्रम व आत्मबल द्वारा प्राप्त कम अंकों पर ही संतोष करेंगे। आगे और अधिक मेहनत कर उसकी भरपाई का प्रयास करेंगे।

९. परीक्षा देने के बाद पेपर के बारे में अनावश्यक बातचीत से आत्मविश्वास कम होता है। अतः सीधे घर जाकर अगले पेपर की तैयारी में मन लगायेंगे।

३. विद्यार्थी जीवन की समस्यायें व उनका निवारण

आप क्या करेंगे... ?

१. परीक्षा में नंबर कम आने पर ?

उत्तर- आगे से पूरी मेहनत से पढ़ाई करने का संकल्प लेंगे। किसी अन्य को दोष न देंगे। अपने में रही कमियों पर सोचेंगे- उन्हें दूर करने का प्रयास करेंगे। अपने में परिवर्तन करने के संकल्प को दृढ़ किन्तु नम्र शब्दों में माँ-पिताजी के सामने व्यक्त करेंगे।

२. कक्षा में कुछ बच्चों का झगड़ा होने पर ?

उत्तर- उन्हें अलग करेंगे। झगड़ा प्यार से सुलझाने का प्रयास करेंगे। शिक्षक को सूचित करेंगे।

३. किसी के द्वार बिना कारण अपशब्द कहने पर ?

उत्तर- एक हल्की सी मुस्कान के साथ उसकी उपेक्षा करेंगे। उसका क्रोध शांत होने पर उसे अकेले में प्यार से समझायेंगे .. अगर स्वयं में कोई कमी होगी तो उसे दूर करेंगे। मौन रहेंगे।

४. परीक्षा भवन में किसी बच्चे को नकल करते देखने पर ?

उत्तर - उस पर दया आयेगी। भविष्य के लिए हम अपनी पढ़ाई को और भीं सुव्यवस्थित एवं नियमित करेंगे ताकि स्वयं के लिए ऐसी स्थिति न आये। परीक्षा भवन से बाहर आने पर श्रम एवं नैतिकता के महत्व पर उसे शुभकामना के दो शब्द कहेंगे।

५. आपकी पुस्तक आपका मित्र फटी हालत में लौटता है ?

उत्तर - पुस्तक को वापस लेते हुए गंभीर व मौन रहेंगे। उचित समय पर उसे शिष्टाचार के दो शब्द प्यार से व नम्रतापूर्वक बतायेंग। भविष्य में उसे कुछं देने से पहले सावधान करेंगे।

६. किसी गलती पर घर या स्कूल में डाँट पड़ने पर?

उत्तर- गलती के लिए तुरंत नम्रतापूर्वक क्षमा मांगेंगे। भविष्य में गलती न करने का उन्हें अपना संकल्प बतायेंगे। मन ही मन अपनी गलती पर पश्चात् करेंगे।

७. होमवर्क समय पर पूरा न होने पर कक्षा में?

उत्तर- वास्तविक कारण बताकर शिक्षक से क्षमा माँगेंगे। अगले दिन पूरा कर लाने का संकल्प बतायेंगे। खेलकूद-टी.वी. या नींद में कमी करके भी होमवर्क समय पर पूरा कर लेंगे।

८. स्कूल में आपका बैग या कुछ सामान चोरी हो जाने पर?

उत्तर- कक्षा में अच्छी तरह चैक कर लेंगे। मित्रों को पूछेंगे। शिक्षक को सूचित करेंगे। नोटिस बोर्ड पर सूचित करेंगे। खोया-पाया काउण्टर पर तलाश करेंगे।

९. कक्षा में कुछ बच्चों द्वारा सबके साथ अक्सर दुर्व्यवहार करते रहने पर?

उत्तर- संभव हुआ तो उन्हें समझायेंगे । गंभीर परिणामों की चेतावनी देंगे। शिक्षक को सूचित करेंगे। माता-पिता को सूचित करेंगे।

१०. परीक्षा के दिन घर में मेहमान आ जाने पर?

उत्तर- हम उनका खुशी से स्वागत करेंगे। फिर उन्हें बड़ों के भरोसे छोड़ अपनी परीक्षा की तैयारी करेंगे। संभव हुआ तो पढ़ाई के लिए अपने मित्र के पास चले जायेंगे।

११. माँ के द्वारा दूसरों के समाने डाँटने पर?

उत्तर- गंभीर व मौन रहते हुए अपने आवश्यक कार्य में लग जायेंगे। माँ से अकेले में अपनी नाराजगी व्यक्त करेंगे। नम्र किन्तु दृढ़ शब्दों में आगे से ऐसा न करने का निवेदन करेंगे।

१२. अपने मित्र के साथ झगड़ा हो जाने पर?

उत्तर - स्थिति शांत हो जाने के बाद उचित समय पर मित्र से बात करने के लिए कुछ समय माँगेंगे। गलतफहमी को दूर करने की कोशिश करेंगे। स्वयं की गलती को दूरे करेंगे। कुछ सहन करते हुए टकराव का रास्ता अपनाने के बजाय मित्रता को निभाने का प्रया करेंगे।

१३. टी.वी. देखते समय चैनल के बारे में छोटों/बड़ों के साथ आपका मतभेद होने पर?

उत्तर- बड़ों का सम्मान रखते हुए/छोटों से स्नेह करते हुए हम त्याग करेंगे। विचार करेंगे कि टी.वी. भूत ने हमारे समय, पढ़ाई, स्वास्थ्य, धन आदि का कितना नुकसान किया है। चरित्र एवं मन को कितना दूषित किया है। इसके कारण हम

एक कमरे में बैठे हुए भी एक दूसरे के दिलों से कितने दूर हो गये हैं अतः इसको तो दूर से सलाम करने में ही भलाई है।

१४. आपके मित्र के मैरिट में प्रथम स्थान लाने पर?

उत्तर- उसे दिल से बधाई देंगे। स्वयं पर उसका मित्र होने का गर्व अनुभव करेंगे। उससे प्रेरणा लेकर स्वयं भी ऊँचा उठने का प्रयास करेंगे।

१५. जब कभी आपको ऐसा लगे कि आपको अंक कम दिये गये हैं या शिक्षक ने किसी बात पर आपके साथ पक्षपात किया है?

उत्तर- हम शिक्षक का आदर्श स्वरूप ही सामने रखेंगे। उनके हर निर्णय में अपना कल्याण समझेंगे। अच्छे अंक लाने के लिए और मेहनत करेंगे। आदर्श विद्यार्थी बनने में स्वयं में कोई कसर नहीं रखेंगे। शिकायतें तो वे करते हैं जो मेहनत से जी चुराते हैं।

१६. आप अपने पढ़ने के स्थान अथवा पढ़ाई का कमरा व आसपास का स्थान कैसा रखना चाहेंगे?

उत्तर- साफ-सुथरा, व्यवस्थित। कोई भी वस्तु या पुस्तक अस्त-व्यस्त न पड़ी होकर अपने स्थान पर हो। पुस्तकों पर कव्हर चढ़ें हों। पन्ने निकले हुए या फटे-टूटे-मुड़े हुए न हों। कमरे की सफाई व व्यवस्था आदि हम स्वयं करेंगे।

१७. स्वयं के बीमार होने पर?

उत्तर- बीमारी होने के कारण पर चिंतन करें। कारणों को दूर करेंगे। उपवास व आराम द्वारा जल्दी स्वस्थ होने का प्रयास करेंगे। यथासम्भव दूसरों पर बोझ नहीं बनेंगे। अनावश्यक व्यक्तिगत सेवायें दूसरों से नहीं लेंगे। दवाओं से बचेंगे। पवित्र चिंतन एवं जीवन में परिवर्तन द्वारा स्वस्थ रहने की प्राकृतिक कला सीखेंगे।

१८. माँ-पिताजी से कोई वस्तु बार-बार माँगने पर भी न मिलने पर?

उत्तर- वस्तु की उपयोगिता पर फिर विचार करेंगे। घर की आर्थिक स्थिति को समझेंगे। अपनी माँग पर ज्यादा ज़ोर नहीं देंगे। विचार करेंगे कि बच्चों के लिए माता-पिता के समान कल्याणकारी संसार में और कोई नहीं हो सकता। अधिकार के साथ-साथ अपने कर्त्तव्यों का भी ध्यान रखेंगे।

१९. आपकी पसंद का भोजन न बनने पर?

उत्तर- भोजन को प्रभु द्वारा दिया हुआ प्रसाद मानकर उसे स्वीकार करेंगे। प्रसन्न मन से प्रभु की याद में भोजन ग्रहण करेंगे। कुढ़ते हुए, झल्लाते हुए, शिकायत करते हुए, क्रोध करते हुए भोजन नहीं करेंगे बल्कि प्रभु को मन ही मन धन्यवाद देते हुए भोजन करेंगे। रामजी ने माँ शबरी के बेर, कृष्ण जी ने मित्र सुदामा के पोहे

और विदुर जी के घर केले के छिलके, मीरा ने अपने गिरधर की याद में ज़हर का प्याला कितने प्रेम व भावना से ग्रहण किये थे। मैं घर में स्नेह-प्यार से बने भोजन को नहीं ठुकराऊँगा/ गी। ऐसी भावना कर शांति से भोजन करेंगे।

२०. आप किसी मित्र की मदद करते रहे हों, लेकिन समय पर वह आपकी मदद न करे?

उत्तर- इससे हमें किसी के भरोसे न रहने का सबक मिलेगा। हम किसी की मदद उससे वापसी प्राप्ति की आशा में नहीं करेंगे। कर्म करेंगे लेकिन उसके फल की प्राप्ति में आसक्त नहीं होंगे। उस मित्र से व्यवहार व मित्रता पहले की ही तरह निभाते रहने का प्रयत्न करेंगे।

२१. सड़क पर कोई गाड़ी आप पर कीचड़ उछालती हुई गुजर जाये?

उत्तर- गीता के महावाक्यों को याद करेंगे। जो हुआ, अच्छा हुआ, जो हो रहा है- अच्छा हो रहा है। हम उसे दिल से क्षमा कर देंगे। हर घटना में कल्याण मानते हुए अगले क्षणों का सदुपयोग करेंगे।

२२. आप अपने जन्मदिन पर कैसा उपहार पसंद करेंगे?

उत्तर- भारतीय संस्कृति उपभोग की नहीं उपयोग की स्वीकृति देती है। वस्तुओं का संग्रह करना उचित नहीं। संग्रह द्वारा घर को कबाड़ीखाना बना देना कहाँ तक ठीक है? अत: हम अपने जन्मदिन पर बड़ों का आशीर्वाद, मित्रों की शुभकामनाएँ तथा छोटों द्वारा दुआएँ चाहेंगे कि हम परिवार, समाज व देश की उन्नति में सहयोगी बनते हुए सच्चा सुख-शांति व संतोष का जीवन जी सकें।

४. दुर्व्यसनों से हानि ही हानि

संसार के सारे धर्मों तथा धर्म प्रवक्ताओं ने हर प्रकार की नशेबाजी को अधर्म बतलाया है और उसकी निन्दा की है। वेद में नशेबाजी को महापातक बताया गया है। बौद्ध धर्म में गिनाये गये चार महापापों में से नशेबाजी भी एक है। कुरान के पारा सात, सूरत मायदारूक एक में कहा गया है- ऐ ईमान वालो, शराब तथा दूसरी नशीली चीजें हराम हैं। इन शैतानी चीजों से कतई बचे रहो। बाइबल का कथन है कि अंत में नशेबाजों की शैतान की तरह दुर्गति होगी।

विज्ञान का भी मत है कि सभी प्रकार के नशीले पदार्थ धीमे विष हैं अत: इनसे हर संभव दूर रहना चाहिये। दुर्व्यसनों से होने वाली हानियाँ:-

१. व्यसनी व्यक्ति को क्रोध अधिक आता है, दया की भावना घटती और क्रूरता

बढ़ती है। उन्हें अधीरता, कायरता, निराशा, दुश्चिंतन और दीनता की प्रवृत्तियाँ घेरे रहती हैं।

२. धूम्रपान करने वालों की पाचन क्रिया प्राय: बिगड़ जाती है और वे कब्ज एवं अपच की बिमारी के शिकार हो जाते हैं।

३. तम्बाकू के समान इन्द्रिय दौर्बल्य तथा स्मरण शक्ति की हानि, चित्त की चंचलता और मस्तिष्क के रोग पैदा करने वाली दूसरी वस्तु नहीं है।

४. तम्बाकू बुद्धि को कुण्ठित करता और उसे मंद बनाता है।

५. दुर्व्यसन अपराधी प्रवृत्ति को प्रोत्साहन देते हैं।

६. धूम्रपान करने और तम्बाकू खाने से दाँतों तथा पेट आदि के अनेक रोग पैदा होते हैं। जो अंतत: कैंसर जैसे रोगों में परिणत होते हैं।

७. तम्बाकू खाने, पीने से मुँह, गले, आवाज की नलियों, साँस की बड़ी और छोटी नलियों की श्लेष्मिक झिल्लियों में उत्तेजना आती है, अत: वहाँ कैंसर हो जाता है।

८. नोबल पुरस्कार विजेता डॉ पौलिंग का कहना है कि मनुष्य जितना समय धूम्रपान में लगाता है। उस समय से तिगुना समय उसके जीवन का कम हो जाता है।

९. प्रसिद्ध नेत्र चिकित्सक डॉ. एच. एस. ने एक पत्रिका में लिखा है कि धूम्रपान करने से आँखें कमजोर हो जाती हैं। डॉ. अलकार- तम्बाकू खाने, पीने अथवा सूँघने से आँखों की ज्योति कम हो जाती है।

१०. प्रसिद्ध चिकित्सक डॉ. फूट कहते हैं- जिसे नपुंसक बनना हो वह तम्बाकू का इस्तेमाल करें।

११. डॉ. सीली- तम्बाकू के धुएँ को फेफड़ों में भरने से वे सड़ जाते हैं और फेफड़ों की तपेदिक हो जाती है।

१२. डॉ. एलिन्स का मत है- तम्बाकू आदमी को बहरा व अंधा बना देता है। आदमी की जिव्हा इतनी खराब हो जाती है कि उसे किसी चीज के खाने में स्वाद नहीं आता और उसकी नाक किसी वस्तु की गन्ध का अनुभव नहीं करती।

गायत्रीतीर्थ-शांतिकुंज, हरिद्वार
(उत्तराखण्ड) 249411
Ph.No.Off.- 01334-260602, 260403, 261328 Fax-260866
www.awgp.org shantikunj@awgp.org